सरस्वती एव सा

राष्ट्र सेविका समिती - प्रमुख संचालिका

वं. ताई आपटे

स्मृती विशेषांक

M/S. KRIPA CHEMICALS PVT. LTD.

8, 9, 10, Royal Chambers,
Survey No. 47 Paud Road, Pune – 411038

Phone : 333245 / 331855 / 331825
Telex No. : 0145 – 7729 KRIP IN
Fax No. : 91 – –212 – 337119

श्र द्धां ज ली

(दि. १४ मार्च ९४ के श्रद्धांजली सभामें दिये हुये वक्तव्यसे)

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ प्रधान कार्यालय
डॉ. हेगडेवार भवन, महाल, नागपूर ४४० ०१२

राष्ट्र सेविका समितिकी प्रमुख संचालिका आदरणीया सरस्वती उपाख्या ताई आपटेजी के आकस्मिक निधन की वार्ता सुनकर अतीव दु:ख हुआ। संघ कार्य के निमित्त ताईजी से मेरा पुराना परिचय था। पिछले महिने में ही आप समिति कार्य के लिए नागपूर आयी तो मेरी बीमारी के कारण मुझसे मिलने आयी थी। वह हमारी आखरी भेंट सिद्ध हुई। लगता है में अपनी बडी बहन के प्यार से वंचित हुआ हूँ। केवल मै ही नहीं तो संघ परिवार के अनेक स्वयंसेवक उनकी 'ताई' यानी बडी दीदी की ममता को खो बैठे हैं। ताईजी की मृत्यू से हिंदु समाज की भारी क्षति हुई है।

ताईजी राष्ट्र सेविका समिति की संस्थापक सदस्या थी। अत: स्वर्गीय मौसीजी के पश्चात् समिति - कार्य का विस्तार भारतभर करने का दायित्व आपने कुशलतापूर्वक निभाया। आज आपकी अचानक मृत्यू के कारण राष्ट्र सेविका समिति का अपरिमित नुकसान हुआ है। संघ विचारों से संबंधित सभी संस्थाओं को मातृवत् प्रेम देनेवाली ताईजी का अभाव निरंतर महसूस होगा।

इस दु:ख की घडी में अपनी शोकसंवेदना प्रकट करते हुए ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि ताईजी की आत्मा को सद्गति तथा शांति प्रदान करे।

वंदनीय ताईजी की स्मृति सभी राष्ट्र भक्तों के लिए चिरप्रेरणास्त्रोत बनी रहेगी यह मेरा विश्वास है।

म. द. देवरस

श्र द्धां ज ली

(दिल्लीमें हुअी श्रद्धांजली सभामें दिये हुआ वक्तव्यसे)

मान्यवरा प्रमिलाताईजी और उपस्थित माता और बहनों, मैं तो आज यहाँ वं. ताईजी के चरणों में श्रद्धासुमन चढाने के लिए आया था। जिस दिन हमारी बैठक प्रारंभ हुई, उसी दिन यह दु:खद समाचार मिला कि हमारे बीचमे ताईजी नही रही। उनसे मिलने का अनेक बार सौभाग्य हुआ। सबसे पहले मैं जब पूना में गया, तो उस समय हमारे आपटेजी, से जो पूना के संघचालक थे, आजसे कुछ ५० साल पूर्व परिचय हुआ। और इस बीच वे दिल्ली भी आयी थीं, तब हमने उनकी दीर्घायु की कामना भी की थी। परंतु यद्यपि वे बडी स्वस्थ दीखती थी, अचानक वे हमारे बीच से उठ गयी।उनके कारण कार्य को बडा आधार मिला हुआ था। परंतु हम जानते है की कार्य किसी व्यक्तिविशेष पर नहीं चलते, जो सामूहिक काम करनेवाले होते है, आपसमें जो काम बाँटकर करते है, वही कार्य की सबसे बडी शक्ति होती है। मैं वं. ताईजी के परिवार और आप सबके साथ दुख में सम्मिलित हूँ। और उनके चरणों में अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ।

प. पू. रज्जूभैया,
सरसंघचालक

बिदाई पत्र

वं. ताईजी ने अपने पश्चात् समिति के कार्य के बारे में लिखा हुआ यह पत्र।

प्रिय भगिनी,
सस्नेह नमस्कार,

आप सबको ज्ञात है कि वंदनीय मौसीजी के दुःखद निधन के पश्चात् उनकी आज्ञा से और आप सभीके सहयोग से राष्ट्र सेविका समिती की प्रमुख संचालिका इस सर्वोच्च पद का दायित्व मैं अपनी अल्प मति के अनुसार निभा रही हूँ। समिती का कार्य मैं अपने अंतिम साँस तक करती रहूँगी।

किसी भी भौतिक वस्तु के जीवन की एक सीमा होती है, वैसी मेरे जीवन की भी है। यह सीमा समाप्त होने के पश्चात्, अपनी परंपरा के अनुसार यह दायित्व आप सभीकी परिचित नागपुर की कार्यकर्ता मा. उषाताई चाटी को सौपने का निर्णय मैंने लिया हैं।

मेरे पश्चात् यह दायित्व वे संभालेंगी। वं मौसीजी के आशिर्वाद से एवं आप सभीके सक्रिय सहयोग से चलनेवाला यह कार्य मा. उषाताई अधिक व्यापकता से, समर्थता से आगे बढायेगी ऐसा मेरा विश्वास हैं। आप सभीसे मैं प्रेमपूर्वक प्रार्थना करती हूँ कि जो प्रेम, सहकार्य, अपने मुझे दिया वैसा ही उनको दें।

प्रमुख संचालिका पद बहुत दायित्वपूर्ण है। मैं उसके योग्य थी ऐसा मुझे नहीं लगता, परंतु आप सभीने मुझे संभाल लिया, कार्य का विस्तार किया इसलिये मैं आप सभीकी ऋणी हूँ।

मेरे इस कार्यकाल में जाने-अनजाने किसी कार्यकर्ता को मैंने कुछ भला-बुरा कहा होगा तो आप मुझे क्षमा करें, ऐसी मेरी प्रार्थना हैं।

पुनः एक बार आप सभीको धन्यवाद। संगठन पर नितांत श्रद्धा रहने दो। अनंत के प्रवास को निकलते हुए मैं आपसे आखरी बिदाई ले रही हूँ।

आनंद। शांति। समाधान।

भवदीया
ताई आपटे

भावपुष्प यह अर्पण

राष्ट्र सेविका समितिकी वर्तमान प्रमुख संचालिका वंदनीय उषाताई चाटी
वं. ताईजीके बारेमें कहती है ।

वं ताईजी से मेरा प्रथम परिचय १९६८ में पुणे संमेलन में हुआ। मेरा निवास नागपूर में और कार्यक्षेत्र भी नागपूर, विदर्भ और पश्चात् उत्तर प्रदेश। अत: 'पुणे' से संपर्क ही कम था। परंतु वं. मौसीजी के देहांतोपरांत ताईजी से मार्गदर्शन होता रहा और परिचय दृढ बनता गया।

१९८४ में प्रतिवर्ष जैसी ही अखिल भारतीय बैठक देवी अहल्या मंदिर में हुई। आ. माई नागले भी उपस्थित थी। शायद माई और ताईजी की कुछ चर्चा हुई। सभागृह में प्रवेश करते समय ताईजी ने कहा - मैं आज एक महत्वपूर्ण निर्णय जाहीर करूँगी।

कौनसा –

'थोडी देर बाद पता चलेगा, अभी तो नहीं बताऊँगी' विषय वहीं समाप्त हुआ। बैठक प्रारंभ हुई। अनेक विषयोंपर विचारविमर्श हुआ और समापन के सत्र में उन्होंने कुछ दायित्व घोषित किये। सहप्रमुख संचालिका यह मेरा दायित्व बताया। मैं सामने ही बैठी थी। दायित्व सुनकर हक्काबक्का रह गयी। आश्चर्य भी हुआ। मुझसे भी सर्व दृष्टि से श्रेष्ठ और ज्येष्ठ बहनें होते हुए यह दायित्व मुझे क्यों सौंपा गया? यह प्रश्न अनुत्तरित ही रहा। परंतु 'आज्ञापालन' के लिये दायित्व स्वीकारना ही था।

कार्य कोई भी हो। उसमें बाधाएँ अनेक रहती ही हैं। अपना कार्य भी वैसा ही हैं। ताईजी के सामने जब कुछ समस्याएँ आती थीं तब मुझे फोन करती थी। वास्तविक यह उनका बडप्पन हैं। कभी कभी वे मुझे 'पुणे' बुला लेती। हम दोनों विचार विनिमय करती और फिर निर्णय लेती। समय समय पर वे मौलिक सूचनाएँ देती। कभी कभी कहती 'मैं यह सब तुम्हें इसलिए बता रही हूँ कि आगे चलकर कोई कठिनाई न आए' इस वाक्य का अर्थ प्रारंभ में मेरे ध्यान में नही आता। समिती के सम्मुख आनेवाले प्रश्न और उन्हें हल कैसे करना यह प्रशिक्षण ही मानो उन्होने मुझे दिया।

संगठक इस दृष्टि से उनका सभी व्यवहार अनुकरणीय था। लोकसंग्रह का सामर्थ्य विलक्षण था। एक बार पूनाके एक ज्येष्ठ संघ कार्यकर्ता श्री. किराड नागपूरमे बीमार थे। ताईजी का उनका काफी परिचय था। धंतोली में ही हम उन्हे मिलने गईं। ताईजी ने उन्हे देने हेतु मिश्री ली। मैंने कहा ताईजी उन्हे मधुमेह है ना? इस प्रश्न पर ताईजी हँसी। मिश्री से उन्हे कुछ अपाय नही होगा यह उनका दृढ विश्वास था।

राऊतवाडी की महिलाएँ ताईजी के दस दिन में मिलने के लिये आयी। रुधें गले से कह रही थी। ताईजी ने हमारा ग्राम गोद लिया और मानो जादू हुई। रास्ते बने, स्टँड बन गया, पानी का पंप आया। जरूरत की सभी चीजें उन्होंने हमें दी। हम कुछ कहें ही कि ताईजी वह पूर्ण करती थी। पूरा गाँव उनके प्रेम से बँध गया था।

सेवा कार्य का उनका निरंतर आग्रह था। परंतु यह सिर्फ बताना नही था। 'कथनी सी करे करनी। स्वयं करके कहें बात' यह उक्ति आपने सार्थ की।

ताईजी के देहांत के पश्चात् १०-१२ दिन पूना में रही। उस काल में अनेक सेविकाओं से परिचय हुआ। बातचीत हुई। ताईजी के साथ काम किया है ऐसी अनेक बहनें मिली। ताईजी उन सब के सुख और दु:ख में उनके साथ थी। उनकी कठिनाई में मदद करती थी। संकटो से जूझने के लिए उनकी मानसिकता बनाती थी। धीरज का पूल बाँधती थी। और संगठन कार्य के लिये सदैव प्रोत्साहन देती थी।

ताईजी की संगठन कुशलता और नित्य कार्य करने की पद्धति हम सबको प्रेरणा देती रहेगी। ताईजी ने दिया हुआ व्रत हमने स्वीकारा है। उसे आगे ले जाना है। मार्गक्रमण के अवसर पर उनकी जीवनगाथा दीपस्तंभ जैसी हमें मार्ग दिखाती रहेगी इसी विश्वास के साथ आगे बढेंगे।

उषा चाटी

संघ के तीनों पू. सरसंघचालकजी और वं. ताईजी

पुणे में संघकार्य का प्रारंभ हुआ और श्री. विनायकराव आपटे को नगर संघचालक पद का दायित्व दिया गया। उन दिनों में संघ कार्यालय नहीं होने के कारण आपटेजी के घर ही सभी कार्यकर्ताओं की व्यवस्था होती थी। पू. डॉक्टरजी का भी वही आना जाना रहता था। वं ताईजी अपना गृहिणी का कर्तव्य तत्परता से निभाती हुई भोजन परासते समय उनकी बातचीत सुनती थी। कई बार मन में अनेक प्रश्न उठते थे - उत्सुकता जागती थी। इतने बडे व्यक्ति को कैसे पूछें? पू. डॉक्टरजी ने मानो उनकी बात जान ली। एक दिन उन्होंने पूछा, 'सरस्वतीबाई, सुना हैं आप भी कुछ काम महिलाओंके लिए कर रही हैं? अच्छी बात है -आपको आनंद मिलता है ना?' ताईजी को समझा नहीं किन शब्दों में उत्तर दूँ - परंतु धैर्य जुटा कर कहा 'हाँ, थोडासा काम करती हूँ।' डॉक्टरजी ने कहा - ''मैं एक सुझाव दूँ? वर्धा में लक्ष्मीबाई केळकर ने ''राष्ट्र सेविका समिती' नाम से हिंदू महिला संगठन प्रारंभ किया है। आप भी आपका कार्य उन में सम्मिलित कर पाओगी?' वं. ताईजी ने तरंतु अपनी संमती दी। डॉक्टरजी को भी आश्चर्य लगा। आगे उन्होंने वं मौसीजी को श्री विनायकरावजी का पता देकर संपर्क करने को कहा, एक विश्वासपूर्ण स्थान के रूप मे।

ताईजीभी प. पू. गुरूजी को कार्य के बारे में पत्र लिखती थी। एक दिन ताईजीको लगा बहुत दिनों में गुरूजी को पत्र नहीं लिखा हैं। ताईजी व्यस्त तो रहती ही थी। उन्होंने घरेलू कुछ काम करते करते अपनी पोती को बुलाया। वह पत्र लेखक बनी, ताई बता रही थी। सरोज लिख रही थी। सरोज ने पत्र पूर्ण किया और पत्र पेटी में डाल दिया। बाद में गुरूजी ने मजेसे कहा देखो ताई अब बडी हो गयी। अत: स्वाक्षरी के लिए भी समय नहीं मिला।

तब क्या गडबड हो गयी ताईजी के ध्यान में आया –ताई बेचैन हो गई और उन्होंने प. पू. गुरूजी को पत्र लिखा 'मुझसे इस तरह की भूल नहीं होनी चाहिए थी, क्षमा कीजियेगा'

यह पत्र पहुँचते ही प. पू. गुरूजी का उत्तर आया कि, 'मुझे कल्पना नही थी कि मैने कि हुई मजाक आपको इतना दुख देगी - क्षमाप्रार्थी हूँ'।

श्री गुरूजी प्रवास लिए निकलते तो ताईजी उन्हे लौंग तथा अद्रक की बर्फी देती थी। कभी कभी बाळू काका के हाथ सें भेजती थी। बाळू काका को दूरसे देखते ही गुरूजी कहते थे अद्रक की बर्फी आयी रे। एक बार ताईजी का स्वास्थ्य ठीक नही था। तो बाळू काका और कहीसें बर्फी ले गया तो गुरूजी ने कहा यह ताईजी की बरफी नही है। इस प्रकार से यह स्नेह गुरूजीके अंत तक बना रहा। प. पू. गुरूजी के ताईजी के घर से निकट के संबध थे। और विनायकरावजी के पश्चात् भी वे वैसे ही रहे। पू. गुरूजी के अंत तक उनका और आपटे परिवार का प्रेम अखंड बना रहा।

पुणे के छोटेसे छोटे वास्तव्य में भी वे खुले मन से ताई के यहाँ ठहरते - रूकते। ताईजी चाय बनाती तो गुरूजी रसोईघर में बैठक बातचीत करते थे। एक बार उन्होंने कहा था 'ताई आप जैसे ही घर स्थान स्थान पर बनने चाहिए नहीं तो कप प्लेटो की आवाज बैठक में पहुँचती हैं।' आगे चलकर अनेक वर्षो पश्चात ताई को यह भी बताया था कि 'ताईजी आजकल समिति का कार्य बढ रहा है क्यों कि बर्तनों की आवाज न होते हुए चाय मिल रही हैं।

प. पू. गुरूजी के मातापिता ती. ताईजी तथा भाऊजी का इस परिवार से अपनत्व का संबध था। ताई के यहाँ विवाह कार्य में वे दोनो आ कर कुछ दिन रहे भी थे। बडे ताईने इस 'छोटी ताई' पर पुत्रीवत् प्रेम किया। ती. भाऊजी के निधन के पश्चात् ताई नागपूर आकर माँ के पास रहे ऐसी इच्छा प. पू. गुरूजी ने प्रकट की। और ताई भी १०-१२ दिन गुरूजी के यहाँ श्राद्ध या अन्य भी धार्मिक कार्यक्रमों में भी ताई रसोईमें व्यस्त रहती।

ताईजी के माँ के देहांतापरांत गुरूजी का आया हुआ पत्र आज भी आपटे परिवार को याद है।

देवरसजीकी बहन

तृतीय संघचालक बालासाहब के और उनके भी पारिवारिक संबंध रहे हैं। ताईजीकी निधन की वार्ता सुनते ही उनकी ऑखों में आये हुये ऑसू ही प्रेमभाव का प्रमाण है।

पू. बालासाहबजी का भी 'पुणे' में इस घर में निवास हुआ है।

१९७५ में संघ पर दुसरी बार प्रतिबंध लगा था। आपात काल में दमन चक्र आरंभ हुआ। अनेक कार्यकर्ता जेल में ठूँस दिये गये। प्रथम संघ बंदी का कारण भयग्रस्त था। परंतु इस समय परिस्थितीही भयप्रद थी। आदमी आदमी से बात करने में डर रहा था। ताईजी के पाँवों में इस समय चक्र लगे हुए थे। परंतु ताईजी बालासाहब को उनकी बहन इस नाते सदैव मिलने के लिए जाती थीं। जेलके कर्मचारी भी उन्हें 'देवरसजी की भगिनी' इस नाते से ही पहचानते थे।

प. पू. बालासाहब का ६१ वाँ जनम दिन भी उन्होंने कारागृह में ही उत्साह से मनाया। जेलर से उन्होंने कहा 'कल मेरे भाई का जनम दिन है, अत: उनको तिलक करने को हम आयेंगे। यह जनम दिन हमें मनाना ही है। दूसरे दिन सुबह वेदशास्त्र संपन्न ब्राह्मणों और पाँच सुवासिनियों को लेकर कारागृह में गयीं। मंत्रोच्चारसहित बालासाहब को आशीर्वाद दिया।

सुवासिनियों से आरती उतारी और सबका मुँह मीठा किया।

भाई-बहन के प्यार का रिश्ता ताईजी ने तीनों सरसंघचालकों के साथ निभाया।

●●●

भारत केवल मिट्टी का नाम नहीं

भारत केवल मिट्टी का नाम नहीं। यह एक राष्ट्र का द्योतक है। जो हजारों वर्षोंसे इस धर्ती को अपनी मातृभूमि तथा पुण्यभूमि मानता आ रहा है और इसकी रक्षा के लिए हजारों सपूतों व पुत्रियों ने बलिदान किये। अपने राष्ट्र तथा समाज के अभिन्न अंग के नाते सभी को अपने कर्तव्य की पहचान होना ही देश की अखंडता व सम्मान के रक्षण का परिचायक है। और इसी कर्तव्य की पहचान कराने का काम राष्ट्र सेविका समिति कर रही है

राष्ट्र सेवा का बारहमास व्रत का स्वीकार हो

स्त्री को अपने चतुर्विध भूमिकाएँ निभाते हुए समाज और राष्ट्र के प्रति अपने कर्तव्योंका एहसास होना चाहिये। समाज तथा राष्ट्र के उन्नति के लिए संगठन के माध्यम से आजीवन कार्य करने का व्रत महिलाओं ने लेना चाहिये। चातुर्मास में महिलाएँ व्रत-अनुष्ठान करती ही हैं। उसी तरह देशसेवा का व्रत केवल चातुर्मास के लिए नहीं बारह महीनों के लिये लेना चाहिए।

मेरे पास समय नहीं है - मैं थक गयी हूँ, यह भाषा कभी न बोलें
व्यवहार के माध्यम से ही मनुष्य गढ़ता जाता है।

पूरक हैं स्पर्धक नहीं

मुक्ति आवश्यक है परंतु किससे? मुक्ति चाहिये- द्वेष से, लोभ से, मोह से। स्त्री-पुरुष समान है। इतना ही नहीं स्त्री पुरुष की प्रेरणा है, वह उसे संस्कार देती है, संभालती है परंतु स्त्री ने स्वयं की इस महानता को पहचानना होगा। पुरुषोंके समान पोषाख पहनना, उनके जैसा व्यवहार करना या पुरुष के कार्यों की कसौटी पर स्वयं के कर्तृत्व को नापना इसे समानता नही कहेंगे। वास्तव में समानता चाहिये तो वह स्त्री के व्यक्तित्व के विकास के अवसर उपलब्ध करने में, स्त्री के अस्तित्व को मान्यता देने में स्त्री और पुरुष के नैसर्गिक कार्य एक दूसरों के पूरक हैं, स्पर्धक नहीं।

दूसरों के दोष निकालने के बजाय हम उन्हें समझें। उसी प्रकार दूसरों के कठोर बातों का बुरा न मानें। मेरे कारण काम रूकेगा यह भावना भी नहीं होनी चाहिये।

हमारा प्रवास लंबा है, कार्य का क्षेत्र काफी बड़ा है। इसके लिए अनेक हाथ चाहिये, विचार चाहिये और मन उत्साही चाहिये। कष्ट सहन करने की प्रवृत्ति होनी चाहिये। कोई कुछ भी करे और वह सहन करते रहना अन्याय है। उसके विरूद्ध आवाज उठानी है।

अंतिम पर्व

जुनागढ़ की बैठक के अंत में ताईजी का समारोप पर भाषण! सभी मुद्दोंको लेते हुए अत्यंत सुसूत्र, परंतु इस बार उनकी भूमिका कुछ आग्रह की प्रतीत हुई। वैसे ताईजी ने कभी किसीका मन नहीं दुखाया परंतु इस बार वे किसी समझौते के लिये तैयार नहीं थीं। बैठक तो उत्तम रीतिसे संपन्न हुअी। परंतु ताईजी बहुत थक गयी थीं। ८४ साल की आयु में भी मानसिक शक्ति के बलपर कार्यरत ताईजी को ज्ञात हो चुका था कि अब शरीर पहले जैसा साथ नहीं दे रहा था। बैठक समाप्त होनेपर ताईजी अहमदाबाद में सौ. विजू के यहाँ दो दिन विश्रांति के लिये रहीं, मिलने वालों का ताँता लगा ही था, थकी हुई थीं फिर भी ताईजी स्वभावानुसार नित्यकर्म, मिलना, पूछताछ करना आदि से चुकी नहीं। पुणे लौटने का समय आया, घर से प्रस्थान करते समय ताईजी की आँखें भर आईं। विजूताई को अचरज सा लगा। ताईजी को कभी इतना भावुक होते नहीं देखा था। गाडी का समय हो रहा था, उसी गडबडी में ट्रॅफिक जाम हो गया था, कहीं गाड़ी छूट तो नहीं जायेगी? विजूताई का मानसिक तनाव बढ रहा था, ऐसे में ताईजी की भरी आँखें देखकर विजूताई पूछना चाहनेपर भी कारण पूछ नहीं पाई। संयोगवश ही गाडी मिल पाई। परंतु सारी गड्बडीमें ताई से बात नहीं हो सकी; यह शल्य मन में रह गया ---------

पिछले सालभरसे ताईजी के मुखसे निवृत्ति की भाषा सुनाई पडती थी, कहीं उन्होंने भविष्य की आहट तो नहीं सुन ली थी? पिछले साल जन्मदिवस १२ फरवरी १९९३ को उन्होंने अपनी दैनंदिनी में लिखा था — मेरा जनमदिन ही अंतिम दिन हो।

यह नियती का संकेत उन्हें कब और कैसे मिला? परंतु बाद में शायद वे तारीख भूल गई होंगी, वरन् उन्होंने सब समेटना आरंभ कर दिया होता।

विजयादशमी पर ताईजीने सेविकाओं के लिए जो पत्र लिखा था उसके आरंभ में ही ''सेविका भगिनिओं, यह मेरा अंतिम पत्र है।'' यह पंक्ति थी। आदत के अनुसार उन्होंने विजुताई और अपनी पोती सुहासताई को पत्र दिखाया और पूछा, ''देखो कैसा लिखा है। और क्या लिखना चाहिये?'' इस वाक्य से वे दोनों अवाक् होकर देखने लगीं। ताईजी से कहा– ''ऐसा आप मत ही लिखिए। परमेश्वर की इच्छानुसार जब जो होना होगा वही होगा परंतु ऐसा नहीं हुआ तो? लोग आपके बारे में क्या कहेंगे। यह ठीक नहीं। ताईजी का वियोग कल्पना से परे की बात थी। परंतु उनका इस प्रकार खुले आम पत्र में लिखना दोनों को ही अनुचित लगा। हँसी-मजाक में ही उन दोनोंने ताईजी को मनाया और वह प्रथम वाक्य मिटाने के लिये बाध्य कर दिया। किंतु ''मेरी अंतिम इच्छा आप सब एकत्रित रूप में रहें'' आदि वैसा ही रखा। ताईजी ने मृत्यु की भाषा का उच्चार भी किया तो घरमें सब बात बदल देते। ताईजी का घर में 'होना' यह बात मन में इतनी बसी हुई थी कि उनका 'न होना' कल्पना में जरा भी नहीं ठहरता था।

दूसरी बात यह थी कि ताईजी को न जाने कैसे परंतु स्वयंकी मृत्यु किस प्रकार से होगी इसके बारे में मानो विश्वास था। वे कहती तुम सब ऐसे ही गपशप कर रहे होंगे और मैं तुम्हारे बीचसे कब जा चुकी हूँ तुम्हें पता भी नहीं चल पाएगा। तुम कहोगे– ''अरे बुढिया चल बसी? मैं किसी की सेवा नहीं लूँगी, देखना! ना मैं पैर दबवाऊँगी' ना पानी माँगूँगी।'' ताईजी का आजकल का व्यवहार, इच्छाशक्ति का शरीर पर नियंत्रण आदि बातों के कारण वह बिस्तर पकडकर नहीं रहेंगी इस बात का सारे परिवार को विश्वास था।

पिछले साल ताईजी ने सबके यहाँ दो दिन क्यों न हो, जाना ही है यह ठान लिया था। पंजाब, कश्मीर, नागपूर, जुनागढ, गाणगापूर, लातूर भूकंप प्रदेश, जन्मगांव केळशी, मिरज, दिल्ली, कल्याण, अहमदाबाद–एक साल में इतनी जगह वे जाकर भी आईं। नियति का संकेत भी मिल चुका था। केवल समय ज्ञात नहीं था।

जुनागढ़ से वापस पूना आने पर फिर से नित्य के काम आरंभ हुए। शाम को वे कुछ थकी सी दिखाई पडीं परंतु मन की उमंग उसे स्वीकार नहीं करने देती। अहमदाबाद में उन्हें श्रीमती गंगुताई (लिमये) की बीमारी के बारे में पता चला। वे डायबेटिस की मरीज थीं, पैर में जख्म थी। गैंगरीन होने का डर था। ताईजी उनसे मिलने गईं और पूरी तरहसे ठीक हो जाओगी यह विश्वास दिलाकर लौटी। मार्च में दिल्ली की उनकी परपोती भार्गवी की मॅट्रिक की परीक्षा थी। सौ. सरोज (ताई की पोती) ने माँ को बुलाया था। ताई जी ने

सौ. उज्वलावहिनी (बहू) को जाने के लिए कहा और सरोज से फोन पर कहा– ''माँ को अच्छा दूध, घी, मख्खन खिलाकर सेहत सुधारकर भेजो।'' अब घर में वसंतराव (बेटा), उमेश (पोता), सौ. माधवी (पोते की पत्नी) और परपोता विक्रांत ही थे। ताईजी थकान के कारण सायंकाल बाहर जाने में असमर्थ थीं। परंतु आदत के कारण दो-तीन जगह भेंट देकर आती थीं। नौकरी से लौटते समय सुहास, शैला (पोतियाँ) आती रहतीं, सदा की तरह ७ बजते ही– ''चलो अपने अपने घर वापस लौटो।'' कहनेवाली ताईजी अब उन्हें रोक लेती, पास बिठाती, कहती– ''चली जाना! ४ जनों का भोजन बनाने में कितना समय लगता है? कोई मिलने आए तो ताईजी को अच्छा लगता था। पुणे आकर ७-८ दिन हो चुके थे। फरवरी समाप्त होकर मार्च महीना आरंभ हो गया। आज ४ मार्च! ताईजी शाम को गंगूताईसे मिलने गईं। उनका स्वास्थ्य अब ठीक था। चिंता की बात नहीं थी। परंतु विश्रांती की आवश्यकता थी। गंगूताई की बहू कल्पना की भी ताईजी ने प्रशंसा की– ''१५ दिनों तक सास की अच्छी देखभाल की, उसे पंगु होनेसे बचा लिया'' कहकर उसे शाबाशी दी।

गंगूताई की छोटी बहू ने घर में तैयार कपडों की प्रदर्शनी लगाई थी, वहाँ भी ताईजी गईं, सलवार, सूट आदि देखकर उससे हँसी-हँसी में बोली– ''मेरे नाप की पोशाख आए तो खबर करना हां।'' चिंता से व्यस्त उस परिवार को ताईजी की इस भेंट के कारण बडा धीरज मिला।

आज ६ मार्च! रविवार का दिन। सायंकाल ताईजी संचेती अस्पताल एक रोगी से मिलने गईं। रविवार के कारण लिफ्ट बंद थी अत: चार मंजिलें सीढ़ियाँ चढकर जाना पडा। वहाँ की परिचारिका को भी उनके थके चेहरे से पता चला, तो बोलीं– ''क्या करें, लिफ्ट बंद है, आपको कष्ट सहना पडा।'' ताईजी ने तो किसी प्रकार के कष्ट की कोई परवाह नहीं की। वहाँ से वे अपनी भतीजे की बेटी की सगाई में भी गईं। उनके भतीजे ने ससुरालवालों से ताईजी का परिचय कुटुंब के ज्येष्ठ व्यक्ति के रूप में कराया। ताईजी की उपस्थिति से सभी को अच्छा लगा। परंतु पहले से ही थके शरीर को यह श्रम सहन नहीं हुए। माधवी से वे बोलीं– ''कलका सीढियाँ चढना सहन नहीं हुआ।'' सुबह वसंतराव किसी कामसे बंबई जाने वाले थे परंतु पता नहीं कैसे उन्होंने जाना रद किया। भार्गवी की परीक्षा १८ तारीख को समाप्त होने वाली थी यह सबको पता था, उसके पश्चात् उज्वलावहिनी वापस आनेवाली थी। ताईजी को वास्तवमें छोटी से छोटी बात भी याद रहती थी। परंतु इस बार वे उमेश, सुहास से बार बार पूछ रही थीं– ''तुम्हारी माँ कब आ रही है?'' कदाचित् दीये का तेल समाप्त होने की आहट उन्हें मिल चुकी थी, और जिसका ४० वर्ष से भी अधिक सहवास रहा हो वह ऐसे समय दूर दिल्ली में हो यह कल्पना उन्हें बेचैन कर रही थी। करीब-करीब रोज ही उज्वलावहिनी को याद करती थीं। सबको लगा वृद्धावस्था में स्मरणशक्ति कमजोर होती है अत: किसी ने विशेष ध्यान नहीं दिया। दोपहर डॉ. साठे आए थे। उन्हें भी कोई गंभीर बात नहीं लगी, बुधवार को फिर आऊँगा कहकर वे चले गए। सुबह स्नान के लिए जाते समय वे विक्रांत के चार कपडे साथ ले गईं और साफसुथरे धोकर लाए, सुखाए। ऊपर से माधवी से कहा ''उमेश से मत कहना, नहीं तो ''नाराज होगा''। संध्या समय उषाताई जोशी के साथ २-३ स्थानों पर गईं।

आज ८ मार्च! खास महत्वपूर्ण कोई कार्यक्रम नहीं था। उषाताई कहकर गईं– ''रात को ८ बजे के आसपास एक बार आ जाऊँगी।'' ताईजी को घर में बैठे बैठे चैन कहाँ मिलता था? शाम ४ बजे जिजामाता स्मारक समिति की बैठक में अकेली ही गईं। वहाँ एकत्रित सेविकाओं को आश्चर्य हुआ क्योंकि इस बैठक के लिए ताईजी के आने की कोई सूचना नहीं मिली थी। माधवी को वे कहकर आई थीं कि मुझे कुछ पत्रादि पहुँचाने हैं। वापसी में और एक जगह भेंट करके आईं। आज एकादशी थी। फलाहार के लिये एकादशी के दिन वह कमलताई मांडके (सहेली) के यहाँ जाया करती थीं। वह भी ताईजी की प्रतीक्षा किया करतीं। आज भी कमलताई प्रतीक्षा करते हुए बैठी रहेंगी यह ताईजी को पता था। अत: ''आज आना संभव नहीं होगा'' यह संदेश पहले ही ताईजी ने भेज दिया था। उषाताई के हाथों फलाहार का डिब्बा भेज दिया था। ताईजीने तत्परतासे माधवी से कहा– *अगली बार जब उपवास होगा तब मैं कमलताई के यहाँ* जाऊँगी ऐसा उन्हें कहला दो, उन्हें अकारण कष्ट क्यों दें?

शाम को वसंतराव को ताईजी के बाहर जाने के बारे में पता चला तो वे कहने लगे - ''ताई, अब कष्ट उठाना कम करो, विश्रांती आवश्यक है।'' इतने में

सुहास आई, ताईजी ने तुरंत चाय का पानी चढाया। वसंतराव ने फिर टोका - मैं इतना कह रहा हूँ फिर तुम्हारा काम रूकता नहीं! ताई ने कहा ''अरे वह ऑफीस से थककर आई है। उसकी और तुम्हारी आयु में कितना अंतर है? सुहास हम दोनों को चाय बनाकर देगी।'' कभी न माननेवाले ताईजी के देह को यह मानना ही पडा इतना वह थक चुका था। वे कुर्सी पर बैठीं, चाय पीते पीते बातों का रंग भी जमा। संयोग से उस दिन न फोन की घंटी बजी, न कोई मिलने आया। पुराने दिनों का स्मरण करते हुए ताईजी ने कहा भी ''एक दिन था जब हम पाँच रूपये भी कष्ट से खर्च कर पाते थे, किसे पता था ऐसे दिन आएँगे? बातों बातों में सबकी पूछताछ हुई। विजूताई असाम में विश्व हिंदू परिषद के कार्यक्रम के लिये, उज्वलावहिनी १८ तारीख तक दिल्ली में है इत्यादि सारी बातें हुईं और फिर बातों का सिलसिला ताईजी के काम करने पर आकर रुका। वसंतराव और सुहास दोनों ने कहा ''अब शक्ति से बाहर काम करना आप बंद कर दो, जब हम बाहरगाँव किसी के घर मेहमान बनकर जाते हैं तो कैसे रहते हैं? वैसाही समझना और शांत रहना।'' ताईजी ने कहा - ''अरे बाबा यह अपना घर है, वह पराया होता है। अपने घर को पराया कैसे मान लूँ? ताईजी के प्रति प्रेम के कारण ही उन्होंने अपने घर को पराया समझो, ऐसी बात कही। नियती भी हँस रही होगी उस समय। ''कल कहाँ होगा अपना घर? अच्छा हुआ एक प्रकार से घर के लोगों से ही यह कहलवा लिया।''

संध्या समय हुआ, ७॥ बजे उषाताई आईं। सुहास जाने के लिये निकली तो ताईजी ने फिर एक बार पूछ ही लिया - ''तुम्हारी माँ निश्चित कब आ रही है?'' सुहास बोली - ''१८ को परीक्षा समाप्त होने पर २० तारीख तक आ जाएगी।'' ताईजी को अचानक स्मरण आया - ''रुक, यह डायरी ले। २० तारीख को बंबई की कुछ सेविकाएँ आ रही हैं, उनसे चर्चा के लिये विषय लिख लो, काश्मीर अभियान, बालिका संमेलन इत्यादि, आजकल ठीकसे याद नहीं रहता।'' सुहास कल फिर आऊँगी कहकर गई। उषाताई के साथ वे थोडी देर बातें करती रहीं। माधवी की बहन का फोन आया, वह घर में नहीं थी तो, ''उसे क्या बताऊँ?'' पूछा, उसके घरवालों की, बच्चों की पूछताछ की। कोल्हापूर से श्री. कर्णिक आए थे, उनसे भी बातें कीं। बैंकसे राजा कदम आए, उनकी पूछताछ की। दूरदर्शन पर सज्जनगढविषयक कार्यक्रम हो रहा था वह भी देखा। रात को सब काम खत्म करके वे सोने के लिये कमरे में आईं। विक्रांत उछलकूद कर रहा था, उसे कहानी सुनाई, वह अपनी परदादी के पास आकर नित्य की भाँति बोला।

यह उनका और परपोते का रोज का संवाद था, इसका अर्थ यमक को जोडते हुए इतनाही है कि इतना सा बैंगन उसका हरा हरा डंठल और आपकी हमारी अब सुबह को भेंट। बिछौने पर बैठने पर वे वसंतराव से बोलीं ''अरे, आज दासबोध (रामदासस्वामी रचित दोहे) का पठन तो रह ही गया।'' वे बोले, इतनी सी बात, मैं पढता हूँ। दोनों ने एक समास पढा। दरवाजा बंद करके वे लौटीं तो वसंतराव ने कहा - ''दरवाजा बंद हुआ या नहीं? ताईजी ने कहा ''विश्वास न होतो स्वयं जाकर देख लो।'' शास्त्रीय संगीत की कॅसेट बज रही थी। वे बोलीं - ''यह कौन बंद करेगा?'' वसंतराव ने कहा ''वह सब मैं देखता हूँ, अब आप शांतिसे सोइये।'' ताईजी बिछाने पर बैठीं, ईश्वरस्मरण किया, थोडा पानी पीया और चादर ओढकर शांत शांत निद्रा के स्वाधीन हुई...। कभी न जागने के लिये।

सुबह के पौने छह बज गये, अभी तक माँ जगी नहीं इस बात का वसंतराव को आश्चर्य लगा परंतु सोचा शायद आँख लग गई होगी, उन्होंने कहा भी '' आज उठना नहीं है क्या? कोई उत्तर नहीं मिला। पाँच मिनट बाद उनसे रहा नहीं गया तो उन्होंने उठकर ताईजी के पास जाकर कहा - ''माँ उठती हो ना? कोई उत्तर नहीं? उन्होंने जोर जोर से हिलाकर जगाया ... परंतु कोई चेतना नहीं.... वसंतराव के धीरज का बाँध टूट गया, वे दौडकर दूसरे ब्लॉक में गये, दरवाजा धडधडाने लगे। उमेश, माधवी भी दौडकर आए परंतु ताई वैसी ही निश्चल! डॉक्टर को फोन किया, आनेवाला हर क्षण युगों की भाँति प्रतीत हो रहा था। जितने ज्ञात थे उतने सब उपाय किये, ताईजी का सब कुछ समाप्त हो चुका है, यही बुद्धि बता रही थी परंतु मन नहीं मान रहा था। वसंतराव ने सुहास को फोन करके कहा ''माँ न जाने कैसी कर रही है, शीघ्र पहुँचो। वह भी पहुँची, डॉक्टर को फोन पर फोन जा रहे थे। ताईजी का शरीर गरम है, वह केवल मूर्च्छित होगी, चारों एक दूसरे को समझा रहे थे।

डॉक्टर गोरे आये, उन्होंने जाँचा और... ''ताईजी

की शांति से मृत्यु हुई है'' उन्होंने कहा। हाथों की मुट्ठियाँ बँधी नहीं थी, न ही मस्तिष्क पर किसी प्रकार का क्लेश दायी सिकुडने का चिन्ह। सब कुछ शांत, सरल! डॉक्टर ने कहा कि उन्हें किसी प्रकार वेदना नहीं हुई। अत्यंत सहज मृत्यु हुई है उनकी। ताईजी का जाना कोई भी मान्य नहीं कर पा रहा था, तभी डॉ. पल्लवी अथणीकर आई, उन्होंने भी वही वाक्य ''सब समाप्त हो गया'' दोहराया।

डॉ. साठे भी थोडी देर में आये, उन्होंने दूर से ही देखा, फिर शांत रीति से ताईजी के चरणों पर माथा रखा और बाहर आकर बोले - ''ताईजी ने चकमा दिया'' परसों मैं आया था तब ऐसा कुछ होनेवाला है इसका अनुमान ही नहीं था।'' बस! आशा की अंतिम किरण भी लुप्त हो गई। ताईजी नहीं रहीं। अपने कहेनुसार किसी की भी सेवा नहीं ली। पानी भी नहीं माँगा। मृत्यु के समय बेटा पास हो यह उनकी इच्छा थी, वह भी पूर्ण हुई। एकदम से खालीपन का अनुभव हुआ, अब क्या होगा? उसी समय कुसुमताई भिशीकर का फोन आया, ''ताईजीने मुझे फोन करने के लिये कहा था।'' उन्हें ताईजी के निधन का समाचार दिया। शीघ्र ही संपूर्ण देशभर यह दुःखद वार्ता फैल गई। घर में देखते देखते लोगों का ताँता सा लग गया। हर स्थान पर फोन, सूचनाएँ भेजना आरंभ हुआ। शैला आ पहुँची, विजुताई असाम में थी ''मेरे आने तक रोकना भैया'' उसने व्याकुलता से फोन पर बताया। भोर से कुमुदताई, बापूराव आये, कल्याण से भारती, बंबई से प्रभा, रत्नागिरी से नीला मिरज से सिंधुमौसी, इंदूमौसी, गोविंदराव आये। अहमदाबाद से गोविंदराव, केदार, बारामती से अविमामा, मामी, दुखते हुये पैर से गंगूताई भी आई। ताई के बिना ताईजी के घर में आना यह बहुत बडी दुःख की बात थी। दिल्ली से सुबह निकली हुई उज्वलावहिनी शाम को पहुँची। सरोज भी आई। समय शीघ्रता से बीत रहा था। महाराष्ट्र के कोने कोने से सेविकाएँ आ रही थीं। पुणे में सभी स्थानों पर सूचनाफलक लगे थे, अंत्यदर्शन के लिये भारी जनसमुदाय उमड पडा था, देर रात तक लोग आ रहे थे। नागपूर से आबाजी थत्ते, उषाताई चाटीजी, प्रमिलाताई मेढे, प्रमिला मुंजे भी आ पहुँची।

प्रणाम अंतिम तुम्हें हमारा।

''प्रमिलाताई, ताईजी के घर फोन करिये कुछ तो भी अघटित घटा है।'' पुणे से सुनीता कोल्हटकर का फोन! आवाज व्यथित घबडाया हुआ। ''सुनीता क्या हुआ, जरा बताओ तो।'' मैंने पूछा। उत्तर में दबे आवाज में शब्द ताईजी नहीं रही।'' ''क्या?'' वहाँ से फोन बंद। क्या धक्कादायक समाचार। तुरंत फोन घुमाया वं. ताईजी का नंबर मिला नित्य जैसा ''हं बोलो, मैं ताई बोल रही हूँ।'' यह आवाज नहीं सुनी। फोन पर थे वरांतराव, ताईजी के सुपुत्र। उन्होंने भी वही दुष्ट समाचार दोहराया। ''ताई, नींद में ही गयी सुबह ३ बजे के बाद कभी तो भी गयी होंगी।'' स्वर में भारीपन। बिजली गिरने जैसा समाचार। पासमें बैठी थी मा. उषाताई, चित्रा उनको क्या बताऊँ? कैसे बताऊँ? फिर भी बताना तो था ही।

अब तुमही भार सँभालो

अपनी ताईजी चिरनिद्रा में सो गयीं। रात ११।। बजे सोयी वह जगीही नहीं। 'ताईजी नहीं रही' संवेदना बधिर करनेवाले ये शब्द। कल इसी समय तो उनका फोन आया था। लंबी बात हुई। अंत में बिदाई के शब्द 'अभी मुझसे काम नहीं होगा। अगस्त बैठक में आ सकूँगी या नहीं पता नहीं। आप सब मिलकर काम सँभालो। उषाताई सुन रही थी। क्या उत्तर देगी? ''उषाताई, सुन रही हो नं?'' वं. ताईजी का प्रश्न। ''हाँ जी मैं सुन रही हूँ परंतु इन बातों की अभी ही क्या जरूरत है? आगे देखेंगे'' उषाताई ने कहा। आगे देखने के लिये आज ताईजी कहाँ थीं?

अहल्या मंदिर परिवार की माँ गयी यह एकही भावना परिसर व्याप्त करके रही। एकदम वातावरण बदल गया। पहाड ढहने पर भी धैर्य से खडा होना आवश्यक था। ताईजी एक व्यक्ति नहीं थी। एक अ. भा. संगठन की प्रमुख। लाखों सेविकांओं का श्रद्धास्थान। वं. ताईजी के स्वर्गवास की जानकारी सभी को देनी थी। दूरदर्शन, आकाशवाणी, राष्ट्रीय समाचार संस्था आदिको निवेदन देना था। चित्रा फोन कर रही थी। मा. उषाताई मिलने आये हितैषियों से बातचीत कर रही थीं। मैं निवेदन तैयार कर रही थी। अहल्या मंदिरस्थित छात्रावास की सभी बालिकाएँ घेरकर खडी थीं। नन्हीं चिडियों का कलरव थम गया था। कोमल कलियाँ उदास हुईं। परंतु उनको ही अनेक स्थानोंपर दौडाना पडा। श्री. यशवंत पाठकजीने प्रचार माध्यमों को समाचार पहुँचाने का दायित्व उठाया। समिति की सेविकाओं का ताँता लगा। वैसेही अहल्या

मंदिर परिवार के घटक श्री बाळकाका मुंजे, मनोहर जोशी, बाळ पांढरीपांडे अन्य व्यवस्थाओं में जुट गये।

महायात्रा

सबसे कठोर, कठिन प्रश्न था वं. ताईजी की अंतिम बिदाई का समय निश्चित करना। उनकी कन्यकाएँ देशभर बिखरी थीं। वे पहुँचनी चाहिये। पुन: पुणे से फोन पर संपर्क किया। सुहास वं. ताईजी की पोती ने कहा 'डॉक्टर कहते हैं आज सायंकाल को ही अंतिम संस्कार होना चाहिये' यह और एक वज्रपात। याने ताईजी का अंतिम दर्शन नहीं होगा? मुझे नहीं, सबको लगा पंख होते तो उडकर पहुँच जाते। नहीं, नहीं। वं. ताईजी का अंतिम दर्शन सभीको होना चाहिये। दि. १० की सुबह का ही समय निश्चित करना है। मन पर तनाव था। निर्णय लेने में किसी की भावनाओं का अधिक्षेप नहीं होना चाहिये। वसंतराव शोकमग्न थे। स्वंयसेवक होने के कारण संगठन प्रमुखों की बिदाई कैसी होती है, होनी चाहिये यह उनको मालूम था। उन्होंने कहा 'आप जैसा कहेंगे वैसा होगा। डॉक्टर से बात करता हूँ। विचार विमर्श के पश्चात दि. १० को प्रात: ७ बजे का समय निश्चित हुआ। मनसे उठा भावनाओं का तूफान अश्रुरूप ले रहा था। उसको रोकना कठिन था। मन एक काम कर रहा था तो हाथ दूसरा ही।

आशा निराशा के हिलोरे

वडवानल जैसा समाचार फैल गया। फोन करना या लेना यह काम चित्रा अथक कर रही थी। पता करने पर मालूम हुआ मुंबई के लिये दोपहर १.३० बजे एक उडान है। यशवंतजी ने टिकट लाकर दिए। तूफान मन में लेकर देव-पाठक परिवार के सहयोग से हवाई अड्डे पर पहुँच पाये। चित्रा पीछे अकेली थी वह अस्वस्थ भी थी परंतु स्वातीताई शहाणे, इंदुताई छत्रे, अनुराधा आदि उसके साथ रहकर मदद करेंगी यह विश्वास था। 'तरुण-भारत' के श्री. लक्ष्मणराव जोशी का समिति को हमेशा सहयोग प्राप्त होता है। कभी समाचार दिया, नहीं दिया तो भी आपसमें चर्चा सीमित रहती है। यह विशेष समाचार ठीक तरह देना चाहिये। सौभाग्य से श्री. लक्ष्मणराव फोनपर उपलब्ध हो पाए। आगे का काम सरल हुआ। दिल्ली में सुमित्राताई महाजन, मुंबई में सुधाताई, कमलताई, दूरदर्शन से संपर्क कर रही थी। अत: यह समाचार देश के कोने कोने में पहुँच सकता था।

मा. उषाताई चाटी और प्रमिलाताई मुंजे के साथ हवाई अड्डे पर कदम रखा ही था तो घोषणा हुई। 'मुंबई से निकला हवाई जहाज कुछ तांत्रिक नादुरूस्ती के कारण मुंबई लौट गया है। अगली सूचना तक प्रतीक्षा कीजिये' ऐसा लगा मानो दिल की धडकन बंद हो गई। परंतु केवल नाराज होना, बेचैन होना, चिढ़ना इतनाही तो हमारे हाथ में था। इतने में श्री. आबाजी थत्ते आये। वे भी वं. ताईजी की अंत्ययात्रा में संमिलित होने हेतु उसी उडान से जा रहे थे। उन्होंने कहा, 'वं. ताईजी के बारे में पू. बालासाहब को बताया तो उनकी आँखों में आँसू आ गये।'

काल थम गया

घडी की सूई धीरे धीरे चल रही थी। उसकी गती मंद हुई थी। पुन: पुन: घडी की ओर देखते तो पता चलता २-४ मिनट ही हुए हैं। १.३०, २ बज गये। घोषणा का नाम नहीं, कर्मचारियों का ठंडा, रूखा, प्रतिसाद क्लेशकारक था। इस बीच डॉ. मृदुला बापट वं. ताईजी के कुछ फोटो, कुछ निगेटिव्ह लेकर आयी। उन्होंने बताया कि 'विवेक' ने एक लेख माँगा है। प्रवास में लेख लिखकर मुंबई हवाई अड्डे पर मिलनेवाले व्यक्ति के साथ वह भेजना है। शेवंती, स्मिता, सुरेश बारीबारी से कुछ ना कुछ सूचनाएँ लेकर वहाँ आते रहे। मा. उषाताई शांत बैठी थी परंतु मन की वेदना चेहरे पर स्पष्ट दीख रही थी। प्रतीक्षा के इस प्रकार के क्षण बहुत कठिन होते हैं। वं. ताईजी के व्यक्तित्व के अनेकानेक पहलू आँखों के सामने आ रहे थे। गृहिणी, सामाजिक, कार्यकर्ता, समिति की सामान्य सेविका, समिति की सर्वोच्च पदाधिकारी, इससे भी अधिक, स्नेहमयी माँ की प्रतिमा मन में उभर रही थी। समिति की कार्यवाहिका के नाते मुझे उनसे अनेक प्रश्नों पर चर्चा करनी पडती थी। आग्रहपूर्वक कुछ बातें रखनी पडती थीं। मुझे वह हेडमास्टर कहती थी। किसीने उनको पूछा तो बोलती थी हमारे हेडमास्टर से पूछो। ताईजी, आज कैसे आप हेडमास्तर से बिना पूछे चली गयीं? ताईजी ने कभी पद की ऐंठ दिखायी नहीं। हँसी मजाक करते हुए खिलाडी वृत्ति से वह सबसे बात करती। स्वयं कॉफी बनाकर आग्रहपूर्वक पिलानेवाली हमारी ताई, आनेवाले के हाथ पर प्रेम से कुछ ना कुछ

रखनेवाली हमारी ताई, इस आयु में भी युवती जैसे चपल,कार्यक्षम हमारी ताई निश्चेष्ट हुई यह बात मन स्वीकार नहीं कर रहा था। परंतु सत्य कठोर होता है। हमारी इच्छा हो, न हो उसको स्वीकारनाही पडता है।

मन पंख लगाये उड़ जाये

हवाई जहाज की गति से मन की गति तेज़ होती है। उसने पुणे के कितने चक्कर काटे कोई हिसाब नहीं। आखिर हवाई जहाज मुंबई हवाई अड्डे पर उतरा। पाँच बज गये थे। बाहर दो गाडियाँ तैयार थीं। सुधाताई चितळे, वसंतराव भावे अन्य २-३ बंधु भी। बाहर आने पर तुरंत गाडियाँ पुणे के रास्ते पर दौडने लगीं। सायंकाल का भीड का समय। गाडी की गति अपने आप कम होती गयी। क्षण-क्षण से बेचैनी बढ़ रही थी। पुणे के दीप दूरसे दीखने लगे। गाडियाँ सदाशिव पेठ में आयीं। चिमण्या गणपती चौक रात के १२ बजे भी भरा हुआ था। गाडी से उतरकर सीढियाँ चढ़ते समय मन में विचार आया अब 'आओ, आओ' ऐसा कौन कहेगा? अंदर गये। वं. ताईजी का देह शांत विश्राम ले रहा था। इस देह ने कितने कष्ट उठाए, कितनों के लिये। चंदन जैसा घिसते ही रहा यह शरीर। उनके विश्रान्त पैरों पर मस्तक झुकाने पर मन के बाँध खुल गये। कुमुदताई, वसंतराव और असंख्य परिवारजन सब सब थे, फिर भी घर सूना था, अनाथ था।

रात १ बजे के बाद समिति कार्यालय में हम गये। सभी तरुण सेविकाएँ प्रतीक्षा में थीं। मा. उषाताई को देखकर अपना मन मुक्त किया। उनके मन का बोझ उतरा। अपने को सँभालते हुए आगे की व्यवस्था जहाँ वं. ताईजी को अंतिम प्रणाम दिया जानेवाला था उस मैदान पर हम गये। सब व्यवस्था देखकर कुछ सूचनाएँ दीं। उनको भी जिम्मेदारी का एहसास हुआ था यह प्रतीत हुआ। फिर तरूण सेविकाओं की बैठक। हरेक ने क्या क्या करना है यह बताया। रात के ३ बज गये थे। दिनभर के तनाव से शरीर, उससे भी अधिक मन थका था। आँखें बंद नहीं हो रही थीं। वैसेही दो घंटे बिताये।

ऐसे हुआ परमधाम की ओर प्रवास

दि. १० महाशिवरात्री का दिन। महायात्रा के लिये महादेव का दिन चुना ताईजी ने। शिव अर्थात पवित्र ताईजी का जीवन भी पवित्र, शिव भाव से ओतप्रोत। शिवजटा से बहनेवाले गंगाप्रवाह और ताईजी का जीवनप्रवाह इसमें अधिक पवित्र कौन यह प्रश्न मन में आया। फिर लोकाचार के अनुसार उनके देहपर गंगाजल तुलसीदल से प्रोक्षण किया गया। वं. ताईजी की छोटी सुपुत्री समिति कार्य हेतु असम गयी थी। शांताताई के साथ। दोनों भी आ पहुँची थीं। सभी से बिदाई लेकर ताईजी अब महायात्रा के लिये सिद्ध हुई थीं। समिति का शुभ्र गणवेश धारण किया हुआ था। अबतक शिव की हिमशय्या पर लेटा हुआ देह धरतीमाता के अंक पर विराजमान था। वं. ताईजी का प्रसन्न चेहरा, अर्धोन्मिलित नेत्र देखकर साधना रत साधक जैसी ही वे लगीं। कल स्थिर गति से चलनेवाली घडी आज द्रुत गति से दौड रही थी।

वं. ताईजी को ले जानेवाली गाडी नीचे तैयार थी। वैसी भी ताईजी निरासक्त प्रवृत्ति की। आज उन्होंने 'कौशिक' छोडा 'श्रीराम जयराम जय जय राम' की धुन में पुन: न आने के लिये। परमधाम जाने के लिये 'यद् गत्वा न निवर्तन्ते' ऐसे परमधाम की ओर प्रवास शुरू हुआ। अनंत में तो वह कब की विलीन हुई थी। अब उनके पार्थिव की यात्रा थी।

अंतिम बिदाई

गाडी समिति के कार्यालय के पास आयी। समिति के केंद्रीय अधिकारी, विविध संस्था के प्रतिनिधि, ज्येष्ठ सामाजिक कार्यकर्ता गंगुताई पटवर्धन सभी ने मौन तथा भारी मन से, अश्रुपूर्ण नेत्रोंसे दी हुई भावपूर्ण बिदाई मन को उद्वेलित कर गयी। सरस्वती मंदिर का क्रीडांगण लोगोंसे भर गया था। परंतु पूर्णत: शांति थी। ध्वजारोहण, प्रार्थना, प्रमुख संचालिका को अंतिम प्रणाम देने के पश्चात् वं. ताईजी का अंतिम इच्छापत्र पढ़ने का कठिनतम कार्य मुझे करना था। कितनी कठोर परीक्षा! उनका वह वाक्य 'जाने अनजाने में मैंने किसी को भला-बुरा कहा हो तो मुझे क्षमा करें' सभी के मन को छू गया। यह हृदयस्पर्शी निवेदन ताईजी के मन का स्तर प्रकट कर रहा था।

क्रीडांगण से निकल ही रहे थे कि एक सुरक्षा जवान ने स्वयंप्रेरणा से बिगुल पर अंतिम बिदाई के स्वर बजाये। यात्रा में सबसे आगे भजनपथक, हजारों गणवेशधारी सेविकाएँ, वं. ताईजी का पार्थिव शरीर विराजमान था

वह गाडी, समिति के केंद्रीय अधिकारी, परिवारजन

और अगणित बंधु सम्मिलित थे। पुणे के इतिहास में किसीकी अंत्ययात्रा में इतनी संख्या में महिलाओं का सम्मिलित होना शायद पहली ही बार हुवा होगा। रास्ते में अनेक स्थानों पर पुष्पवृष्टि हो रही थी। रास्ते में आंध्र की प्रचारिका कन्या, स्टेशन से दौडती हुई अंत्ययात्रा में सम्मिलित हुई। हमारा ध्यान था महाराष्ट्र एक्सप्रेस की ओर, विदर्भ की सेविकाएँ उसी गाडी से निकली थीं। गाडी १ घंटा १।। घंटा, २ घंटे लेट होती गयी। हम वैकुंठभूमिपर पहुँचे पर महाराष्ट्र से आनेवाली सेविकाएँ पहुँची नहीं थी। गाडी से पार्थिव शरीर उठाया। चबुतरे पर रखा गया। वहाँसे वह उठनेवाले ही थे कि महाराष्ट्र एक्सप्रेस से आनेवाली सेविकाएँ पहुँच गयीं। दो वर्ष वं. ताईजी के साथ रहनेवाली भारती, शकुनताई कितने कितने नाम गिनें? सभी ने वं. ताईजी को प्रणाम किया। अंतिम दर्शन हुवा इसका आनंद माने या चिरवियोग का दुःख?

धार्मिक संस्कारों के पश्चात् वं. ताईजी का देह अग्नि को समर्पण किया गया। देखते देखते ज्वालाओं ने ताईजी को अपनी बाहोंमें समेट लिया। ताईजी अब शेष हैं स्मृतिरूप से। वे तो अमर ही होती हैं। मृत्यु वं. ताईजी का देह उठाकर ले जा सका परंतु उनकी स्मृतियाँ वह हमसे नहीं छीन सकेगा।

यज्ञज्वालावत् जीवन व्यतीत करनेवाली वं. ताईजी को विनम्र श्रद्धांजलि!

प्रमिला मेढे
प्रमुख कार्यवाहिका

लो श्रद्धांजलि

लो श्रद्धांजलि वन्दनीय माँ
भाव पुष्प से अर्चन
तेजोमय वात्सल्य मूर्ति माँ
तुमको अन्तिम वंदन।।
गंगा का पावन प्रवाह जब
द्वार तुम्हारे आया
भगिनी के स्वागत में तुमने
स्नेहमयी मृदु हाथ बढ़ाया
अहंकार का लेश न मन में
केवल मात्र समर्पण
लक्ष्मी की पूजा वेदीपर
सरस्वती का चंदन-तुमको....
सौम्य सरल व्यक्तित्व तुम्हारा
सबका मन आनन्दित करता
उस विशाल वट वृक्ष छाँव में
हर पंछी कुछ क्षण रूक जाता
हो कृतार्थ और हो कृतज्ञ वह
झोलीभर आशिष ले जाता
हर मानव को वहाँ हुए हैं
शिवशक्ति के दर्शन - तुमको....
देख प्रबल कर्तृत्व मौसीने
गुरूतर भार दिया समिति का
प्रान्त प्रान्त और ग्राम ग्राममें
उत्कट कार्य हुआ समिति का
यही तुम्हारी प्रेरक शक्ति
मधुर स्नेह का बंधन
राष्ट्रभक्ति की करांजलि से
भाव पुष्प ये अर्पण - तुमको....

- सुलभा

क्षणिकाएँ

★ वं. ताईजी के निर्वाण का समाचार जैसे ही लोगों को मिला लोग उनके घर की ओर दौड पडे- देखते देखते भीड इतनी बढ़ गयी कि उसमें से आगे बढ कर वं. ताईजी के पार्थिव शरीर के अंतिम दर्शन के लिये पहुँचना कठिन हो गया।

★ वं. ताईजी की अन्त्य यात्रा में ३००० गणवेषधारी सेविकाएँ सम्मिलित हुई थीं। अन्त्य यात्रा में महिलाओं ने इतनी बडी संख्या में सम्मिलित होने की घटना पुणे के इतिहास में प्रथम बार ही घटी।

★ यह अभूतपूर्व अन्त्ययात्रा रास्ते से जहाँ जहाँ से गुजरती थी अनेक लोग आश्चर्य से देखते थे और श्रद्धा से मस्तक नवा लेते थे। अन्त्य यात्रा में सत्तर वर्ष की वृद्ध महिलाएँ भी अनुशासनबद्ध चल रही थीं।

स्नेहसिंचित मार्गदर्शन

दिनांक २०-३-९४ को नागपूर में आयोजित सभा में सांसद मा. सौ. सुमित्राताईजी ने वं. ताईजी को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कहा कि वं. ताईजी विशाल मातृत्वभाव की साक्षात् प्रतिमा थीं। उनके मातृत्व के अनेक उदाहरण देते हुए उन्होंने अपना एक अनुभव भी बताया। जब मैं सांसद् बनी, तब उन्होंने मेरा वैसा ही मार्गदर्शन किया जैसे ससुराल जानेवाली कन्या का माता करती है। उन्होंने कहा तुम एक अलग क्षेत्र में कार्य करने जा रही हो। अपना कर्तृत्व वहाँ भी सिद्ध करना। समिति की सभी अधिकारियों की दृष्टि तुम्हें शक्ति प्रदान करती रहेंगी। तुम सही मार्ग से जा रही हो या नहीं यह भी हम देखेंगी। हम स्त्री हैं इसका मतलब हम किसीसे कम है ऐसा नहीं। हममें भी एक शक्ति है परंतु अपनी शक्ति अपना कर्तृत्व दिखाते समय अपने मातृत्व भाव को न भूलें। मातृत्व के गुण लेकर अर्थात् शारीरिक सुदृढता, संयम, तेज और प्रेम- कार्य लेकर के मैदान में उतरे तो सब कुछ संभव है। इन्होंने कहा, 'जा बेटा जितनी ऊँची उडान भरनी है, भर ले, हम तेरे पीछे हैं।' ऐसा था वं. ताईजी का विशाल मातृत्व। स्वाभिमान और आत्मविश्वास ये दो गुण विद्यमान रहे तो समाज के किसी भी संकट का सामना किया जा सकता है परंतु उसके लिये वं. ताईजी के समान स्नेहमय, प्रेममय मार्गदर्शन देनेवाली चाहिये। ऐसा नेतृत्व प्राप्त हुआ तो देश की सभी समस्याओं का हल निश्चितरूप से होगा।

सांसद- श्रीमती सुमित्रा महाजन

राष्ट्र हमारा बडा घर

ताईजी सभी सेविकाओं को अपने देश के प्रति और धर्म के प्रति अपने कर्तव्य को सदा जागृत करती रहती थीं। हमेशा हमको बताती थीं कि हम जिस घर में रहते हैं वह हमारा छोटा घर है। और देश हमारा बडा घर है। जैसे हम अपने छोटे घर को संभालते हैं वैसे ही बडे घर को याने देश को सम्हालना भी अपना कर्तव्य है। बल्कि वह भी उतना ही आवश्यक है। और वे कहती थीं कि हम गृहिणी हैं इसीलिये हमें सदा सतर्क रहना चाहिये। घर में हम जैसे अपने बच्चे और बंधुओं को संभालते हैं। वैसे ही हमें इस समाज को भी अपना परिवार समझ कर उसे सँभालना होगा। इसी दृष्टिकोण को वे सदा सेविकाओं के सामने रखती थीं। और वं. मौसीजी ने जिस संवेदना के साथ इस कार्य को शुरू किया उनके नेतृत्व में पूरे भारत वर्ष में यह कार्य फैला। हर प्रांत में समिति की शाखाएँ शुरू हुईं। इसी कार्य को और आगे बढ़ाते हुए वं. ताईजी ने समिति की शाखाओं को विदेशों तक पहुँचाया और वहाँ भी इसका प्रचार किया। अब यह कार्य बहुत विराट हुआ है। वं. मौसीजी ने जिस कार्य को प्रारंभ किया उस कार्य को और संवर्धित करके वं. ताईजीने अपने मातृत्व को और विशाल रूप में प्रकट किया है।

नागपूर श्रद्धांजलि कार्यक्रम

– सौ. सीतालक्ष्मी
अ.भा.शारीरिक शिक्षण प्रमुख

मिश्री से भी मीठे बोल

जनता बँक के एक सिपाही श्री. तुकारामराव जाधव बँक के कागजाज लेकर श्री. वसंतरावजी के पास आए। अपना काम पूर्ण कर जाने के लिये निकले। दो तीन सीढियाँ उतरे होंगे तो अचानक ताईजी ने उन्हें बुलाया- तुकाराम फिर से ऊपर आये। ताईजी ने उन्हें बैठने के लिये कुर्सी दी और बैठने के लिये कहा परंतु वे खडे ही रहे- वसंतरावजी बँक के चेअरमन, अत: तुकाराम को बैठना उचित नहीं लग रहा था। अत: वे बैठे नहीं। ताईजी ने उन्हें न बैठने का कारण पूछा।

ताईजी मैं सिपाही- उसमें से भी कैंकाडी, साहब के सामने कैसे बैठूँ? बैठना उचित नहीं लगता।

बँक में ठीक है- यह तो अपना घर है। यहाँ सभी एक जैसे, कोई भेद नहीं। प्रेमपूर्वक ताईजी ने बताया। हाथ में मिश्री रखी और कहा- तळेगांव में आऊँगी तो राजाभाऊ के साथ तुम्हारी बस्ती पर घर में अवश्य आऊँगी।

परंतु वह दिन आया ही नहीं। तुकारामजी को लगता है मैं अभागा, ताईजी के पावन स्पर्श से मेरी कुटिया पवित्र नहीं हो पायी।

शिवणे गाँव की शोकसभासे

समितिकार्य एक अखंड प्रवाह

''वं. मौसीजी के आशीर्वाद से एवं आप सभी के सक्रिय सहयोग से चलनेवाला यह कार्य मा. उषाताई इससे भी अधिक व्यापक मात्रा में समर्थता से आगे बढायेगी ऐसा मेरा विश्वास है।'' वं. ताईजी के इच्छा पत्र में अंतर्भूत यह वाक्य पढते समय, समितिकार्य के बारे में उनकी कल्पना मन को छू गयी। वं. ताईजी का पार्थिव देह गाडी पर विश्राम ले रहा था। उनको अभिप्रेत भाव लौकिकार्थ से संवेदना के परे होने पर भी उस मैदान पर उपस्थित हजारों स्त्री-पुरुषों की संवेदना को स्पर्श कर गया।

किसी भी बडे व्यक्ति की मृत्यु के पश्चात् सामान्यत: कार्यकर्ता के मन में कार्यवृद्धि से भी अधिक विचार उच्चपद की प्राप्ति के बारे में आते हैं परंतु समिति की कार्यपद्धति अलग ही होने के कारण वं. ताईजी के जाने के बाद सभी के मन में विचार आया कि अब हम सब का दायित्व बढा है।

समिति का कार्य व्यक्तिनिष्ठ नहीं यह पाठ वं. मौसीजीने ही सिखाया था। उनकी अंतिम बीमारी के काल में मध्यप्रदेश की बैठक उनकी अस्वस्थता के कारण स्थगित करने पर वे नाराज हुई थीं। वं. ताईजी ने भी उसी आदर्श का पालन किया। उनके कार्यकाल में समिति कार्य की वृद्धि हुई यह मेरा कर्तृत्व नहीं- यह वं. मौसीजी के आशीर्वाद से और आप सभी सेविकाओं के सहयोग से हो पाया। इस एक ही वाक्य से स्पष्ट हुआ है और ऐसा ही आगे भी होता रहेगा यह विश्वास है।

अखंड बहनेवाले जलप्रवाह जैसा समिति का कार्य है। प्यासों की प्यास बुझाने का कार्य वह करता ही रहता है। लोग आते हैं जाते हैं परंतु कौन आया कौन गया इसका विचार प्रवाह नहीं करता। प्रवाहित रहने का अपना स्वभाव वह कभी छोडता नही। उद्गमस्थान पर छोटा होने वाला प्रवाह विशाल होता जाता है- कार्य भी वैसा ही है।

वं. मौसीजी के कार्यकाल में संगठन का तानाबाना मजबूत करने की आवश्यकता थी। फिर भी तत्कालिन समस्याओं की उन्होंने उपेक्षा नही की। वं. मौसीजी पुरानी पीढी की थीं परंतु उनके विचार पुराने रूढीवादी नही। वं. ताईजी का काल उनके बाद का- उसमें कार्य के नये नये आयाम विकसित हुए। समिति का कार्य केवल समितिस्थान तक सीमित नहीं- उसके बाहर का भी विचार करना चाहिये। वं. मौसीजी के मन में बीजरूप से अस्तित्वमान, संस्कारकेंद्र एवं बालिका शिक्षा का विचार आज साकार हो रहा है। वं. ताईजी की जन्मजात सहज सेवा वृत्ति अनेकों को प्रेरणास्पद रही। वं. ताईजी का प्रत्यक्ष उदाहरण था। कहीं भी किसी की अडचन ध्यान में आते ही ताईजी वहाँ दौडकर जाती थीं। ताईजी जिमखाना बस्ती में जितनी सहजता से समरस होती थीं उतनी ही दरिद्ररेषा के नीचे जीवन जीनेवाली बस्तीयों में अकृत्रिम स्नेह एवं निरपेक्ष सेवा यही ताईजी का व्रत था। संस्कार केंद्रों के माध्यम से उन बस्तियों से निकटता आयी। समाजमानस में सुप्त देवत्व को पहचानना, आवाहन करना यही उनका चिंतन। विविध क्षेत्र में हिंदु विचार से कार्यरत महिलाओं ने एकत्र आकर विचारविमर्श करना चाहिये, परस्पर कार्य का परिचय कर ले कर सामंजस्य निर्माण करना चाहिये ऐसा वं. मौसीजी का आग्रह था। कारण उससे हिंदुशक्ति प्रबल होगी ऐसा उनका विश्वास था। आज वह कल्पना साकार हो रही है। मातृकुल की आवश्यकता प्रतीत हो रही है। हाल ही में संपन्न महाराष्ट्र प्रांत की समन्वयात्मक बैठक में महिलाओं ने यह प्रकट किया। वं. ताईजी भी इसी विचार से प्रेरित थी। वे मानती थी मातृकुल- मातृशक्ति रूप में भासमान होगी।

समिति का कार्य मूलत: संस्कारप्रधान संगठन का। आन्दोलनात्मक कार्य को विशेष स्थान नहीं। अधूरी अपक्व शक्तिसे किसी भी कार्य की यशस्विता नही सोच सकते। अत: अधिक आग्रह संगठन का परंतु राष्ट्रीय समस्या गंभीर होनेपर वह मार्ग भी अपनाने में हिचकिचेंगे नहीं। वं. ताईजीके कार्य काल में ऐसा हुआ। कश्मीर, भारत का मुकुटमणी अपना नही रहने का धोखा ध्यानमें आनेपर 'जम्मू काश्मीर बचाओ' अभियान, एकत्रिकरण, संगठन, ज्ञापन, मोर्चा विशाल सार्वजनिक सभा आदि कार्यक्रम समितिने आयोजित किये। इसके बाद भी राष्ट्रीय स्वाभिमान संप्रभुता के लिए आवश्यक हुआ तो समिति की नूतन प्रमुख संचालिका इसको समर्थन देगी यह विश्वास है।

समितिकार्य के विस्तार के संबंध में चर्चा होती थी तब वं. मौसीजी और अन्य ज्येष्ठ अधिकारी बहनों को लगता था कि अपनी सेविकाएँ विवाह होकर जायेगी वहाँ काम खडा करेंगी। परंतु आज कार्य की गति बढ़ाना उतना ही आवश्यक है ऐसा प्रतीत होनेपर तरूण सेविकाओंने पूरा जीवन देते हुए १-२ साल देने, गृहिणियों ने भी अल्पकालीन विस्तारिका के रूपमें कार्य करने की योजना को वं. ताईजीने स्वीकृती दी।

अनेक आपत्तियों से टकराते हुए हिंदुधर्म जीवंत रहा कारण श्रुतिवचनों को नया संदर्भ देनेवाली स्मृतियाँ समय समयपर निर्माण हुईं वैसाही समिति कार्य का है। मूलभूत विचार कायम रखकर उसका आविष्कार नये रूपमें प्रकट करना समिति आवश्यक मानती है। उससे ही समिति कार्य का प्रवाह विशाल होगा यह विश्वास है।

।। प्रणाम लो हे वंदनीय माँ ।।

चित्रा जोशी, सौ. सीतालक्ष्मी, सौ. कुंदा सहस्त्रबुद्धे,
सिंधुताई फाटक, कृ. रूक्मिणी, प्रमिला मुंजे,
भारती बंबावाले, बकुळ देवकुळे, माई अफझलुलपूरकर, शरद.

वैष्णवी व्रत

सतेजोऽस्तु नित्यं शांतपावित्र्यस्य।
श्रेष्ठ चरित्रस्य नंदादीप:
देश हित हेतु चंदन बने हम।
कण कण घिसे आजीवन

सतेज, शांत और पावन चरित्ररूपी यह नंदादीप अखंड जलकर सृष्टि को आलोकित करता रहे। मन में यही आस रहे कि हम देश हित के लिये चंदनसम बनें जो स्वयं घिसता है और दूसरों को सुगंध देता है, शीतलता प्रदान करता है। समिति की शाखाओं में गाए जानेवाले अनेक श्लोकों में यह एक श्लोक। हमने यह श्लोक केवल गाया ही नहीं अपितु वं. ताईजी के रूप में उसे चरितार्थ होते हुए देखा है।

हमारे इर्दगिर्द ही वह साकार हुआ। शांत नंदादीप ही तो था वह! उसके प्रकाश से न कि आँखें चकाचौंध हुई, न वह कभी हवा से फरफराया, न दीये की भाँति कभी जला, कभी बुझा। जिस प्रकार से नंदादीप तेल की आखिरी बूँद तक जलता है और फिर शांत हो जाता है उसी प्रकार वं. ताईजी का जीवन भी सहजता से शांत हो गया। कहीं वेदना की चीत्कार नहीं, कराहना नहीं या तड़पना नहीं। डॉक्टर ने बताया- ''चावी खत्म होने पर जिस प्रकार घडी रूक जाती है, बस वैसे ही हुआ है। कितनी सहज मृत्यु! प्रसिद्ध लेखिका मृणालिनी जोशी कहती है- 'ताई की मृत्यु एक तपस्विनी की मृत्यु है। ऐसी लाखों में एक किसी को मिलती है। उसका शोक नहीं उत्सव मनाना चाहिये' सत्य है यह।

ताईजी ने एक ही अट्टाहास किया था। हिंदुत्व का- मातृत्व का। सारे हिंदु समाज पर पुत्रवत् स्नेह करने का। सारे हिंदु समाज को अपने घर में समाहित करने का और यह सब उन्होंने अपनी सहज प्रवृत्ति से किया। 'बकुलपुष्प जैसे सुगंध प्रसारित करे, चंद्रमा शीतलता फैलाए वैसे ही ताईने ममता करते हुए जीवन बिताया। प्रेम की वर्षा की बिना किसी विशेष प्रयत्न के अपितु बिलकुल सहजतासे। जीवन अत्यंत सादगी से बिताया और उसी सहजतासे हमारे बीच से चली गईं। उनके सहज स्वभाव के कारण उनके सान्निध्य में रहते हुए भी उनके प्रमुख संचालिका पद का दबाव मुझ पर कभी नहीं आया।

संगठन की, देशभक्ति की धरोहर उन्हें लोकमान्य तिलकजी से मिली। उनके पिता तिलकजी के भांजे थे। वं. ताईजीं के बचपन का नाम तापी था परंतु वे तापदायक नहीं बल्कि तापहारक सिद्ध हुईं। भाई-बहनों में सबसे बडी थीं अत: घर के काम सँभालते सँभालते कामकाज की आदत पड चुकी थी और बाद में वही जीवन का स्थायीभाव बन गया। विनायकरावजी आपटे एक धनी व्यक्ति थे रूपये पैसों से नहीं, अपितु मनुष्यधन से। उन्होंने यह धन काफी जोड रखा था। व्यक्तिगत परिवार तो छोटासा था परंतु संघ परिवारके अनेक संस्थाओं से संबंधित व्यक्ति भी उनके परिवार के ही बन गये थे। इस परिवार में डॉ. हेडगेवार थे, काका लिमये थे, गोळवलकर गुरूजी थे, बॅ. विश्वनाथ, सुधीर फडकेजी थे, कितने नाम गिनें? पुणे में आया हुआ कोई प्रचारक ''सरस्वती सदन'' में भोजन किये बिना नहीं गया। वं. ताईजी का ससुराल में सरस्वती नाम रखा था, वर्धा के आप्पाजी जोशी उनके गृह को सरस्वती सदन कहते थे। हम प्रयाग में तीन नदियों का संगम देखते है, उनमें सरस्वती नदी अपना अस्तित्व गंगा यमुना में विलीन कर देती है, उसका समर्पण ही उसका बलकेंद्र है। वं. ताईजी के जीवन का रहस्य भी 'समर्पण' भाव में छुपा हुआ है।

विवाह के बाद उन्होंने दादा आपटे के जीवन में अपना

जीवन समर्पित कर दिया। उस समय के स्त्रीमन का अनुसरण करते हुए उनकी दादा पर नितांत श्रद्धा थी। जो कुछ दादा का था वह सब ताईजी ने स्वीकार कर लिया, अपनाया। साथ-साथ ही उनके विचारों का क्षेत्र भी व्यापक होता गया। इसी में से उनके समिति कार्य का जन्म हुआ। १९३६ के आसपास उन्होंने घर में ही महिलाओं का एकत्रीकरण आरंभ किया। वह प्रवाह डॉक्टरजी के ध्यान में आया। उन्होंने ताईजी को वं. मौसीजी केलकर से मिलने के लिये कहा, पता दिया। पत्रव्यवहार हुआ और वं. मौसीजी से भेंट होने के पश्चात् इस सरस्वती ने अपना प्रवाह वर्धा प्रवाह में मिला दिया। कोई शर्त नहीं, बाधा नहीं, पुणे का घटाकाश भारतीय महदाकाश में सहजतासे मिल गया। अपनी संस्था, अपना कार्य किसी दूसरे के कार्य में विलीन कर देना कठिन कार्य है। वं.ताई ने वह सहजरूप से किया। कहते हैं- लक्ष्मी सरस्वती की आपस में बनती नहीं है। परंतु समिति के इतिहास में यह सहवास बडा मनोरम और सुचारू ढंग से चलता रहा। ती. दादा और वं. मौसीजी इन दोनों के कार्यों में ताईजी ने अपनी सारी छटाएँ मिला दीं और ''तुम राष्ट्र मंत्र जप करो निरंतर निज अंतर में' इस प्रकार जीवन जीती रहीं। बाद में अखिल भारतीय नेतृत्व की धुरा का दायित्व उन्हें सौंपा गया। उनके व्यक्तित्व में नेतृत्व को मातृत्व का आधार था या मातृत्व को नेतृत्व का यह कहना कठिन है, परंतु एक बात निश्चित है उनके मातृत्व की ताकद कितनी बडी है यह उन्होंने जुनागढ़ की फरवरी ९४ की बैठक में एक वाक्य में बताया। वे बोलीं- ''अनेक लोग मेरे भोजनादि से आतिथ्य करने पर टिप्पणी करते हैं परंतु जिस-जिस को मैंने भोजन खिलाया वे सब तन मन से राष्ट्र कार्य में लगे रहे, इधर उधर भटके नहीं।'

भोजन का सामर्थ्य

'मेरा व्यक्तित्व विनायकराव ने गढा है और सेहत बनाई है ताईजी ने' यह जगन्नाथराव जोशीजी का वाक्य इस संदर्भ में उल्लेखनीय है। यह बात सच है कि प्रवास के निमित्त अलग अलग प्रांतों में जाने पर अनेक प्रचारक जब मिलते हैं तब वं. ताईजी के घर भोजन किया था यह अभिमान सहित बताते हैं। उस भोजन की तृप्ति आज भी उनके चेहरे पर दिखाई पडती है। इस संदर्भ में स्मरण आती है हनुमानजी की माता अंजनी। वह राम से कहती है - 'अरे इसने यदि सीताजी का अपहरण करते हुए रावण को देखा तो यह शांत कैसे रह सका? उसी क्षण क्यों नहीं रावण को नीचे खींचा? आपको कष्ट कैसे दिया? इसने मेरे दूध का अपमान किया है। आज भी मेरे दूध में शिलाखंडों को चूरचूर करने का सामर्थ्य है।' यही वं. ताईजी ने बताया कि उनके द्वारा बनाए गए भोजन में मन भी समाहित रहता था और वह मन राष्ट्र को समर्पित था; राष्ट्र राष्ट्र का जाप करता रहता था और वही संस्कार अन्न पर भी होता था। उसी पूर्णब्रह्म के सेवन से वही गुणधर्म सेवनकर्ता के शरीर में भी पहुँचता था। ताईजी! हम जब-जब पुणे में आते थे तब तब आपका भोजन का आग्रह क्यों रहता था वह आज समझ में आ रहा है। परंतु बडी देर बाद हम समझ पाए। किसी सेविका द्वारा अदरक की बर्फी माँगने पर यदि ना हो तो अगली बार वह बर्फी स्मरणपूर्वक बनाकर उसे देना या उसके घर भिजवाना इस कृति का आशय आज समझ में आ रहा है। 'मातृहस्तेन भोजनम्' इस भगवान श्रीकृष्ण की उक्ति का अर्थ आज मन को ज्ञात हो रहा है। ताई, आपके बनाए भोजन का एक और गुणधर्म था। ''अहंभाव'' को दूर करना। आपकी किसी भी कृति में 'मैं-मेरा' यह भाव नहीं था। अहम् और आवाम् को तो आपने तिलांजलि दे दी थी। अस्तित्व में था केवल वयम्।

निरीहभाव से ग्रहण करना

छह साल पहले ताईजी के अमृत महोत्सव (७५ वर्ष पूर्ण होने पर) के कार्यक्रम स्थान स्थान पर संपन्न हुए। पहले तो वे इसके लिये सहमत नहीं थीं परंतु ''श्री शक्तिपीठ' के निर्माण हेतु धन की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए उन्होंने स्वीकृति दी। अनेक भेटवस्तुएँ भी मिलीं। वे सब उन्होंने स्वयं के लिये न रखकर मुक्तहस्त से वितरित कर दीं। वे कहती मै तो केवल निमित्त हूँ। जो कुछ मिल रहा है वह समिति के कारण। अत: इस पर मेरा अधिकार नहीं। समाज से मिला है वह समाज को ही देना चाहिये।''

राष्ट्र समाज अपना है परंतु यह जो प्राप्त है वह अपना नहीं यह भाव कार्य की प्रतिमा स्वच्छ रखने के लिये, उसका नैतिक पतन न हो इसके लिये अति आवश्यक है। ताईजी के इस उदाहरण से प्रेरणा लेकर हमें वह भाव सँभालकर रखना होगा। भारत के इस कोने से

लेकर उस कोने तक ताईजी का प्रवास चलता रहता था। कार्य का बोझ बढ़ता जा रहा था और हिंदी की आवश्यकता महसूस हो रही थी। ताईजी ने हिंदी भाषा का अध्ययन किया; परीक्षाएँ दीं। जो नया लगता था वह सीखने की कोशिश ताईजी किया करती थीं। नवीन प्रयोगों के लिये उनका सदा प्रोत्साहन रहता था। नवीनता से उन्हें परहेज नहीं था बल्कि हमें वह खुले मन से और उसका मूल उद्देश्य ध्यान में लेकर स्वीकारना चाहिये यही उनका मत था। एक बैठक में उन्होंने कहा था- ''अब बिजली के नए नए उपकरण मिलने लगे हैं। गॅस, मिक्सर इत्यादि से कम समय में और कम मेहनत से काम हो सकता है परंतु इन उपकरणों की वजह से गृहकार्य शीघ्र समाप्त करके बचा हुआ समय समाज़ के लिए दिया जाना चाहिए। यह तो नहीं हो पाता, वरन् इन सुविधाओं के कारण कल कर लेंगे यह सोचकर काम कल पर टाले जाते हैं और गृहिणियाँ और भी घर में उलझती जा रही हैं, अत: गृहकार्य शीघ्र ही निपटाकर नियमितरूप से कार्य हेतु समय दीजिए।''

''हम कुछ अंश में समाज के देनदार हैं। रोज हमें विचार करना चाहिए कि आज हमने कितना समय दिया समाजकार्य के लिये? गृहकार्य में लगे रहकर भी मन में सतत यह चिंतन रहने दें कि हम समाज के लिये कितना समय दे सकते हैं? 'स्व' में यदि 'आ' की मात्रा लगाई जाए तो कार्य बिगड़ता है। स्वार्थ का भस्मासुर निगलने उठता है। अत: सदा 'स्व' अर्थात् स्वदेशी, स्वधर्म, स्वसंस्कृति, स्वभाषा और स्वाभिमान की रक्षा करें यह उन्होंने हमारी अंजुलि मे डाले हुए यह अमृतबिंदु हम प्राणों से बढ़कर जतन करें।

सहज कथन द्वारा हितोपदेश

वं. ताईजी की बातों में कभी भी अभिनिवेश नहीं था, वक्तृत्व का जोश नहीं था; वहाँ थी भावनाओं की उत्कटता जो अंत:करण छू लेती थी। पहले समिति में बैठक के समय नीचे पंक्तियों में बैठकर भोजन करने की प्रथा थी और पीढा या आसन बिछाना और समेटना प्रबंधिकाओं का काम था। पहले ही दिन वं. ताईजी भोजन करके उठी तो उठते समय आसन भी उठाकर रखा और प्रबंधिका से कहा- ''उठाने दो।'' सबकी ओर देखकर बोलीं ''अरे मैंने कृति की है, हो सके तो अनुकरण करो।'' फिर क्या था। सभीने उनका अनुकरण किया और व्यवस्था का एक भार हलका हो गया।

१९९० साल की बात है। मा. भाऊरावजी से विचारविमर्श के पश्चात् मेधा बागलकोटे, नीता देशपांडे, कविता पाठक व शेवंती भगत ये ४ विस्तारिकाएँ पंजाब में भेजी गई। वे जब वापस आईं तब ताईजी ने उन्हें पास बिठाकर पूछताछ की। उन सबने अपने अपने अनुभव बताए। ताईजी ने शांत मन से उनकी पूरी बातें सुनीं और फिर बोलीं- ''पंजाब की हृदयद्रावक घटनाओं का वर्णन करते समय श्रोताओं की आँखों में आँसू आ जाय ऐसा तुम्हारा कथन ना हो बल्कि तुम्हारे वर्णन से अलगाव की भावना कैसी कम हो रही है, हम एक हैं, विभक्त हो ही नहीं सकते यह भावना लोगों के हृदय में कैसे जाग उठी है? यह तुम्हें बताना है। तुम्हारे प्रयत्नों से उनके मन में फिरसे भारत माता के प्रति निष्ठा किस तरह प्रकट हो रही थी, यह वर्णन करो तभी अनुभव कथन के प्रयास सार्थक होंगे।''

राखी एक सूत्र

हिंदुत्व का यह सूत्र, मानव-मानव को प्रेमधागों में बाँधने का यह सूत्र उन्हें सुंदर प्रकार से अवगत था। उनकी ऋजुता के कारण मनुष्य अपने आप उनकी ओर खींचा जाता था। गपशप करते समय भी उनके हाथ किसी न किसी कार्य में मग्न रहते थे। वे हर साल हजारों राखियाँ बनाती। उनके साथ हुई प्रथम बैठक में समारोप के बाद उन्होंने हर सेविका के हाथ पर राखी बांधी थी। इस प्रकार हर साल वे राखियाँ बांधती थीं। वह कभी कभी दूसरे वर्ष के रक्षाबंधन तक हाथ पर बंधी रहती थी। फ्लॅट में रहनेवाले व्यक्ति से लेकर रिक्शाचालक तक सभी को वे राखी बाँधा करती। वह धागा तो केवल प्रतीक था, वास्तव में उसके पीछे उनका स्नेहमय हृदय था। इसीलिये उनके निधन से भारत को और विशेष रूप से पुणे शहर को यह मातृविरह का दु:ख महसूस हो रहा है। उनके अन्त्यदर्शन के लिये अपार भीड उमड पडी थी। उनमें प्रख्यात साहित्यिक, गायक, कार्यकर्ता इत्यादि सभी क्षेत्र के लोग थे। पुणे के पूर्व विभाग का कर्मचारी-वर्ग बडी संख्या में उपस्थित था। बँक के चपरासी से लेकर डायरेक्टर तक और सामान्य सेविका से लेकर कार्यवाहिका तक सबकी ही आज माँ चल बसी थी। कोई कह रहा था- ''ताईजी ने हमें कभी कुछ खिलाए बिना जाने नहीं दिया। यह तो ताईजी का एक सहज व्रत था। एक

बार उनके पिता ने कहा था- ''रोता अतिथि- हँसता अतिथि' मेहमान को सदा हँसते बिदा करो।'' उस वाक्य का सम्मान उन्होंने आज भी रखा। १९६७ साल में वह आया तब उन्होंने सौभाग्य का दान दिया था और आज ९ मार्च ९४ द्वादशी को स्वयं का दान दिया। पर आज यह कहने को मन करता है- '' ताईजी आज आपने यह व्रत ना निभाया होता तो भी चल सकता था।''

चित्रा

●●●

भंडार संस्कारों का

मातृत्व की सुगंध सदा फैलानेवाली, माँ की ममता और स्नेह बरसानेवाली वं. ताईजी आपटे सदा चिरस्मरणीय हैं। प्यार भरी आवाज और वात्सल्य से भरा उनका आदेश भला कौन टाल सकता है? कितना प्रभावशाली और सहज था उनका मार्गदर्शन! इसका कारण यही है कि वह बोलती कम थी परंतु स्वयं अपने व्यवहार से हम सब को सही मार्गदर्शन दे देती थी।

घरमें काम करते समय अतिथि अभ्यागतों की सेवा प्रेमपूर्वक करने की प्रेरणा मुझे ताईजी से ही मिली। समाज सेवा करते समय अपना कर्तव्य निष्ठापूर्वक करना और कोई कुछ कहे तो भी बुरा नहीं मानना और अपने काम से नहीं हटना यह भी उन्होंने सिखाया।

वं. ताईजी से मेरा व्यक्तिगत अनुबन्ध मैं शब्दों में बाँधना नहीं चाहती हूँ क्यों कि शब्द संपूर्ण भाव प्रकट नहीं कर पाएँगे। मन की भाषा मन ही समझता है। फिर भी मैं कुछ स्मृतियाँ बताती हूँ।

विजयवाडामें वं. ताईजी जब मेरे सासजी को मिलने के बाद वापस फिर शिबिर में जा रही थी तो उन्होंने मुझ से कहा ''सीतालक्ष्मी, तुम सास की सेवा करती हो? ठीक है। मगर कभी कभी मायके में माताजी के पास दोचार दिन रहकर उनकी भी सेवा करो।'' मुझे तो यह आदेश बिलकुल ही नया सा लगा। आज तक मुझे किसी ने भी ऐसी सलाह नहीं दी थी।

जाडे के दिन थे। मैं और मा. प्रमिलाताई मेढे, वं. ताईजी के साथ नेल्लूर का कार्यक्रम समाप्त होने के बाद श्रीकाकुलम जा रहे थे। स्टेशन में गाडी की प्रतीक्षा में खडे थे। मुझे थोडा सा बुखार सा लग रहा था सो चुपचाप काँप रही थी। वं. ताईजी को कैसे पता लगा मालूम नहीं, तुरंत अपनी ओढी हुई शाल निकाल कर उन्होंने मुझे लपेट दी। मेरे आश्चर्य की सीमा नहीं रही।

समिति कार्य में भी ताईजी मुझपर पूरा भरोसा कर के बहुत सारे विषयोंपर बातचीत करती थीं। मेरे जैसे सामान्य कार्यकर्ता से इतना सरल व्यवहार बहुत प्रोत्साहनकारक होता था।

वं. ताईजी की स्मृति मेरे मन में एक संस्कार का भाण्डार है। उसके सहारे आगे भी मेरा कर्तव्य निभाती रहूँगी। मैं उस भाण्डार को कागजपर उतार कर नष्ट करना नहीं चाहती हूँ। इसीलिए मैं नतमस्तक होकर उनको वेदनापूर्ण अन्त:करण से श्रद्धांजलि अर्पित करके रूक जाती हूँ।

सौ. सीतालक्ष्मी
अ.भा.शारीरिक शिक्षण प्रमुख
एवं सहकार्यवाहिका

●●●

अहं राष्ट्रहित में बाधक न बनें

वं. ताईजी इ. स. १९७९ में जबलपूर पधारी थीं। प्रमुख संचालिका के रूप में आपका शहर में प्रथम प्रवास था। अत: संघ परिवार के सभी संगठनों के साथ एक अनौपचारिक परिचयात्मक बैठक का आयोजन किया था। वं. ताईजी उस समय हिंदी अच्छी नहीं बोल सकती थीं। सभी बन्धु समयपर उपस्थित हो गये। सभी अपने अपने मन की बात ताईजी को बता रहे थे। बैठक का वातावरण कौटुंबिक अपनत्वसे भरा था। सभी महसूस कर रहे थे कि, हम अपनी स्नेहमयी माता के साथ बैठे हैं। औपचारिकता का भाव था ही नहीं। सभी की बातें सुनकर वं. ताईजीने अंत में अपनी बात रखी। उन्होंने कहा कि मैं हिंदी अच्छी तरहसे नहीं बोल सकती, पर

आप मेरे अपने हैं। मेरे मन की बात सहज रूप से समझेंगे। हम सब एक विचार से अपने राष्ट्र का कार्य कर रहे हैं। कभी हमारा **एक दूसरे के साथ मन मुटाव हो सकता है।- दूसरों की बात से हम सहमत नहीं हो सकते हैं। परंतु क्या एक परिवार के भाई बहनों में कभी मन-मुटाव नहीं होता? फिर भी सभी मिलकर परिवार के हित की बात ही सोचते हैं, करते हैं। इसी बात को हमेशा ध्यान में रखे। यह हिंदु समाज हमारा परिवार है। उसके हित की बात का ध्यान रखें। अपने अहं को राष्ट्रहित में बाधक न बनने दें।** वं. ताईजी की सहज स्वानुभव की बात-चीत का प्रभाव सभी के चेहरोंपर स्पष्ट दीख रहा था। सभी प्रसन्न थे। जबलपूर भा. ज. पा. (उस समय जनता दल) के एक पदाधिकारी श्री चिंतामणीजी साहू ने मुझसे कहा कि यह वास्तवमें बहुत अच्छा आयोजन रहा। परिवार के सभी सदस्य अपनी माँ से अपने मन की बात कहें और उनका उचित मार्गदर्शन लेने के लिए एकत्रित आए हों। ऐसा लग रहा था।

ऐसी थी ममतामयी माता वं. ताईजी। उनके अन्त:करणमें स्नेह, प्रेम का अजस्त्र स्रोत बहता रहता था। जिसमें आत्मविभोर होकर सभी उनके हो जाते थे। उनके बताये हुए मार्ग पर अनायास अग्रसर होते थे।

प्रत्येक अधिकारी की एक शाखा हो

वं. ताईजी का जबलपूर आगमन हम सभी को बडा आनंदप्रद लग रहा था। उनके स्नेह को प्राप्त कर सभी आनंदित थे। उनकी सहज कही हुई बात भी सेविकाओं के लिए प्रेरणादायी बन जाती थी। महानगर के विविध दायित्व वहन करने वाली बहनों की बैठक थी। समिति का कार्य कैसे बढाए इसपर विचार विमर्श हो रहा था। वं. ताईजी ने एक बहन से पूछा, क्यों तुम्हारी शाखा कौनसी है? उत्तर मिला मैं इस भाग की शाखा में जाती हूँ। वं. ताईजीने कहा, देखो, प्रत्येक अधिकारी की एक शाखा हो। उस शाखा को आदर्श बनाने का प्रयत्न करना है। देखो यहाँ जितनी अधिकारी बहनें बैठी हैं - वे एक एक शाखा को उत्कृष्ट तरहसे चलाएगी तो शाखाओंकी संख्या बढेगी न? शाखा का स्तर भी अच्छा रहेगा न? किसी एक शाखा में जाना, बैठक लेना यह आवश्यक है। साथ ही आवश्यक है कि एक शाखा की जिम्मेदारी लेकर उसे अच्छी तरह से चलाना। वास्तव में वं. ताईजीने शाखाएँ बढाने का जो मार्ग सुझाया वह कितना व्यावहारिक है।

सौ. कुंदा सहस्रबुद्धे
अ.भा.बौध्दिक कार्यवाहिका

●●●

कर्मयोगिनी

९ मार्च प्रात:काल ५:३० बजे दूरभाष आया। मैं चकित रही। इतने प्रात:काल मुझे कौन फोन कर रहा है? फोन उठाया तो आबा का शब्द सुना। 'ताई नहीं रही।' मैंने कहा 'कौनसी ताई?' आबा कहता है, 'अपनी ताई आपटे' मैं पूना जा रहा हूँ। तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक नहीं है तुम न आना। मैं पांच मिनिट अवाक् हो गयी। आबा क्या कह रहा है? कल तो मुझे ताई का पुणे से पत्र आया था। मैं ने तुरंत फोन उठाया और ताई की पोती सरोज को फोन किया। क्योंकि उनकी बहू उज्ज्वला दिल्ली में सरोज के यहाँ थी। मैंने उज्ज्वला को पूछा, 'उज्ज्वला पुणे से कोई फोन आया? उसने कहा नहीं। मैंने कहा अभी आबा का फोन आया ताई नहीं रही। जो कोई पहली फ्लाईट मिलेगी, पुणे चली जा। मैं नहीं आ सकती।

ताई का और हमारा थत्ते कुटुंबियोंका निकट का संबंध था। मेरा और ताई का प्रथम परिचय आबा के माध्यम से ही हुआ। पहली बार मैं ने जब ताई को उनके पुराने मकान में देखा तो वह गृहिणी अंगीठी के पास बैठकर कुछ कर रही थी। आपसमें बातचीत हुई और उस पहली ही भेंट में मैंने एक बड़ी बहन पायी। और तब से कोई भी सुख दु:ख की बात हो इस बड़ी बहन को पत्र लिखती थी। कई बार मुझे वं. ताईजी के व्यस्त रहने के कारण जवाब नहीं मिलता था। परंतु मैं निश्चिंत रहती कि मेरा सामाजिक कार्य का भार मैं ने ताई पर सौंप दिया है। मेरे पति की मृत्यु के अत्यंत कठिन प्रसंग में सर्वप्रथम मेरे पास पहुँची वह व्यक्ति था ताई आपटे। मेरे सारे परिवार को सांत्वना देते हुए ताईने कहा सिंधुताई, जल्दी ही इस अंधेरे को छोडकर बाहर आ जाओ।

दूसरी एक घटना से मेरे जीवन में कईबार मुझे निराशा घेर लेती थी अर्थात वह सामाजिक कार्य में। मेरी पारिवारिक स्थिति बहुत अच्छी थी। चारों भाई तथा भाभियाँ मुझे

पूर्णत: साथ देती थीं। तो भी एक ऐसा प्रसंग आया कि जिस समय मुझे ताई को ही जाकर मिलना पडा।

जनसंघकी स्थापना हो चुकी थी। स्वतंत्र भारत में चुनाव कठिन परिस्थिति में हो रहे थे। मुझे कहा गया था कि इस परीक्षा की घड़ी में दादर जैसे महत्त्वपूर्ण स्थानपर चुनाव लडने के लिए पक्ष के बड़े व्यक्तिने मेरे ही नाम का सुझाव दिया है। मेरी नौकरी सरकारी थी। घर में बड़े भाई चुनाव के लिए अनुमति नहीं दे रहे थे। मेरे सामने प्रश्न था नौकरी या सामाजिक कार्य? दोनोंमें से क्या चुनूँ? बडे भाईसाहब तो बोलनेके लिए भी तैयार नहीं थे। मैं पुणे दौडी और ताई के सामने मैं ने अपनी द्विधा मनस्थिति प्रकट की - ताई, मैं क्या करूँ? बडे व्यक्ति के शब्द का मान रखूँ या मेरी नौकरी सम्हालूँ? थोडी देर चायपान वगैरह होनेके बाद ताईजीने संयमसे कहा,- 'तुम्हें नौकरी की आवश्यकता नहीं इसलिए बडी बहन के नाते मैं तुम्हें सलाह देती हूँ कि तुम चुनाव में खडी हो जाओ। बडे भाई की नाराजगी थोडी देर की है। परंतु संगठन की यह परीक्षा घडी है। मैं निश्चिंत मन से बम्बई वापस आई। नौकरी छोडी नहीं परंतु चुनाव सभाएँ लेने लगीं। चुनावके दिनों में समिति की बहनों की आलोचना सुननी पडी। परंतु मन में विश्वास था कि ताईजीने मुझे सलाह दी है। इतना आश्वासन मुझे पर्याप्त था। ताईजीका और मेरा स्नेह अधिकाधिक दृढ होता गया। हर प्रसंग में मैं अपने बडे भाईसे विचार विनिमय करती थी वैसे ही अर्थात ताईजी से सलाह लेती थी। मन की आंदोलित स्थिति में कुछ दिन की छुट्टी लेकर मैं सन १९५८ में पंजाब जाने के लिए निकली। यहाँपर भी घर का विरोध, पर ताई का आश्वासन। पंजाबमें नांगल, पठाणकोट इत्यादि स्थानोंपर रा. से. समिति इस नामसे शाखाएँ लगना शुरू हो गया था। पर वह शाखा युवक लेते थे। उस समय के संघ अधिकारियोंको यह भाता नहीं था। और इसलिए मुझपर मा. भैयाजी दाणी जैसे मेरे अतीव निकट के बंधू और पंजाब प्रांत प्रचारक माधवराव मुळे बार बार दबाव डालते थे कि तुझे नौकरी छोडकर पंजाब आना चाहिए। मेरे पास नांगल से बार बार पत्र आ रहे थे। उन पत्रों के जवाब मैंने स्वयं कभी नहीं दिये। मैं पुणे में वह पत्र पुन: प्रेषित करती थी। ताई गृहिणी थी। अत: उनसे सही राय मिलेगी यह विश्वास था। मैं नौकरी छोडना नहीं चाहती थी। उन दिनों वं. मौसीजी अकेलीही प्रवास करती थी। फिरसे ताईने सलाह दी तुम्हारे पीछे कोई जिम्मेवारी नहीं। हम में से कोई भी घर छोडके जा नहीं सकते। इसलिए एक बार प्रत्यक्ष परिस्थिति देखकर तो आओ। वं. मौसीजी का आशीर्वाद तथा समयोचित उपदेश ग्रहण करके मैं चली गयी। सारा निरीक्षण हुआ। पुणे में आकर ताई को सारा निवेदन किया। ऐसा था मेरा और ताईका संबंध। ताई का मार्गदर्शन हमेशा अत्यंत विचारी संयमशील होता था। मेरे गरम स्वभावपर ताईजी हँसती भी थी। और कभी कभी कह भी देती थी कि संगठन में उतर गयी कि अपने आप यह गरमी कम होगी। हुआ भी वैसे ही। संगठन में काम करते करते अपने आप सहनशीलता बढ गई। इस पर घर में तो विनोद होता ही था पर मुख्यत: ताई बडी खुश होती थी। १९६८ में मैं पुणे में ताई को अपने बद्रीनाथ-केदारनाथ की यात्रा का अनुभव सुना रही थी। ताईने सचमुच मेरी बडी बहन अक्का जैसे अत्यंत स्नेहपूर्वक मुझे आशीर्वाद दिया क्योंकि एक बडे गंभीर संकट से मैं तथा मा. प्रमिलताई मेढे बच गये थे। इस प्रवास में वं. मौसीजी की तबीयत बहुत ही बिगडी थी। हम दोनों के अलावा अन्य बहनों के ध्यान में यह स्थिति नहीं आई। पर भगवान की कृपा हुई और मौसीजी फिरसे स्वस्थ हुई यही वह प्रसंग था। प्रतिवर्ष हमारी नागपूर में बैठक होती थी परंतु कभी-कभी ताई नहीं आ सकती थी। तब मन थोडा दुखी होता था। वास्तविक मुझसे बडी वं. मौसी, काकू रानडे सभी होते थे, फिर भी ताई की अनुपस्थिति खटकती थी।

विनम्र शब्दों ने काम कर दिया

सन १९७४ में दिल्ली में अ. भा. सम्मेलन था। उस प्रांत की दृष्टी से मैं अकेली रह गयी थी, क्यों कि बहनें काम करती परंतु बाहर आना जाना या सलाह मशविरा करना इसके लिये मुझे ताई की आवश्यकता थी। ताई और सरस्वती जोशी तुरन्त दिल्ली पहुँच गयी और काम में गति आयी। ऐसी हमारी यह ताई। घर के कर्तव्य निभाते हुए सामाजिक कर्तव्य भी करती रहीं। वं. मौसीजी के पश्चात् अपनी संगठन की धुरा जब ताई के कंधोंपर आ गयी तब उनका आत्मविश्वास अधिक बढ़ा और वे समिति कार्य को प्राथमिकता देती हुई कौटुंबिक कर्तव्यों को भी निभाती रहीं। पंजाब की संघर्षमय परिस्थिति में लुधियाना का १५ दिन का शिबिर हुआ। संख्या बहुत अच्छी आयी थी। ताईजी का साथ था। भयंकर खबरें

आती रहीं। कभी जालंधर में बम गिरे तो कभी अमृतसर के मंदिरपर बम डाले गये। दुर्गा मंदिर के सामने गाय को काटा गया आदि प्रक्षोभक खबरें आती थीं। ताई समाचार- पत्रों को अपने बिस्तर के नीचे दबाती थी ताकि लडकियों में गडबडी ना मचे, वे भयभीत ना हों।

कई बार ताई और मैं मन: स्वास्थ्य के लिये ज्वालापूर में मा. धर्मवीरजी के पास चली जाती थी। ऐसे समय आपस में जो चर्चा होती थी वह संगठन दृढ करने की दृष्टीसे लोकसंग्रह कैसा करे इस पर। रूढ़ीगत धर्मचर्चा यह हमारा कभी भी विषय नहीं रहा। आखिर के दिनों में कई बार ताई को एक चिंता थी कि सिंधूताई कहाँ और कैसी रहेगी? क्योंकि मैं ने घर के सब पाश तोड डाले हैं यह वो अच्छी तरह से जानती थी। आखिर का पत्र भी उनका यही आया था कि मेरा स्वास्थ्य कैसा है? मैं जुनागढ़ बैठक में क्यों नहीं आई? यदि स्वास्थ्य ठीक नहीं है तो मेरा दिल्ली में अकेली रहना ठीक नहीं है। आगे लिखा था तुम चाहे तो पुणे आ सकती हो लेकिन पुणे तुम्हें पसंद नहीं है। नासिक भी रह सकती हो पर मेरी सलाह है कि नागपूर में अहल्या मंदिर में यदि रहोगी तो तुम्हारा मन भी लगा रहेगा और कुछ काम भी करती रहोगी। ऐसी हमारी ताई। सबकी होते हुए भी हर एक की चिंता करते हुए भी परिवार के लोगों को दृढतासे सम्हाले हुए थीं। सच्चे अर्थ से वह कर्मयोगिनी थी। उनका अंत भी कर्म करते करते हुआ। अपने परपोते को कहानी सुनाते सुनाते जो सो गयी वह सो ही गयी। जन्म से अंत तक कर्तव्य निभाती रही। किसी भी परिवार में प्रवेश किस प्रकार से करना है यह सीख मैंने ताईजी से पायी और अनुशासन वं. मौसीजी से!

सिंधुताई फाटक

●●●

ताईजी- एक वात्सल्य रसायन

वं.ताईजी! नाम याद करते ही लगता है उनकी प्रेम-वात्सल्य की अमृतधारा में डूब रही हूँ। बारह वर्ष पूर्व की बात है। हिन्दूपूर में रा.से. समिति का शिबिर था। वं. ताईजी शिबिर में मार्गदर्शन करने के लिए आई थीं। मैं भी उनसे मिलने के लिए बेंगलूर से गयी। रात को सोने का समय आया। पलंग, कंबल, सब की व्यवस्था थी। उस दिन ठंड ज्यादा थी। हम सब काँपती थीं। इतने में ताईजी ने अपनी नौ गजी साडी चार तहों में करके मुझे दी और बोलीं- ''इसको कंबल के साथ जोड दो, अच्छा लगेगा'' वं. ताईजी की साडी का उपयोग मैं ऐसा कैसे करूँ? फिर भी इस प्रलोभन को मैं रोक नहीं सकी और साडी को मैंने ले लिया। नरम कपास के धागे के साथ साथ प्रेम से भरी हुई उस ओढनी से जो सुखद अनुभव मुझे प्राप्त हुआ वह अभी भी अविस्मरणीय है।

अपने सरल व्यक्तित्व, मृदुव्यवहार, सौम्य स्वभाव, निरहंकार भाव के कारण पूरे देश में जो लोग उनके संपर्क में आते थे उन सभी लोगों पर उनके व्यक्तित्व का प्रभाव पडता था।

बेंगलूर में विश्वसंघ शिबिर दिसंबर १९९० में हुआ जिस में वं.ताईजी उपस्थित थीं। विदेशों से कई महिलाएँ आई थीं। उनकी सारी व्यवस्था, शारीरिक और बौद्धिक शिक्षण देने की जिम्मेदारी समिति ने ही उठाई। वं. ताईजी के मार्गदर्शन के कारण एकत्रित सभी महिलाएँ आश्चर्यचकित थीं और बोलीं- भारत के इतने बडे संगठन की नेता इतनी सरल है- थोडी भी दिखावट नहीं- यह बात हमें बाहर के देशों में देखने को नहीं मिलती है।

ताईजी एक अद्भुत वात्सल्य रसायन थी। जब मैं उनके पास बैठती थी तब मुझे लगता था श्री रामकृष्ण परमहंस जी की पत्नी शारदा माता जी और वं. ताईजी में कितना साम्य है। बोलना कम, केवल अपने आचरण से सबको मार्गदर्शन देना इतना शान्त, जब हम उनके सामने बैठती थीं मन की शंका, अशांतता सब मिट जाती थी- माता के आश्रय में जैसा बच्चा निर्भय रहता है वैसी स्थिति हमारी भी होती थी।

हम सब कार्यकर्ता बहनें उनके सामने बैठकर रागिति कार्य करते समय जो कठिनाई आती थी उनके बारे में प्रश्न पूछती थीं, चर्चा करती थीं। उनके उत्तर से हमें समाधान प्राप्त होता था। केवल सामिप्य से, सहवास से मन की चंचलता दूर होती थी।

कृ. रुक्मिणी, सहकार्यवाहिका

●●●

सेवा यही साधना

वं.मौसीजी से समिति कार्य करते समय जैसा संबंध आया वैसे ही वं. ताईजी के साथ भी। ताईजी के साथ प्रवास भी हुआ और घर में, बैठक के समय विचारविमर्श होता था- ऐसे ही क्षण महत्त्व के होते हैं जब कि व्यक्तिविशेष ध्यान में आते हैं-

एक व्यक्ति संस्कारों के बाद या इस विचारधारा से संपर्क होने के कारण कैसा असामान्य कर्तृत्व कर सकता है यह समिति के कार्य पद्धति का एक वैशिष्ट्य है। वं. मौसीजी हमेशा बताती थीं। चित्र, वस्त्र, क्षेत्र, और पात्र का घर में आनेवाले व्यक्ति पर असर होता था। वं. ताईजी का घर इसका साक्षात् उदाहरण था। ताईजी के घर के प्रति अपनत्व का भाव और भोजन की तारीफ आज भी सुनायी देती है। ताईजी के व्यवहार में औपचारिकता, कृत्रिमता नहीं थी। उनकी स्मरणशक्ति बहुत तेज़ थी। असंख्य लोगों के नाम, पते सब उन्हें याद रहते- और हमेशा उनके संदर्भ में बातचीत करती थीं। पुणे का तो चप्पा-चप्पा आपको पता था। मानों आप पुणे की डायरी थीं, संदर्भ ग्रंथ थीं। तिलकजी के काल से लेकर अद्यावत् घटनाओं की आप साक्षी थीं।

ताईजी की भक्ति का स्वरूप सर्वसाधारण व्यक्ति से थोडा असाधारण था। भगवद्ध्वज ही सर्वरूपेण वह गुरू मानती थी। अत: समिति कार्यद्वारा जनसेवा ही सर्वमान्य मार्ग ऐसी आपकी श्रद्धा थीं। मोक्ष के लिये भजन-पूजन से भी सेवाकार्य में हाथ बँटाना आप अधिक पसंद करती थीं।

जगत ईशधीयुक्त सेवनम्
अष्टमूर्ति भृद्वेव पूजनम्

इसी पद्धती से जनसेवा में ही आपने ईश्वरसेवा की थी। समिति के तत्त्वज्ञान प्रचारार्थ सर्वस्वार्पण यही आपका ईप्सित था और सर्वार्थ से आप इसी में यशस्विनी ही हुईं। यही हम सब सेविकाओं के अंत:करण में विराजमान रहेगा।

प्रमिला मुंजे

●●●

सेविकाओं से मिलना- यही मेरा विश्राम है

वं. ताईजी का व्यक्तित्व अनोखा ही था। जब से मैं उन्हें देख रही हूँ एक तरह का आकर्षण मेरे मन में था। पुणे शहर का कार्य जिस एक अनुशासन से चल रहा है, वह देखने मन में इच्छा थी 'पुणे' में रहकर काम करने की। अवसर मिलते ही पुणे में दो वर्ष विस्तारिका के रूप में कार्य किया। वं. ताईजी के साथ प्रवास में जाने का भी सौभाग्य प्राप्त हुआ। प्रवास में अन्यान्य विषयोंपर बातचीत होती रहती थी, उनके साथ रहने में बडा आनंद था।

वं. ताईजी कहती थीं- मैं थोड़ीसी अलग थी पुणे के स्वभाव की। परंतु जैसे जैसे वं. मौसीजी के सहवास में आयी, मेरे भाव बदलते गये, जो कुछ है वह सबका यह संस्कार दृढ होता गया। यह मेरा, यह तेरा या अन्य गाँव का ऐसी कभी भी कल्पना उनके मन को स्पर्श नहीं करती। जो है वह हम सबका अपना- यही उनका स्थायी भाव था। वह मैंने भी अपना लिया। वं. ताईजी को सब सेविकाओं के प्रति बडा अपनापन था। प्रवास क्रम में कहीं भी मैं थकी हूँ, बाद में मिलने के लिये आइये ऐसा कभी न कहती 'विश्राम तो मैं समय मिलते ही कर लूँगी। कल थोडे ये लोग मुझे मिलनेवाले हैं। इन बहनों को मिलने में जो खुशी मिलती है वह और किसी में नहीं है। वही मेरा विश्राम है।'

सामनेवालों का शांति से सुनना, समझ लेना यह उनकी कला थी।

ताई मानसम्मान से हमेशा कोसों दूर थीं। वे ७५ वर्ष की हुई तब हमने एक कार्यक्रम की योजना की। ताईजी को भनक लग गयी। किसी सम्मान के लिये वे तैयार नहीं थी। हम वं. ताईजी के घर गये, उनको बताया कि सभी सेविकाओं के लिये एक कार्यक्रम तय किया है। आप भी एक सेविका के नाते उस में उपस्थित रहें ऐसी प्रार्थना करने हम आये हैं, जरूर आइयेगा। हमेशा जैसी उषाताई आपको लेने के लिये आएगी।

वं. ताईजी ना नहीं कह सकीं। वे बोलीं, 'आप लोग बडे चतुर हैं'।

एक समय पुणे में ही वर्ग था। सभी लोग समापन कार्यक्रम की तैयारी में थे। उसी समय अतीव वृद्ध गृहस्थ आए- 'यहाँ की प्रमुख कौन है, मुझे उनसे मिलना है।' हम बकुलताई को खोज रहे थे उसी समय वं. ताईजी

वहाँ पहुँची।

'अरे, विद्वांस की तापी हो क्या?' हम उपस्थित एकदम चौंक गये।

'हाँ, मैं तापी हूँ'- ताईजी ने उन्हें प्रणाम करते हुए कहा। ताईजी ने उन्हें बिठाया। उनसे बातचीत की। बातों बातों में तथा हम सब लोगों के व्यवहार से उन्हें ताईजी के पद का पता चला।

'तापी तुम कितनी बडी हो गयी' वे भाव गद्‌गद् हो उठे। 'आप लोगों के कारण' वं. ताईजी ने कहा। हमें उन्हें रिक्षा तक पहुँचाने के लिये बताया। वे उनके प्राथमिक विद्यालय के शिक्षक थे।

भारती बंबावाले, निधी कार्यवाहिका

●●●

यादें रहीं अब शेष

सामान्यत: १९३६ की जनवरी में मेरी सहेली कलावती के साथ मैं प्रथमत: वं. ताईजी के यहाँ गयी। हम दोनों भावे स्कूल में पढती थीं। शनिवार का दिन था। ताईजी की दो बहनें गंगू और सिंधु, मधुमती तांबे, मंदा लोंढे पहले से ही वहाँ उपस्थित थीं। वे पाँच और हम दो सात व्यक्ति- चर्चा प्रारंभ हुई हिंदुओं का, महिलाओं का संगठन- दूसरे शनिवार को भी इसी तरह कार्यक्रम हुआ- बडा मजा आया। निकलते समय ताईजीने कहा, 'मै बुलाऊंगी तब जरूर आना'- आगे चलकर मई माह में मैंने महाराष्ट्र मंडल का वर्ग लिया। लाठी, योगचाप, छुरिका का प्रशिक्षण लिया। इधर जून में समिति की शाखा मैदान में प्रारंभ हुई और ताईजीने मुझे बुलाया। मैं दौडते हुए ताईजी के यहाँ पहुँची- विनायकरावजी से मेरा परिचय करा दिया- मैंने कहा मेरी बहुत शंकाएँ हैं। 'पूछो बेटे, हम दोनों उसके उत्तर देंगे' विनायकरावजी ने कहा। एक ओर हिंदुत्व का अभिमान और दूसरी ओर साम्यवादी विचारधारा के शिक्षक मेरे मस्तिष्क में शंकाकुशंकाओं का तांडव चलता था। दोनों ने भी मेरी कुशंकाएँ दूर कर मेरा समाधान किया। (उन दोनों की सरल-सहज उत्तर देने की पद्धति मुझे आश्चर्यकारक लगी- अद्‌भुत लगी।) दूसरे शनिवार भी मैं ताईजी के यहाँ गयी- सीढियों में बैठकर ही दो ढाई घंटा प्रश्नोत्तर होते रहे। उसके बाद में मानो क्रम ही बन गया। विनायकरावजी कोर्ट से आने के समय मैं वहाँ पहुँचती थी। हमारे प्रश्नोत्तर चर्चा होती थी- उसी चर्चा में समिति की सेविका यह मेरी नींव डाली गयी। उन दोनों ने मेरे व्यक्तित्व को आकार दिया- शाखा कार्यवाहिका का भार सौंपा गया।

१९३७ में वं. मौसीजी पुणे आयीं। ताईजी के यहाँ शाखा हुई। वं. ताईजी के यहाँ श्रेष्ठ महानुभावों का आना जाना रहता था। ताईजी उन्हें शाखा पर ले आती थी। डॉ. हेडगेवार, प. पू. गुरूजी, काका लिमये आदि। ताईजी एकत्रिकरण के सभी कार्यक्रमों में स्वयं उपस्थित रहती अत: अभिभावकों में विश्वास था। धीरे धीरे ताईजी ने मुझे बौद्धिक कार्यवाहिका का दायित्व दिया। उस समय एक बडी मजेदार बात हुई। एक दिन मैं ताईजी के यहाँ गयी तो ताईजी का बेटा वसंत कहने लगा 'बोका आया (मराठी में बोका याने बिल्ला) दूसरे दिन भी यही हुआ- 'बोका आया, बोका आया' मैं इधर उधर देखने लगी। ताईजी और वसंत हँस पडे। बाद में पता चला बोका यह बौद्धिक कार्यवाहिका का विनोद है।

ताई, सिंधुताई केतकर, जिजी केतकर (कोशकार ग.वि.केतकरजी की पत्नी) कौमुदी जोशी, ताई आगाशे और मैं ऐसा गुट सक्रिय था। ताईजी की ओर धीरे धीरे कुलाबा जिला भी दे दिया। ताईजी मुझे भी साथ साथ ले जाती। मेरे पिताजी की अनुमति लेने वे स्वयं आयी थीं। पेण पनवेल में जब हम पहली बार गईं तो सुबह शाम चावल ही चावल। मुझे केवल चावल खाने की आदत नहीं थी। मेरी घुटन ताईजी के ध्यान में आयी। उन्होंने किसी से कहकर चावल की रोटी मुझे परोसी- मुझे आश्चर्य भी लगा और अटपटासा भी- ताईजी ने कहा आज के दिन खा लो। इस तरह अपने कार्यकर्ता की छोटी छोटी बातों का वे ध्यान रखती थीं।

ताईजी घर का सभी काम स्वयं करती थीं। मैं नित्य उनके यहाँ जाती थी तब काम करते करते ही वे मुझसे चर्चा करती, मार्गदर्शन करती। इन सबका अमिट प्रभाव मेरे मन पर हुआ। थोडे में घर गृहस्थी सुचारू रूप में करने की शिक्षा मैंने ताईजी से ही ग्रहण की। अपनी स्वयं की आमदनी कम होते हुए भी अन्यों को आर्थिक मदद करना उनका प्रण था।

धीरे धीरे ताईजी की जिम्मेदारियाँ बढती गयीं। ताईजी

प्रमुख कार्यवाहिका बनीं। तत्पश्चात् प्रमुख संचालिका। मेरे पास महाराष्ट्र प्रांत का दायित्व था। विस्तारिका- प्रचारिकाओं की योजना को ताईजी ने भरसक प्रोत्साहन दिया। मार्गदर्शन किया। ताईजी के अमृतमहोत्सव के १० कार्यक्रम महाराष्ट्र में हुए- वैसे ही महाराष्ट्र प्रांत का एक सम्मेलन पुणे में हुआ। दो हजार तरूण सेविकाओं का पथसंचलन देखकर ताईजी प्रसन्न हुईं। फुलों के कालीन बिछाकर ताईजी को हम ध्वजस्थान तक ले गये- इस तरह के सम्मान उनको पसंद नहीं थे परंतु शनिवार वाडा के सामने रंगोली वहाँ ध्वज लगा है यह दृश्य उन्हें अतीव भाया उनकी एक आकांक्षा अंशत: पूरी हुई।

ताईजी का देहांत हुआ उस समय मैं विदेश में थी। वहीं उनका मुझे लंडन जाने के लिये पत्र आया। उस समय यह पता नहीं था कि यह ताईजी का पत्र अंतिम पत्र है। थोडे ही दिनों में ताईजी को श्रद्धांजलि अर्पण करने का प्रसंग आया।

न्यूजर्सी और लंडन दोनों स्थानों पर ताईजी के श्रद्धांजलि के कार्यक्रम हुए। एक अत्यंत तेजस्वी व्यक्तित्व जिस में ध्येय की प्रखरता थी और कार्यकर्ता के लिये चंद्रमा जैसी शीतलता। पर अब वह सदा सदा के लिये पार्थिव रूप से अस्तंगत हो गया। अब शेष है वेदना ही वेदना और कार्य की प्रेरणा।

बकुळ देवकुळे

● ● ●

जीवन का सहारा

सन् १९७८ में आंध्रप्रांत के हैद्राबाद में सम्मेलन था। सम्मेलन के दो-तीन दिन पूर्व अन्य गावों से ३०-४० सेविकाएँ आने की सूचना अचानक ही प्राप्त हुई। रसोई व्यवस्था के लिये नियुक्त महिलाको कुछ आपत्तीवश घर लौटना पडा। हम सब लोग कुछ न कुछ व्यवस्था के लिये बाहर गये थे। घर में वं. ताईजी और एक प्रबंधिका थी। हमारे घर लौटने तक ताईजी ने स्वयं भोजन बनाकर रखा, नया घर, मुझे जानकारी नहीं ऐसा तनिक भी विचार उन्होंने नहीं किया न अपने अधिकार का। वे निरंतर कार्यरत थीं मानों उत्साह नीर का पान उन्होंने किया था।

ताईजी के साथ बातचीत के दौरान निराशा दूरदूर भागती। उनके शब्द सादे ही रहते परंतु हममें उत्साह के हिलोरे निर्माण करते। अपना उठाया हुआ कदम न रूके, न पीछे ले वे आगे ही बढ़ते रहें ऐसा भाव जागृत होता। नये नये रास्ते निकालकर कार्य बढाना है- यह चाह निर्माण होती। उनके स्पर्श से बड़ा सहयोग, सहारा, अपनत्व मिलता था। ताईजी हमारी अपनी थी बस इसी अनुभूति के सहारे जीवन व्यतीत करना है- आगे की समिति कार्य की राह चलनी है।

माई अफझुलपूरकर, हैद्राबाद

● ● ●

"तुम कहाँ पर खो गई हो"

छोड़कर पगचिन्ह अपने, तुम कहाँ पर खो गई हो ?
शस्य श्यामल इस धरा की, गोद में क्यों सो गई हो ?
ईश अर्पित हो गई हो ॥ धृति ॥

वेदना का भाव उर में, मौन धरणी रो रही है
हैं व्यथित नभ, दश - दिशायें, पुष्प वर्षा हो रही है
हो समाधिस्थे ! जगत् तज, साधनामय हो गई हो
छोड़कर पगचिन्ह अपने ॥ १ ॥

अग्नि की उठती शिखाएँ, दग्ध क्या तन कर सकेंगी
कोटि हृदयों में विराजित, मूर्ति तव जीवित रहेगी
हे तपस्विनि ! शान्त - प्राणा, भावनामय हो गई हो
छोड़कर पगचिन्ह अपने ॥ २ ॥

मानवी थी देह, अनुपम ध्येय जीवन में सदा था
सत्य, सेवा और समर्पण, प्यार जनजन में बिछा था
निज करों से स्नेह बाँधे, संगठन - मणि पो गई हो
छोड़कर पगचिन्ह अपने ॥ ३ ॥

राष्ट्र - सेवा में निरत हम, बढ़ चलें पग चिन्ह लिखकर
स्वप्न तव साकार कर दें स्वार्थ, माया, मोह तजकर
पल्लवित, पुष्पित, फलित हो, बीज तुम जो बो गई हो
छोड़कर पगचिन्ह अपने ॥ ४ ॥

शरद

● ● ●

कुछ यादें

वं. ताईजी कहीं भी गईं तो निष्क्रिय नहीं बैठ सकती थीं। नागपुर आते समय कार्यालय के लिये चेन, डायरी, अन्य चीजों के साथ अद्रक की बरफी भी लाती थी। आने के बाद, गोपाल (अहल्या मंदिर का कर्मचारी) से लेकर सभी की पूछताछ होती थी। देवपूजा, दही बिलोना, ये काम वे ही करती थीं। कुछ काम आप मत करें ऐसा बोलने पर कहती थीं प्रमुख संचालिका, मैं केवल शाखा के मैदान पर, यहाँ घर में नहीं। सब मिलकर बात करते करते काम हो जायेगा। एक समय दो काम करने का पाठ भी उन्होंने ही पढ़ाया। बौद्धिक के माध्यम से नहीं व्यवहार से। दूरभाष पर बात करते करते उसकी सफाई भी दूसरे हाथ से करती थी। अनौपचारिक बात करते करते राखियाँ तैयार कर लेती थीं। लगता है समिति के पास पूर्णकालीन कार्यकर्ताओंकी कमी होने के कारण घर परिवार का कर्तव्य, प्रसंगवशात् आर्थिक सहयोग, इसमें से समय निकालकर समिति का काम करनेवाली अनेक महिलाएँ गृहिणी अर्थार्जन करनेवाली स्त्री, सेविका, ऐसी विविध भूमिकाएँ निभाते हुए वह आगे बढती है। दायित्व निभाती हुई उठकर खडी रहती है। दिनदर्शिका जैसा कोई प्रकाशन सालोसाल करती रहती है, इसका मर्म, उस पर हुए, इस प्रकार के संस्कार। मथुरा के ग्वालिन जैसी, हाथ से कुछ भी काम करें मन में अखंड स्मरण रहता था गोपाल का। वैसेही उनके हाथ किसी भी काम में व्यस्त हो जाते परंतु ध्यान समिति कार्य पर ही केंद्रित होता है। हमारी प्रमुख संचालिका ने हमें दी हुई यह बालघूँटी। एक भी क्षण व्यर्थ नहीं जाने देने का जीवनसूत्र।

'मैं' का विस्मरण

मैं 'मी' का विस्मरण यही वं. ताईजी का जीवन विशेष। अहं आवाम् ये शब्द उनके शब्दकोश में नहीं थे। था केवल वयम् का भाव। केवल उनका नहीं पूरे परिवार का यह और विशेष।

वं. ताईजी का उत्साह असीम था। उनके काले काले बाल ठीक ठीक वेषभूषा के कारण उनकी आयु ८४ साल की है यह कोई मानता नहीं था। इसीलिये प्रमिलताई कहती थी - Taiji eighty four years old? No,no eighty four years young. अभी अभी तक उनका व्यक्तित्व ऐसाही था। प्रवास में ऊपरवालेबर्थ पर सोने की उनकी तैयारी थी। कलकत्ता बैठक के पश्चात पुरी में जगन्नाथ दर्शन कर हम भाग्यनगर मार्ग से पुणे जानेवाले थे। परंतु विकाराबाद के पास दुर्घटना होने के कारण भाग्यनगर पुणे गाडी रद की गयी। दूसरे दिन गाडियाँ चलीं परंतु उनमें प्रचंड भीड। काका ब्रह्मपूरकरजीने बहुत प्रयास किये परंतु आरक्षण नहीं मिला। वहाँ अधिक समय रहने के लिये वं. ताईजी तैयार नहीं थी। आखिर हम गाडी में चढे-रास्ते में हमें एक बर्थ मिला। वह तो हमने ले लिया, परंतु सहप्रवासी नीचेवाला बर्थ देने के लिये राजी नहीं हुए। वं. ताईजी ने कहा - ''क्यों परेशान होती हो! मैं ऊपर चढ जाऊँगी, फिर भी मैंने और लोगोंसे बात की और नीचेवाला बर्थ मिल गया। दूसरे दिन प्रातः काल नीचे उतर आयीं, चाय कॉफी के लिये, तो देखा, कल बर्थ न देनेवाले व्यक्ति के साथ ताईजी का हास्य विनोद चल रहा था। उसका स्टेशन आने पर वह उतर गया परंतु बार बार क्षमा माँगते हुए। ऐसे कई अनुभव हैं

दिलखुलास व्यक्तित्व

बैठक या अन्य विशेष कार्यक्रमों के समय वं. ताईजी नागपुर आती थीं। उनके आने पर अहल्या मंदिर में नयी चेतना संचरती थी। उनको प्रमुख संचालिका पद का तनाव नहीं रहता था। एक के पीछे एक बैठकों की धमाल होती थी। देवी अहल्याबाई स्मारक समिति, श्रीशक्तिपीठ, रानी लक्ष्मीबाई भजन मंडल, भारतीय श्री विद्यानिकेतन, नागपुर कार्यकारिणी, सायंशाखा आदि आदि। बैठक समाप्ति के पश्चात् वातावरण बहुतही अनौपचारिक हँसी मजाक की बातचीत का होता था। सुबह कोई ना कोई मिलने आता था, या ताईजी कहीं जाती थीं। सुखदुख की इस भेंट हेतु श्री ताई घटाटे, हरिभाऊ माणके, वत्सलाताई चोलकर आदि घरों में जाना निश्चित था। कुछ घरों में भोजन का भी निमंत्रण होता था। कभी मुझे मजाक से पूछती थीं आज कहाँ जाना है पुडी को? ''ऐसी मजाक करना उनको बहुत भाता था। प्रमिलाताई मेढे को हेडमास्तर, मुझे रिगमास्तर कहा करती थीं। उनकी रहनसहन नितांत सादगीपूर्ण थी। कभीभी भडकीला वेष उन्होंने नहीं किया। एक बार उनको और प्रमिलाताई को कहीं जाना था, प्रमिलाताई ने कहा, ''ताईजी यह साडी पहनिये ना!'' हम यह भूल भी गये थे। परंतु वं. ताईजी जब जब नागपुर आती थीं, बैठक आदि के बाद फुरसद मिलती थी, तब उनकी विनोद वृत्ति ऊपर उठती थी। कुछ करना, कहीं जाना है तो बोलती थी, ''रुकिये, रुकिये, हमारे हेडमास्तर को पूछने दो'' और हँसी के फव्वारे छूटते थे।

चित्रा

स्मृतियों की पावनसरिता

डॉ. स्वर्णलता भिशीकर, सौ. सुमती सुकळीकर, वीणाताई हरदास,
विद्या पांडे, मृदुला सिन्हा, स्वाती शहाणे,
सौ. सुशिला आठवले, गौरीबाला, उषालता रावत.

उनका ममत्व उनके पैरों के चक्के बनकर उन्हें घुमाता था।

नोबेल पारितोषिक विजेता एक लेखिका के बारे में यह प्रसिद्ध है कि जब इस पारितोषिक की घोषणा हुई तो उनका नाम विजेता के रूप में घोषित हुआ, पत्रकारों की भीड उनके घर इकट्ठा हो गयी। वे शांति से घर से बाहर आईं और पत्रकारों से कहा- 'क्षमा करना, मैं अभी आपको समय नहीं दे सकती, मेरे छोटे बच्चे भोजन कर रहे हैं, बाद में उन्हें सुलाना है। आपकी भेटवार्ता से मेरा यह दैनंदिन काम अधिक महत्त्वपूर्ण है।'

इस अनपेक्षित उत्तर को सुनकर पत्रकार आश्चर्य-चकित हो गये, कुछ बोल न सके, वापिस लौट गये, वं. ताईजी के बारे में लिखते समय इस बात का स्मरण अनायास ही हो गया। कुछ लोग हिंदुत्व के लिये राजनैतिक मोर्चा सम्हाले हुए हैं, कुछ लोग हिंदुओं की सामाजिक एकता के लिये कार्यरत हैं, तो कुछ हिंदु अध्यात्म का ध्वज फहराते हुए विश्व में घूम रहे हैं। परंतु संपूर्ण हिंदु समाज की ओर अत्यंत प्रेममयी दृष्टि से देखनेवाला, हिंदु स्त्री-पुरुषों को माँ भगवती की ममता देनेवाला मातृहृदय एक ही है - वह अर्थात् राष्ट्रसेविका समिति की प्रमुख संचालिका वंदनीया सरस्वतीबाई आपटे अर्थात् वंदनीया ताईजी।

ज्ञान-प्रबोधिनी के संचालक डॉ. अप्पाजी पेंडसे वं. ताईजी के बारे में हमेशा बताते रहते। उनके बताने में वं. ताईजी का पुत्र- वात्सल्य, अपनत्व, स्वयंसेवकों को उनका घर अपना घर महसूस होना आदि बातों का उल्लेख रहता ही था। इस कारण उनको मिलने की उत्सुकता मन में निर्माण हुई। वैसे कभी कभी बातचीत हुई थी। परंतु एक बार उनके घर मिलने के लिये जाने का सुअवसर प्राप्त हुआ। दो सेविकाएँ उनके पास पहले से ही बैठी थीं। वे दसवीं-ग्यारहवीं में पढनेवाली बालिकाएँ थीं। वं. ताईजी ने बडे मनोयोग से सब हाल पूछा। उन्हें खाने के लिये कुछ दिया। दोनों सेविकाओं ने वं. ताईजी को प्रणाम किया और बिदा ली। तभी एक महाविद्यालय में पढ़नेवाली सेविका आयी। हाल ही में मध्य प्रदेश में जो शिबिर हुआ था उसका अहवाल बताने। वं. ताईजी ने मुझसे कहा तुम्हें समय हो तो रूको, उसकी बातें सुनेंगे। उस सेविका का सविस्तर बताना और उसे प्रोत्साहित कर ताईजी का शांतरूप से सुनना यही वं. ताईजी के व्यक्तित्व की विशेषता। वं. ताईजी बोलती कम हैं अपने व्यवहार से ही वे आदर्श सम्मुख रखती हैं। वं. ताईजी की कार्य पद्धति उनके व्यवहार से प्रकट होती थी। उनकी अहंकार शून्यता उनके स्वभाव का माधुर्य और समिति कार्य के लिये पूर्ण समर्पण उनके व्यवहार से प्रतीत होता था। सैंकडों भाषणों से जो संस्कार नहीं हो सकते वे संस्कार उनके मधुर व्यवहार और उनके समर्पण से होते थे। संघ और समिति के वातावरण में ये अनुभव आता है- स्पर्धा नहीं, सहकार्य, आत्मगौरव नहीं आत्मसमर्पण। वं. मौसीजी के निधन के बाद वं. ताईजी समिति की प्रमुख संचालिका बनी- सहज तरह से यह जिम्मेदारी उन्होंने अत्यंत लीनता से स्वीकार की। स्पर्धा के इस जमाने में यह बात अद्‌भुत प्रतीत होती है।

व्यवहार में सादगी, विचारों में श्रेष्ठता

जिस संगठन की पूरे भारत में हजारों सेविकाएँ हों उस संगठन की प्रमुख, सादी सफेद नौगजी साडी पहनती हो यह बात गांधीयुग में ही शोभा देती। पिछडों के मसीहा, मजदूरों के नेता को भी इतनी सादगी रास

नही आती। अनुयायियोंको हमारा नेता हम में से ही है, सच्चे अर्थ में हमारी अस्मिता प्रकट करनेवाला है परंतु हमसे कहीं श्रेष्ठ हो यह एहसास हो तभी नेता यशस्वी होता है। समिति की सेविकाओं के मन में वं. ताईजी के लिये जो प्रेम और आदर है, उसका कारण यही है कि उनका नेतृत्व उपरोक्त प्रकार का है।

एक बार वं. ताईजी वीरमती शाखा में अपने दक्षिण भारत के दौरे का वर्णन कर रही थी। मैंने वह सुना है। ३०-४० बहनें शिबिर में आयी थीं। दक्षिण भारत की उस तनावग्रस्त परिस्थिति में हिंदु संगठन का महत्व लोगों को समझ में आ रहा था। पुरुषों को भी लग रहा है कि हमारे घर की महिलाओं ने जागृत होना चाहिए, संगठित होना चाहिए। ऐसी परिस्थिति में. वं. ताईजी वहाँ पहुँची। वं. ताईजी को कन्नड नहीं आती थी। दुभाषिये की मदद से बातें हो रही थीं, बातें बहुत सामान्य, पर मन पर असर करनेवाली- बहुत ही अपनत्व की। जिनके घर वं. ताईजी ठहरी थीं, उनके लिये तो त्यौहार ही था। वं. ताईजी के लिये विशेष रूप से बनाये हुए व्यंजन वे आनन्द से खा रही थीं। उस घर के यजमान का नाम था 'पर्वतराव' परंतु वे थे दुबले पतले। वं. ताईजी उनका मजाक भी करती थीं। सभी से खुले दिल से बातचीत कर रही थीं। तब ऐसी ही प्रसन्नता हो रही थी जैसे माँ के साथ बातें करने में होती है। ऐसेही अनेक भाई-बहन स्थान स्थान पर शिबिर ले रहे थे। हैदराबाद के समान महानगर में प्रचंड जनसमुदाय वं. ताईजी पर पुष्पवृष्टि कर रहा था। सस्य-श्यामला हिंदुभूमि मानो वं. ताईजी के सस्मित वदन से अभय देते हुए चल रही हो- कितना विलक्षण दृश्य होगा वह।

यही माँ अपने स्वागत समारोह-सत्कार समारोह भूलकर, अल्पसंख्यकों द्वारा पीडित दूर सीमापर विस्थापित अपनी बेटियों को अपने आँचल में समा लेती है, उनके आँसू पोछती है, उनके हाथ में रांगठन रूपी वज्र-शस्त्र देती है और कहती है रोने से काम नहीं होगा। हमारी प्रार्थना में क्या कहा है उसका स्मरण करो।

समुत्पाद्यास्मासुशक्तिं सुदित्यां।
दुराचार दुर्वृत्ति-विघ्नंसिनीम्॥
पिता पुत्र भ्रातृंश्च भर्तारनेवम्।
सुमार्गं प्रति प्रेरयन्ती मिह॥

सभी दुराचार और दुष्प्रवृत्तियों को नष्ट करने के लिये, हे जगदंब, हमें दिव्य शक्ति दो। पिता-पुत्र-भाई-पति इन्हें कर्तव्य पथ पर चलने की प्रेरणा हम बहनों से मिले ऐसा करो। वं. ताईजी का स्नेहमय हाथ पीठ पर फिरते ही बेटियों को धीरज आ जाता है। जिस हाथ में चूडियाँ रहती हैं उस हाथ में आत्मरक्षणार्थ तलवार पकडने का सामर्थ्य आ जाता है, संकटों पर मात करने का साहस आ जाता है।

पर माँ केवल बेटियों की ही नहीं होती वह तो बेटों की भी होती है। इसी कारण दक्षिण भारत के दौरे में वं. ताईजी के शब्द स्त्री-पुरुष सभी ने बड़े ध्यान से सुने। उन्हें प्रणाम कर उनके चरणों पर सिर रखते हमें सभी को शांति मिली है। **असम से लेकर कन्याकुमारी तक जिसके पुत्र पुत्रियाँ हैं उस माता के सौभाग्य का वर्णन कौन कर सकता है? उसके पैर थकते होंगे पर उसका ममत्व पैरों के चक्के बनकर उसको घुमाता होगा। सभी की थकावट दूर करने का, सभी की सेवा करने का व्रत ही लिया है इस माँ ने। व्रत क्या यह तो उसका स्वभाव ही है।**

जब तक हिंदुत्व का यह मातृहृदय जागृत है तब तक हिंदुत्व यशवन्त रहेगा, जयवन्त रहेगा ही।

डॉ. स्वर्णलता भिशिकर
ज्ञानप्रबोधिनी - सोलापुर

●●●

मेरी शाल गुजर गयी

कार्यकर्ता के लिये आवश्यक, ऐसा नवनवीन ग्रहण करने की उनकी तैयारी रहती थी। बहुत साल पहले की बात है- एक बार वह दिल्ली गयी। वह हिंदी भाषी-प्रांत- ताईजी शुद्ध मराठी भाषी पुणे की। कभी कभी सहज विनोद हो जाता था। एक बार उनकी शाल कहीं खो गयी। सभी के बीच में ताईजी ने घोषणा की- मेरी काली शाल गुजर गयी है- कोई खोज कर मुझे दो। प्रथम तो किसीके ध्यान में नहीं आया। फिर सभी एकदम हँस पडीं। वं. ताईजी को बताने के बाद वह भी हँसी में सम्मिलित हुई। परंतु उसके बाद उन्होंने हिंदी का अभ्यास किया- शुद्ध हिंदी बोलने लगीं। और १९८४ में जब वे पुनः ग्वालियर पधारी तब उन्होंने शुद्ध हिंदी में भाषण दिया। मसुराश्रम के ज्येष्ठ कार्यकर्ता बॅ. विश्वनाथजी ने उनका भाषण सुनकर कहा था कि ताईजी इतनी अच्छी हिंदी बोलती है यह उन्हें पता नहीं था।

वह स्नेहिल स्पर्श

सन १९५९-६० की घटना होगी। मैं जनसंघ के कार्य हेतु पुणे गई थी। उस समय वं. ताईजी आपटे से मेरा प्रत्यक्ष परिचय हुआ। मैं उनके घर उनसे मिलने गई थी। उनकी सादगी, सात्विकता व स्नेहपूर्ण बातों से उनके व्यक्तित्व से मैं प्रभावित हो गई थी। राष्ट्रसेविका समिति की प्रमुख अधिकारी इतनी सीधी, सादी व सरल होगी इसकी मुझे कल्पना भी नहीं थी। बाह्यरूप से इतनी सादगीपूर्ण व्यक्तित्व की धनी ताईजी वास्तव में कितनी दृढनिश्चयी, संगठन कुशल थी इसका अनुमान उनकी जीवनभर की कठोर तपस्या से सहज लगाया जा सकता है। स्वयंसेविकाओं और परिवार के सभी सदस्यों पर उन्होंने जो ममता बिखेरी है उसे मैं कभी भूल नहीं सकती। इसी व्यवहार को देखकर उनके अनोखे नेतृत्व का परिचय हुआ।

१९७५ में इंदिराजी ने आपातकाल घोषित किया और मीसा के अंतर्गत अनेक लोगों को कैद किया। इनमें मैं और हमारे कार्यकर्ता थे। हमें येरवडा जेल में रखा गया था। अमरावती, वर्धा, नागपूर इत्यादि विदर्भ के अनेक स्थानों से कार्यकर्ता, महिलाएँ कैद की गई थीं। घर से, बचोंसे दूर, पास में पैसे नहीं थे, एक जोडी कपडों की ऐसी अवस्था थी। वंदनीया ताईजी के आदेशानुसार पुणे की महिलाओं ने हमारी हर प्रकार से सहायता की व जेल में हमारा रहना सुसह्य किया। व्यक्तिशः मेरे विषय में जो याद मैं बताने जा रही हूँ वह तो हृदय को छू लेनेवाली है। मेरे पति मुझसे मिलने आ रहे थे, परंतु बंबई में ही उन्हें दिल का दौरा पडा। यह सुनकर मुझे तीव्र स्वरुप का हार्ट-अॅटॅक आया। पुणे के ससून अस्पताल में मुझे अतिदक्षता विभाग में रखा गया। तीन बेटे थे, बहू थी। पर परिस्थितिवश कोई भी मिलने नहीं आ सकता था, क्यों कि एक बेटा विदेश में, दूसरे बेटे की पत्नी का प्रसूति समय निकट और तीसरे बेटे को रोज पुलिस स्टेशन पर हाजिरी लगाने जाना पडता था। ऊपरसे अतिदक्षता विभाग में किसी को ऑक्सिजन लगाया जा रहा है, किसी की साँस जोर जोर से चल रही है, सामने दो पुलीस यमदूत के समान खडे है परंतु अपना कोई नहीं। मृत्यु की राह देखते हुए मैं आँखें बंद किए लेटी थी, तभी एक स्नेहपूर्ण हाथ का स्पर्श माथे पर हुआ। मैंने आँखें खोलीं तो सामने मूर्तिमंत ममता वं. ताईजी थी। वो हाथ मेरे लिये संजीवनी बुटी सिद्ध हुआ। मेरी पीडा धीरे धीरे शमने लगी। समय समय पर वे मिलने आती, कुछ ना कुछ प्रेम से खिलाती, हाल-चाल पूछती। उस आत्मीयता ने, ममता ने जादु जैसा काम किया। उसके बाद १९/२० सालों तक सतत उनकी प्रेरणा मिलती रही, कार्य चलता रहा। उनकी ममता मैं सदा स्मरण करती रहूँगी। यही वात्सल्य यही स्नेह हम दीनदुखियों को दे सके यही वास्तव में उनके लिये श्रद्धांजलि होगी।

सौ. सुमती सुकळीकर, नागपुर
संरक्षिका – दीनदयाल शोध संस्थान

●●●

सहज, सरल, सप्रेम व्यक्तित्व

वं. ताईजी के प्रत्येक व्यवहार में सहज आत्मीयता रहती थी। समिति की केंद्रीय कार्यकारिणी की बैठक भानपुरी (बस्तर) में थी। उसके लिये हम वं. ताईजी के साथ भानपुरी पहुँचे। जिस घर में निवास था वहाँ की गृहिणी के पैर में मोच आयी थी- बहुत वेदना थी- हिलना भी मुष्किल था। वं. ताईजी जैसी सर्वोच्च अधिकारी अपने घर आयी है और मैं कुछ सेवा नहीं कर सकती इसका बहुत दुःख था मन में। वं. ताईजी ने यह तुरंत पहचान लिया। उन्होंने हलदी, रक्तचंदन आदि घिस कर उसका लेप गरम कर के उस बहन के पैर को लगाया। बात करते करते उसके मन की वेदना कम की। ताईजी जैसा एक श्रेष्ठ व्यक्तित्व- इतने बडे संगठन की नेता- इतनी सहजता से व्यवहार कर सकती है। इसका आश्चर्य उस पूरे परिवार को हुआ। वं. ताईजी आगे जाने के लिये निकलीं तब उसकी आँखों में पानी आया और उसने कहा 'आपने तो मेरी माँ से भी अधिक सेवा की। आप ही मेरी माँ हैं।'

मानवता के दर्शन

महामहोपाध्याय बाळशास्त्री हरदासजी के प्रवचन प्रति वर्ष चैत्र माह में पुणे में होते थे। प्रति वर्ष विषय अलग अलग रहते थे और प्रवचनों की संख्या भी भिन्न भिन्न रहती थी। महाभारत और श्रीकृष्ण इन विषयों में से प्रत्येक पर २८,२८ प्रवचन हुए। मैं भी उनके साथ पुणे जाती थी। हम श्री. शं. रा. तथा मामाराव दाते के घर ही रहते थे। अपने प्रवास के दौरान एक दिन स्व. श्री. विनायकराव आपटे अर्थात् मा. श्री ताईजी आपटे के घर भोजन के लिये अवश्य जाते थे। जब हम उनके यहाँ जाते थे तब वं. ताईजी प्रमुख संचालिका नहीं थी- वं. मौसीजी थीं।

सन १९७८ वं. मौसीजी के निधन के पश्चात् वं. ताईजी आपटे प्रमुख संचालिका बनीं। वं. मौसीजी के निधन का दु:ख था ही। पर वं. ताईजी आपटे प्रमुख संचालिका बनी इसका आनंद भी था। सन १९८४ रामनवरात्रि में वं. ताईजी देवी अहल्या मंदिर में ही रहेंगी ऐसी जानकारी मिली। अत: मैं उन्हें मिलने गयी। नयी पुरानी स्मृतियाँ पुन: जागृत हुईं। नमस्कार कर वापिस आते समय दूसरे दिन चाय पर वं. ताईजी को निमंत्रित किया।

अकल्पित मोड

मैं घर वापस जा रही थी। वं. ताईजी कल अपने यहाँ आयेगी इसका समाधान था। चाय के साथ नाश्ते के लिये क्या बनाऊँ इसका बिचार करते करते घर पहुँची तो घर का चित्र पूरी तरहसे परिवर्तित हो गया था। मेरे माता-पिता भी यहीं रहते थे। पिता की आयु ९४ वर्ष और माँ की आयु ८४ वर्ष। मैं जब अहल्या मंदिर के लिये घरसे निकली थी, तब पिताजी स्वस्थ थे, और वापस पहुँची तो घर में डॉक्टर आए हुए थे और पिताजी बहुत अस्वस्थ हुअे थे। डॉक्टर ने कहा कि जिन्हें बुलाना हो बुला लीजिए। बाहरगाँव संदेश देने से पूर्व मैंने वं. ताईजी को संदेश भेजा कि वे चाय के लिये न आएँ, परिस्थिति भी बता दी।

संवेदनशील मन

रात हमने जागते हुए काटी, दूसरे दिन भी तबीयत को कुछ आराम नहीं था। वं. ताईजी को न आने के लिये संदेश दे ही दिया था। अत: वे आएँगी ऐसा विचार भी मन में नहीं था। परंतु वं. ताईजी पधारीं। कुछ सेविका बहनें भी उनके साथ थीं। मैंने पूछा, ''ताईजी आपको संदेश नहीं मिला?'' उन्होंने कहा - ''संदेश मिला इसीलिये तो आई हूँ। आपके पिताजी अस्वस्थ हैं यह मालूम होने पर आनाही चाहिए। चाय क्या कभी भी आकर पी लूँगी'' उन्होंने पिताजी की तबीयत देखी और मुझसे कहा, ''दवाई व्यवस्थित दी है नं? उनकी प्रकृति जल्द ही सुधर जाएगी। मुझे उनकी तबीयत की सूचना देते रहना, मैं नागपुर में ही हूँ।''

मैंने उनके लिये चाय बनाई। उन्होंने चाय ली भी। वं. ताईजी वापस लौट गयीं, परंतु उनके अंत:करण की, मानवता के जो दर्शन मैंने किये उसकी अमिट छाप मेरे मन पर अंकित हो गयी।

वीणाताई हरदास

●●●

वज्रादपि कठोराणि- मृदुनि कुसुमादपि

वं.ताई मृदु स्वभाव की होने पर भी कुछ बातें उनको बिलकुल पसंद नहीं थी। किसी फोटो को पहनाया हुआ पुष्पहार सूख गया और निकाला नहीं तो वे कहती थीं- ''अपमान क्यों करते हो उस महान व्यक्ति का?'' तब से किसी फोटो को हार पहनाने पर दूसरे दिन निकालने की आदत लगी। शाखा विषयक व्यवहार में कुछ गलती हुई, कम अधिक हुआ तो उनका कहना रहता कि गलत परंपरा मत डालो। यह बोलते हुए उनका स्वर किंचित तीव्र होता था। परंतु समझनेवाला समझ जाता था। अन्यथा उनका स्वर नित्य मृदु मधुर होता था। चकोर पक्षी जिस मृदुता से चंद्रकिरण ग्रहण करता है वही उनकी वृत्ति थी। इसीलिये उन्होंने अपने अंतिम पत्र में लिखा था 'मेरी ओर से किसी को कम अधिक कहा गया होगा तो क्षमा करें।' उनका यह वाक्य श्रोताओं के मन को छू गया।

मुझे पुनः भारतभूमि में जन्म लेना है।

हमने वंदनीया ताईजी के रूप में एक अत्यंत समर्थ, समृध्द व्यक्तित्व का दर्शन किया है।

१९७२ में लोकमान्य विद्यालय, वरोडा में राष्ट्र सेविका समिति का ग्रीष्मकालीन वर्ग आयोजित किया गया था। तब ३ दिनों तक सतत वं.. ताईजी के सहवास का लाभ मिला। महान व्यक्तियों के अक्सर दूर से ही दर्शन सुहाने लगते हैं, परंतु ताईजी का सहवास जितना अधिक मिले, उतनी अधिक उनके व्यक्तित्व की भव्यता व गहराई का अनुभव होता था। उनका दैनंदिन व्यवहार, स्वावलंबन, चिंतन की दिशा और सबसे अत्यंत मधुर व्यवहार, इस सबका अनुभव हम सभी सेविकाओं को उन तीन दिनों में हुआ।

ताईजी की एक बात हृदय में गहरी बैठ गई थी। वे कहती थीं- ''स्वयंसेविकाओं की भाषा में, मैं, मेरा, तेरा इस प्रकार के शब्द ना हो। 'हम', 'हमारा' इस प्रकार से बोलिये और वैसा ही व्यवहार कीजिए। इस कथन के पीछे ताईजी का जो भाव या अर्थ था उसके अनुसार मुझमें कुछ अंश तक परिवर्तन- हुआ है। परंतु ताईजी के समान पूर्ण परिवर्तन अभी हुआ नहीं है।

सेविकाओं के प्रति उन्हें विशेष स्नेह था। ऐसा कहा जाता है कि मादा कछुआ अपनी प्रेमभरी दृष्टि से अपने बच्चों का पोषण करती है। ताईजी की स्नेहयुक्त दृष्टि से सेविकाओं को उत्साह मिलता था। सेविकाओं से वार्तालाप करते समय उनका स्वर भावना से भरा होता था। स्वयं के लिये वे अत्यंत कठोर परंतु दूसरों के लिये उतनी ही मृदु थीं।

एक प्रसंग याद आ रहा है। कलकत्ता में उनसे मिलने के लिये मैं और मेरी बहन गए थे। सारी बातें होने के पश्चात् ताईजी मुझसे बोलीं- आपसे जयोऽस्तुते यह गीत सुनना है, सुनाएगी? मैंने कहा, मेरा स्वास्थ्य कुछ ठीक नहीं है, अत: मैं यह गीत ठीक से नहीं गा पाऊँगी। कोई भजन सुनाऊँ क्या? ताईजी ने कहा- ठीक है सुनाओ। वास्तव में वे सर्वोच्च अधिकारी, अत: उन्होंने गीत सुनने की इच्छा प्रदर्शित की यह उनकी आज्ञा मानकर मुझे उनकी बात मान लेनी चाहिए थी, परंतु यह मेरे ध्यान में नहीं आया। हमारे अधिकारी प्रथम माँ है और फिर अधिकारी, इस बात का भान मुझे पश्चात हुआ। माँ के सामने गीत सुनाने में मुझे कोई बहाना नहीं करना चाहिए था। यह चुभन सदा के लिये मेरे मन को चुभती रहेगी।

उनके अंतर्मन में धधकते अंगारे होते थे परंतु शब्द सदा फूल बनकर बाहर आते थे। इतने सालों में कभी ताईजी को आवेश से बोलते हुए नहीं सुना। अत्यंत क्रोध आना चाहिये ऐसी कितनी ही घटनाएँ घटती थीं, जैसे ईसाइयों की कारवाइयाँ, मुसलमानों की आक्रमकता, सरकार की दोगली राजनीति, ऐसे अनेक विषय, परंतु ताईजी के शब्दों में जो संवेदना होती थी वह सुननेवालों के मन को छू जाती थी।

इस समर्थ व्यक्तित्व का रहस्य क्या हो सकता है? श्री शक्तिपीठ रामनगर नागपुर में तीन दिनों की बैठक हुई। तब बैठक का समारोप करते हुए ताईजी ने भाषण में जो प्रसंग बताए थे, उदाहरण के तौर पर १९०३ में तिलकजी का पैसा फंड, सावरकरजी का मित्रमेला इत्यादि। वह प्रसंग सुनते समय ऐसा लगता था मानों वे स्वयं उन प्रसंगों के समय उपस्थित थीं। प्रसंग १९०३ का और उनका जन्म १९१० में हुआ था। परंतु राष्ट्र के इतिहास से उनका जो लगाव और समरसता थी उसके परिणाम स्वरूप ये घटनाएँ उनके व्यक्तित्व का अभिन्न अंग बन गईं। भूतकाल व वर्तमान काल की घटनाओं का उनका जो आकलन था वह इन संदर्भों में प्रकट होता था। भूतकाल और वर्तमान की जिन्हें समन्वित अनुभूति हो ऐसे ही व्यक्ति में भविष्य को गठने की क्षमता होती है।

रग रग में स्वयंसेविका

उनके रोम रोम में स्वयंसेविकापन समाहित था। कुछ दिनों पहले जुनागढ में केंद्रीय बैठक हुई थी, उनका स्वास्थ्य ठीक नहीं था परंतु उन्होंने स्वयं अपने कपडे धोए, किसी को धोने नहीं दिए। उनका यह व्रत ईश्वर की कृपा से अंततक ताईजी निभा सकी। अंतसमय में भी उन्हें किसी से एक घूँट पानी तक नहीं माँगना पडा। ईश्वर किसका व्रत पूरा होने देता है? वं. ताईजी का व्रत उसने निभाया क्योंकि ताईजी की ईशभक्ति, देशभक्ति, राष्ट्रभक्ति और समाजभक्ति अत्यंत पवित्र और निष्कलंक थी इसीलिये भगवान ने भी उनके व्रत को अबाधित रखा।

पति पत्नी में सामंजस्य

आज महिलाएँ कहती हैं, परिवार में स्त्री, पुरुष दोनों सामाजिक कार्य कैसे कर सकते है? एक कोई कर रहा है उतना ही ठीक है, परंतु घर का सब दायित्व सम्हालते हुए भी पति-पत्नी दोनों काम कर सकते हैं, यह वं. ताईजी ने सबके सामने उदाहरण रखा है। **विचार, चिंतन तथा कार्य का ताईजीने जो समन्वय साधा था वह हमें ध्यान में रखना होगा, क्योंकि चिंतन के बिना कार्य अंधा है तथा कार्य के अभाव में चिंतन लंगडा रह जाता है।**

आज महाशिवरात्रि। ताईजी का महाप्रयाण। यह संयोग भी ध्यान देने योग्य है। श्रद्धांजलि देते समय हम प्रार्थना करते हैं कि मृतक की आत्मा को मुक्ति मिले, शांति मिले परंतु ताईजीने जिस प्रकार से जीवन व्यतीत किया है उससे उन्हें मोक्ष मिलेगा यह निश्चित है परंतु वे उसे स्वीकार करेंगी क्या? मुझे लगता है- नहीं। वे परमेश्वर से कहेंगी मुझे पुन: भारत भूमि में जन्म लेना है, क्योंकि स्वामी विवेकानंद को जागृत अवस्था में भारतमाता का जो दिव्य दर्शन हुआ वह अवस्था प्राप्त होने में अभी बहुत समय है और इसीलिये मुझे लगता है ताईजी मोक्ष स्वीकार नहीं करेगी।

राखी का यह अटूट बंधन

हममें से करीब-करीब सभी को ताईजी ने स्वयं तैयार की हुई राखी बांधी है। आज हमारी कलाई पर भले ही वह धागा नहीं है परंतु राष्ट्रसेवा का जो व्रत उन्होंने हमें दिया है उसका हमें सतत स्मरण रखते हुए कार्य करते रहना है और अधिकाधिक जोश से करना है।

महापुरुषों के स्मरण से अपना अंतर्मन शुद्ध व पवित्र होता है। वं. ताईजी के मार्गदर्शन के आधार पर उनके आदर्श जीवन से प्रेरणा लेकर हमारा कार्य और बढे और हमें सामर्थ्य प्राप्त हो यही ईश्वरचरणों में प्रार्थना।

विद्या पंडे- नागपूर
अध्यक्षा- नारी सुरक्षा प्रकोष्ठ

●●●

ममता ही समता का आधार है

अपनी ताई जी की विभिन्न आकृति एवं अनेक रूप देशभर में फैली स्वयंसेविकाओं के आगे आते हैं। परन्तु उन विभिन्न रूपों पर आच्छादित है- एक स्थायी भाव, वह है ममत्व का भाव। ताईजी के हृदय में ममता कूट-कूट कर भरी थी और इसीलिए स्वयंसेविकाओं से मिलते समय दो हृदयों का मिलन होता था, मस्तिष्क का नहीं। हृदय का जुड़ाव, जोड़ को स्थायित्व प्रदान करता है, मस्तिष्क का जुड़ाव, विवेक का जुड़ाव, विशेष स्थिति की खोज में रहता है। हृदय के जुड़ाव के लिए विशेष परिस्थिति, प्रशिक्षण या व्यक्ति की आवश्यकता नहीं होती।

स्व. ताईजी से मेरा भी कई बार मिलना हुआ। चार पाँच बार अहल्या मंदिर के प्रांगण में ही। दिल्ली में और पुणे में। पर उन सब बाद के मिलन में अहल्या मंदिर के प्रथम मिलन की छाप छाई रही। अहल्या मंदिर में मैंने पहली बार प्रवेश किया था। परिवेश की नीरवता, चलती फिरती स्वयंसेविकाओं का अनुशासन, उनके मुखपर छाई मुस्कान मन को सब ओर से छू रहे थे। आल्हादित कर रहे थे। आहिस्ता आहिस्ता पाँव रखती उस परिवेश में अभियोजन की मेरी कोशिश जारी थी। संघ परिवार से जुड़ी अन्यान्य संस्थाओं की प्रमुख बहनें वहाँ बुलाई गई थीं। बैठक प्रारंभ हुई। बैठक के लिए पंक्तिबद्ध बैठी बहनों में मैं पहली पंक्ति में बैठी थी। सामने रखे तख्त पर मा. प्रमिलाताई, मा. उषाताई बैठी थीं। तभी साधारण लिबास में साधारण कद की क्षीणकाय ताई वहाँ उपस्थित हुई। बैठक की कार्यवाही प्रारंभ हुई। सामने बैठे रहने के कारण उनकी निगाह मुझ पर और मेरी निगाह उन पर टिकना स्वाभाविक था।

प्रमिलाताई और उषा ताई से मेरी मुलाकात हो चुकी थी। अपरिचित निगाहें थीं, वे मेरी और ताई की। उपस्थित लोगों के व्यवहार से मैंने अनुमान लगाया कि वही सबसे बड़ी ताई थीं। परन्तु उनका सरल व्यवहार व ममतामयी दृष्टि ने हृदय के कोने में हलचल मचा दी। बैठक की कार्यवाही प्रारंभ हो चुकी थी। ताई का उद्‌बोधन हुआ। देशभर में चल रहे विभिन्न महिला संगठनों के कार्यों को एकसूत्र में पिरोने का आग्रह था। ताई ने एक 'मातृकुल' निर्माण करने का प्रस्ताव रखा। अन्य संस्थाओं की बहनों ने भी उस प्रस्ताव का समर्थन किया।

मेरी बारी आयी। भाजपा महिला मोर्चा की राष्ट्रीय महामंत्री के नाते मुझे अपना निवेदन रखना था। मैंने अपना परिचय देते हुए कहा- "मैं इस मातृकुल की सबसे नालायक

संतान हूँ। '' उपस्थित सभी बहनें चौंक गईं । ध्यान से ''एक नालायक संतान'' की व्याख्या सुनने को तत्पर हो उठीं पर ताई का हृदय कहीं विदीर्ण हुआ। मेरी ओर देखकर सिर हिलाकर कहने लगीं- ''नहीं, नहीं। ऐसा नहीं कहते।'' मैंने अपनी बात जारी रखी- ''मैं राजनीति में हूँ, इसलिए नालायक संतान हूँ।'' निश्चय ही मेरा इशारा समाज की ओर था जहाँ राजनीति में प्रवेश करने पर माँ बाप बच्चों को नालायक करार कर देते हैं। बैठक के बाद ताई ने मुझे अपने कमरे में बुलाया। उन्होंने मेरे मन से वह काँटा निकालने का प्रयास किया। कितना सरल, सहज, ममत्व भरा संभाषण था। वैसी ही जैसी मेरी माँ थी, सबकी माँ हुआ करती हैं। मेरे मन का काँटा भी निकला और कहीं कोई दर्द भी नहीं रहा। ऐसी थीं हमारी ताई।

अगले वर्ष राष्ट्र-सेविका समिति द्वारा अखिल भारतीय शिबिर का आयोजन था। राजमाता विजयाराजे सिंधिया भी पधारी थीं। पथ-संचलन के कार्यक्रम में प्रथम पंक्ति में राजमाताजी और ताई आपटे चल रही थीं। उनके पीछे ही मैं थी। राजमाताजी ने पीछे मुड़कर कहा- ''मृदुलाजी, कितना अनुशासित है यहाँ का कार्यक्रम। हम लोगों (भाजपा महिला मोर्चा) को भी ऐसे कार्यक्रम आयोजित करने चाहिए।''

ताई ने भी यह बात सुनी। उन्होंने राजमाताजी को आश्वस्त करते हुए कहा- ''राजमाताजी, यह कार्यक्रम भी आपका ही है। आपके पीछे यह अपरिमित नारी शक्ति है।'' राजमाताजी के हृदय को छू रहे थे- ताई के एक-एक शब्द।

राष्ट्र-सेविका समिति की स्वयंसेविकाओं को प्रेरित कर कार्य में संलग्न करने में ताई की विशेष भूमिका रही है।

पर उनके व्यक्तित्व के अन्य गुणों को आच्छादित करना उनका ममतामयी स्पर्श ही स्थायी है। राष्ट्र सेविका समिति के विस्तार के साथ इस ममत्व का विस्तार होगा। ममता की समता का आधार है।

-मृदुला सिन्हा
राष्ट्रीय संगठन मंत्री, भाजपा

●●●

दीपज्योति तुझे प्रणाम

जून के पहले ही सप्ताह में मैं पुणे गयी थी। उस समय कै. ताई आपटे के घर में सभी को मिलने के लिये। वं. ताईजी के निधन के बाद पहली बार उनके घर गयी और ताईजी की याद आती रही। उनकी प्रतिमा को मैंने वंदन किया, उनके बिना घर के व्यवहार कुछ रहे नहीं थे, वह तो चल रहे थे पर तो भी ऐसा लग रहा था कि कुछ कमी है। ताई अब नहीं हैं यह दु:ख तो था ही पर उससे भी ज्यादा दु:ख था वह उनके बेटे को। मैं पास ही सोया था पर ताईने मुझे पानी तक माँगा नहीं। बहु की व्यथा तो और ही अलग थी। उनको लग रहा था कि मैं तो दूर दिल्ली में थी पर जहाँ बेटे को भी पता नहीं चला वहाँ मैं क्या कर सकती थी। हमारा पैंतालिस वर्ष का सहवास। आज भी चार मास हो गये हैं तो भी ऐसा लगता है कि कभी ताई दिखाई देगी पर वो मुझे स्वप्न में भी दिखी नहीं यही ज्यादा दर्द है। वैसे देखा जाय तो ताई की मृत्यु यह एक भाग्यवान की मृत्यु है। पर पीछे रहे लोगों को उनके जाने से एक रिक्तता लगी है। सच कहे तो उनके स्वभाव में अत्यंत मृदुता, ममता होती थी कि उनके चार दिनके मुकाम से भी जैसा सारा घर भरा सा लगता था। प्रवास के बाद आते ही सबकी खुशखबरी पूछती थी, स्नेहभरा हाथ पीठ पर फेरती थी और कुछ ना कुछ प्रसाद हाथपर रखती थी। उनका स्वभाव इतना मृदु था कि तुकाराम महाराज के उस उक्ति की याद आती है।

मऊ मेणाहुनी आम्ही विष्णुदास।
कठिण वज्रास भेदू ऐसे।।

उस वैष्णवी के बाबत ऐसा ही कहा जा सकता है। महिलाओं के ऊपर के बढ़ते अत्याचार से उसका निवारण कैसा करे इसकी चिंता ताई को होती थी और उसका मार्ग निकालने के लिये वे प्रयत्नशील थीं।

एक बार अहल्या मंदिर में अनेक महिला संस्थाओं के अनुभवी प्रतिनिधि एकत्रित हुई थीं। विषय सब महिलाओं की दृष्टि से अतीव निकट था हर एक को कुछ कहना था। सबको बोलने का मौका देना मुष्किल था पर ताईने उसी में से मार्ग निकाला। सबकी अध्यक्षा तो ताई ही थी। इसीलिये अनुशासन का पालन करते हुए सभी को मौका देते हुए ताईने सभा का काम बडे शांतचित्त से

और आग्रही निश्चयी स्वर से सम्हाला था। वातावरण महिलाओं के अत्याचार से बडा गरम हुआ था पर नेतृत्व करनेवाले ताईने सबको शांत किया। ताईका यह नेतृत्व का गुण उस दिन प्रकट हुआ।

'एकता आज्ञांकिता का मंत्र जीवन व्याप्त हो' यह गीत समिति की शाखा में कहा जाता है। हमेशा कहा जाता है। यह 'नेता के प्रति निष्ठा' ताईजी में समाई हुई प्रतीत होती है।

अंतिम दिन तक समिति कार्य में आप व्यस्त थीं और अपने पश्चात् कौन नेतृत्व करेगा इसकी भी योजना ताईजी ने कर ली थी। श्रद्धांजलि सभा में चित्रा जोशी ने ताईजी का लिखा हुआ पत्र सबके सामने पढा तब सभी के नेत्र सजल हुए।

ताई बडी हो गयी

वं. मौसीजी के बाद जिस समय वं. ताईजी को सभी सेविकाओं ने प्रमुख संचालिका के रूप में प्रणाम दिया उस समय मेरे पिताजी अण्णा जोगळेकर मेरे साथ थे। वे बहुत गद्‌गद् हो उठे और कहने लगे 'हमारी ताई कितनी बडी हो गयी।' ताई के पति विनायकरावजी और मेरे पिताजी अण्णा इनका गहरा स्नेह था। ताई भी मेरे पिताजी को घरेलु नाम से ही पुकारती थी। मान से, पद से ताई कितनी ही उच्च स्थान पर पहुँची तो भी मन से तथा कृती से वे अत्यंत सीधी सादी थीं। ताई निरंतर हमारे घर की जानकारी देती थीं, लेती थीं। कभी योगिनी कहाँ है? पूछती थीं तो कभी पिताजी का स्वास्थ्य पूछती थीं। ऐसी घरेलू बातें केवल मुझसे ही नहीं तो अनेक बहनों के विषय में पूछताछ होती थी।

नागपूर के उनके मुकाम में महिलाओं का उनके पीछे घेरा पडता था। मैं भी उनसे मिलने जाती थी। सब स्नेही बहनों के यहाँ आना-जाना, उनको मिलना, उनके स्नेहसंबंध दृढ करना, वह भी अतीव सहजतासे यह उनके स्वभाव की विशेषता। आखिर में अनंत में विलीन हो गयी तब भी ऐसी ही सहजतासे वे चली गयीं। यह दीपज्योति उनके ही घर को नहीं तो हजारों सेविका बहनों के घर को क्षणभर के लिये अंधेरे में ले गयी परंतु इस ज्योति का चैतन्य इतना तेजोमय है कि आगे भी भविष्य में यह स्नेहदीप सभी को प्रकाश देता रहेगा।

स्वाती शहाणे
सचिव अ. भा. ग्राहक पंचायत

●●●

संपन्न जीवन-प्रसन्न मृत्यु

१९३५-३६ में हम वं. ताईजी के पडोस में ही रहते थे। खेलने के लिये गये कि ताईजी बुलाती, अपने पास बिठाती, माँ की पूछताछ करती। (उन दिनों में माँ बीमार रहती थी) ' विद्यालय की पढाई कैसी चल रही है?' प्रश्न पूछती और गोली खाने के लिये देती थी। आज भी यह चित्र मेरे मन:पटल पर सजीव है।

ताईजी में मृदुता की परिसीमा थी। ताईजी के जीवन में अनेक कटु प्रसंग आये होंगे, कई लोगों ने शब्दशरों से घायल भी किया होगा। परन्तु उनकी प्रसन्नता कभी ढली नहीं, और मधुर शब्दों में कभी कटुता आई नहीं। सबका ख्याल रखते हुए सुनियोजित कार्य करते समय उन्होंने कभी समझौता नहीं किया। अत: उनका प्रवास अखंड रहा और समिति कार्य का प्रवाह भी।

एक प्रसंग मुझे याद है। अपना ही कार्यक्रम था। जिम्मेदारी परिवार के किसी एक संस्था पर थी। ताईजी सामने बैठी थी। उनको मंचपर बैठने के लिये किसीने कहा ही नहीं। ताईजी कार्यक्रम का आनंद ले रही थी। अपना दिग्दर्शित कार्यक्रम प्रेक्षकों में बैठकर देखने का आनंद कोई दिग्दर्शक लेता होगा वैसा ही। कुछ समय पश्चात् किसी के ध्यान में आया। आग्रहपूर्वक उनको मंच पर बुलाया। 'रहने दीजिये, यहाँ अच्छा है' ताईजी ने कहा। उनकी प्रसन्नता पर खिन्नता की लकीर भी नहीं थी। आज के युग में ऐसा निरंहकार विरला ही दीखता है।

पानशेत का बाँध टूटा। प्रचंड पानी! पुणे शहर जलमय हो गया। तरह तरह के काम प्रारंभ हुए। सभी ओर ताईजी का अस्तित्व था और निरंतर भागदौड।

उस समय पुणे के सभी स्त्री संस्थाओं ने एकत्रित आकर 'संयुक्त स्त्री संस्था' प्रारंभ की। उसमें भी ताईजी का सहभाग था। अंतिम दिन तक 'ताई' का गौरवपूर्ण स्थान वहाँ बना रहा। भिन्न-भिन्न विचारों के, परस्पर विरोधी भूमिका वैसे ही संस्कारों से आयीं अनेक महिलाएँ कॉंग्रेस, समाजवादी, कम्युनिस्ट, उच्चभ्रू परंतु सभी ताईजी

का अत्यंत आदर करती थीं।

आज याद आ रही है मेरे जीवन की एक अनमोल घडी। वं. ताईजी के जनम दिन पर 'कृतार्थ मी कृतज्ञ मी' (ताईजी की जीवनी पर पुस्तिका) के प्रकाशन का कार्यक्रम था। प्रमुख अतिथि थे मोरोपंतजी पिंगळे। मंचपर ताईजी तथा मोरोपंत। मेरी दृष्टि से यह अमृतयोग था। मुझे वक्ता के नाते बुलाया गया था। कार्यक्रम के पश्चात् श्रोताओं ने कहा 'कार्यक्रम अच्छा हुआ'। ताईजी ने शाबाशी दी। ताईजी के इसी अमृतपाथेय पर मेरे जैसे अनेक साधक साधना पथ में आनेवाले अनगिनत बाधाओं को लाँघते हुए, अनेक कडुवे अनुभव निगलते हुए, आव्हानों से जूझते जूझते अपनी राह चल रहे हैं। हम सबकी एक प्रभावी प्रेरणा रही वं. ताईजी। सान्निध्य में आनेवाले व्यक्ति में कर्तव्यनिष्ठा प्रबल करने की उनकी कुशलता अनन्य थी।

भवितव्य का अनुमान लगाते हुए अपने शक्तियुक्तिनुसार सिद्धता करने का सामर्थ्य भी उनमें था। ''मृत्यु का भी मैं प्रसन्नता से स्वागत करूँगी। मैंने अपनी जिम्मेदारी अपने शक्तिनुसार निभायी है- इस समाधान की मूँजी मेरे पास है-'' यह उनकी धारणा थी।

ताईजी अर्थात् एक संपन्न जीवन- ध्येयनिष्ठ लोगों का संग्रह और अथाह प्रेमसागर यह उनके जीवन की संपन्नता थी और प्रसन्न मृत्यु यह दूसरा विशेष। किसी के ध्यान में भी न आते हुए सहजता से मृत्यु का स्वागत यह उनकी मृत्यु की प्रसन्नता है।

सौ.सुशीला आठवले
भा.ज.प.

●●●

हम वह करें जो तुम कर गईं

माँ भारती की सेविका तुम पथप्रदर्शन कर गईं।
जीवन सुमन के अशि - चतुः बसन्त अर्पण कर गईं॥

हमने कदम रखा समिति में, साहस तवही देखकर
पञ्च सप्तति वर्ष में, तारुण्य कर्म तव देखकर
राष्ट्रसेवा में स्वयं का दीप प्रज्वलन कर गईं॥१॥ माँ....

लक्ष्य लौ मन में जलाकर, साधना करती रहीं
चतुर्दिक दृष्टि रही, आराधना करती रहीं
सेविकाओं के लिये स्वयं मार्गदर्शन कर गईं॥२॥ माँ....

आलस्य जाता भागता, साहस्य तव प्रत्यक्ष लख
बिन्दु बिन्दु सिंधु में होता समाहित तव धैर्य लख
माँ भारती का हो भाल उन्नत, सर्वस्व अर्पण कर गईं॥३॥ माँ....

हम सभी की पूज्या माँ, हम तव चरण वन्दन करें
ध्येय पथ पर बढ़ चलीं तुम, हम कर्तव्य पथ पर बढ़ चले
श्रद्धांजलि बस यही है माँ हम वह करें जो तुम कर गईं॥४॥

गौरीबाला
बुलन्द शहर (उ. प्र.)

●●●

स्नेह देना ऐसा था

वं. ताईजी का लोकसंग्रह विशाल था। किसीको मदद करने के लिये वे अतीव परिश्रम उठाती थीं। अपने देहावसान से पूर्व कुछ ही दिन वे संचेती रूग्णालय में किसीसे मिलकर आयी, तीसरी मंजिल पर। मा. मोरोपंत बीमार है ऐसा मालूम होने पर उनसे मिलने गयीं तब उनके लिये उनका प्रिय व्यंजन ले गयीं। कभी भी किसी को भी कुछ तो भी खिलाये बिना जाने नहीं देती थीं। रूग्णों को मिलने जाती थीं तब उनको मनुक्का या मिश्री दे कर कहती थीं जल्दी स्वस्थ हो जाइये हा!

दूसरे आपात्काल में नित्य पूछताछ करनेवाले गुप्तचर उनके परिचित हुए थे। एक बार एक गुप्तचर बीमार हुआ तब उसको मिलने वह अस्पताल गयीं- जाते समय फल कॉफी ले कर गयीं। वं. ताईजी का अकृत्रिम स्नेह देखकर वह गद्गद् हो उठा।

श्रद्धेय ताई

यह तो किसका कहना है
जो कुछ कर जाते जीवन में
अमर तो उनको रहना है॥१॥
जो वसते हैं हृदयों में सबके इष्ट सरीखे पूजे जाते
हर धडकन के साथ साथ वह
युगों युगों तक जीते जाते॥२॥
निर्मल है निस्वार्थ तपस्विनी लेकर अपने जीवन में व्रत
लुटा दिया सब कुछ हँस हँस कर मातृभूमि के चरणों पर॥३॥
निश्चल अविचल दृढ कदमों से लक्ष्य भेदने को आतुर मन
काँटों भरे जगत के पथ पर चलना सिखा गई तुम चल कर॥४॥
सरस्वती कर्तव्य बोध की हम सब को करती हो गर्वित
ऐसी है श्रद्धेय ताई तुम सबके हृदयों में हो जीवित॥५॥
तुम नारी जीवन की गरिमा हो धन्य धरा की धन्य सुता
ममता का सागर छलकाकर जननी का भाल किया ऊँचा॥६॥
व्याकुल हम तेरे चरणोंमें कोमल भाँवों की अंजलि भर
शत शत प्रणाम सौ बार नमन करते अर्पण हम श्रद्धा सुमन॥७॥

उषालता रावत, देहरादून

●●●

सेवई और गुजिया

एकबार पंडित सातवळेकर और श्री गुरूजी अचानक ही ताईजी के यहाँ एक साथ भोजन के लिये आये। कपिलाषष्ठी का ही योग था। जल्दी जल्दी में वं. ताईजी ने सेवई की खीर और नारियल की गुजिया बनायी। मिष्टान्न एक ही परंतु दोनों महानुभावों की प्रतिक्रियाएँ भिन्न भिन्न। खीर का कटोरा लेते हुए पंडितजी कहने लगे- 'भाई अब हमारी आयु काफी हो गयी है, इस माया मोह में, गुत्थी में क्यों उलझना?'

'पंडितजी ऐसा नहीं हमें प्रवास में सुदूर-दूर भेजने का विचार है ये।'

''जी नहीं आप प्रवास से शीघ्र ही आये, बार-बार घर पधारें इसलिये यह 'मुरूड कानोला'+ खास करके बनाया हुआ...'' मुरूड कानोला थाली में परोसते हुए- ताईजी ने उत्तर दिया।

ताईजी की यह समय सूचकता उनके मुँह तोड जवाब सुनते ही श्री गुरूजी सहित सभी लोग ठहाके मारकर हँसने लगे।

महाराष्ट्र में सेवई लंबी लंबी होने के कारण ऐसी मान्यता है कि सेवई बनाना याने व्यक्ति को दूर भेजना है।

मुरुड कानोला- यह एक विशेष प्रकार की गुजिया होती है। लडकी को ससुराल भेजते समय उसे खिलायी जाती है। यह गुजिया खिलाने से उसे बार बार मायके आने का अवसर प्राप्त होता रहता है। यह मान्यता है।

वक्तृत्व का आविष्कार

१९८४ की बात! वं. ताईजी के रामायण प्रवचनों का आयोजन श्रीराम जन्मोत्सव में किया था। उन्हें बहुत संकोच था कि इसी मंच से वं. मौसीजी के रामायण प्रवचन १३-१३ वर्ष लोगों ने सुने हैं। उन्होंने कहा- कहीं टोमॅटो वगैरे तो नहीं फेकेंगे न श्रोता? परंतु यह उनकी विनम्रता थी। प्रतिदिन प्रवचन से पूर्व गीत या मूकदृश्य दिखाया जाता था। अपने ताईजी के सामने अपने कलागुण प्रकट करने की मानो होड ही लगी- ७ साल की बालिका से लेकर ६५ साल की माणिकताई तक। प्रतिदिन अलग दृश्य, कभी त्राटिकावध कभी अशोकवन में सीता। श्रीराम राज्याभिषेक का भव्य मंगल दृश्य। जरी के कीमती बनारसी शालू, शेले से दरबार सजा था। श्रीराम को अनेक प्रकार की आदरभेट अर्पण की गयी। वं.ताईजी का हृदय भावविभोर हो उठा। बोलीं- कितने परिश्रम किये आप लोगोंने। धन्य तुम बहनों की। वं. ताईजी ने अपनी वाणी से, व्यवहार से नागपुरकरों का मन जीत लिया।

सरल परंतु गंभीर कैसी थी उनकी वाणी। औषधी सामान्यसी गुणवंत सरल वाणी। नित्य मुक्त। अनुभूति की।

पारिजात या बकुलपुष्प की सुखद मंद वर्षा जैसा उनका वक्तृत्व था। अभिनिवेश नहीं तो अभिजातता थी। अंतर्मन में अंगार होते हुवे भी वाणी में पुष्प की मृदुता थी। उनके शब्दों में कार्य की अपार निष्ठा झलकती थी- वही था हमारी प्रेरणा का निर्मल स्त्रोत।

ऋणानुबंध

श्री. माणिकराव पाटील, श्री. शिवराय तेलंग,
श्री. रामभाऊ गोडबोले, श्री. नाना लाभे,
श्री. बाबासाहेब पुरंदरे, श्री. ना. बा. लेले, श्री. इंद्रेशकुमार.

जीवन के अंत तक समिति कार्य के लिये वं. ताईजी का प्रवास चल रहा था। उनकी आयु ८४ से अधिक है इसपर विश्वास ही नहीं होता था। देहांत के दो-तीन माह पूर्व आप नगर जिले के समिति के कार्यक्रम में उपस्थित थीं। पूरा दिन व्यस्त कार्यक्रम था। बैठक में एक घंटे का बौद्धिक हुआ और कार्यक्रम का प्रकट समारोप तथा संघ के प्रमुख स्वयंसेवकों के साथ भेंट मीलन का कार्यक्रम उनकी उपस्थिति में रखा था। (उस में मैं भी उपस्थित था) उसमें भी आपने अनमोल मार्गदर्शन किया। उनके वे भाषण हमारे लिये अंतिम भाषण सिद्ध हुए।

मेरी माँ जैसा ही ताईजी ने मुझे खिलाया है। शिशुअवस्था में ७ वर्ष की आयु से मैं शिक्षा के लिये घर से बाहर निकला। आगे व्यवसाय के लिये नगर में स्थिर हुआ। पुणे में सन १९४९ तक था। मेहमान जैसा ही मैं स्वयं के घर जाता था। पुणे के दीर्घकालीन वास्तव्य में मेरा ताईजी के यहाँ आना जाना रहता था। ऐसे ही एक बार गया था। मैंने कहा--- ताईजी अभी स्वास्थ्य का ध्यान रखियेगा। स्वास्थ्य को संभालकर प्रवास कीजियेगा। चलते समय हाथ में डंडा रखियेगा।

मैं एकदम स्वस्थ हूँ- ''मैं बीमार होकर नहीं मरूँगी। जाते समय किसी को तकलीफ नहीं दूँगी'' उन्होंने अविलंब उत्तर दिया। ताईजी के शब्द इतने शीघ्र ही सत्य होंगे ऐसी कल्पना भी नहीं थी।

मा.विनायकरावजी के घर में सर्वप्रथम गया तो ताईजी की दरवाजे में ही भेंट हुई। उन्होंने पूछताछ की और मिश्री दी। उसी समय उनका स्नेहभाव ध्यान में आया। कारण हो या अकारण मेरे जैसे अनगिनत कार्यकर्ताओं का विनायकरावजी के यहाँ आना-जाना था। वे हमारे पुणे के अभिभावक थे। हमारे लिये उनका बडा योगदान रहा- हम विद्यालय महाविद्यालय में पढते थे और शाखा में हमारा व्यक्तित्व आकार लेता था।

मायके से श्रेष्ठ पृष्ठभूमि (लो. टिलकजी की पोती) लेकर ताईजी ने आपटे जी के बिकट ध्येयपथ का जीवनसाथी बनकर ससुराल में प्रवेश किया और समर्थता से गृहस्थधर्म निभाया। अत: विनायकरावजी पूर्णरूप से संघकार्य कर सके। ताईजी ने उनके कार्य में हाथ बँटाया। पू. डॉक्टर, पू. गुरूजी वैसे ही प्रांतीय परप्रांतीय संघकार्यकर्ताओं का आतिथ्य उन्होंने किया और समिति कार्य को भी घर से ही प्रारंभ किया।

ताई और विनायकरावजी जैसे एक श्रेष्ठ दंपती एक अर्थ से अलौकिक ही थे। उस समय के पुणे के श्रेष्ठ श्रेष्ठ दिग्गजों को मत्सर लगता था, ईर्षा होती थी। ये अलौकिक दंपती के सदाशिव पेठ के घर ने जितने उतार-चढाव देखे उतने पुणे के किसी अन्य नेता के घर ने नहीं।

पिछले वर्ष अप्रैल में मेरे रीढ़पर दीनदयाळ रूग्णालय में शस्त्रक्रिया हुई। मैं पंद्रह दिन वहाँ रहा। ताईजी दो बार मिलने के लिये आयीं। डिब्बा भर के मिश्री लायी मैंने पूछा ताईजी इतनी मिश्री किस लिये?
बीमारी और विश्रांती काल में पर्याप्त हो इतनी लायी हूँ।

मैं विश्रांती के लिये एक डेढ़ माह पुणे में रहा। उस समय भी ताईजी घर आकर मिल के गयीं। वे केवल संघ का पदाधिकारी इसलिये मिलने के लिये नहीं आती थीं तो वे अपने 'माणिक' को मिलने के लिये आती थीं। यह अटूट रिश्ता और ऋणानुबंध मेरे जीवन की अनमोल थाती है।

माणिकराव पाटील

●●●

अबला नहीं अतुलित बला

वेदमूर्ति पं. सातवळेकरजी सदा कहा करते थे कि आज तक 'अबला' शब्द का गलत प्रयोग कर सभी ने अपने समाज के अर्धांग को यानी महिलाओं को असहाय एवं दुर्बल ठहरा कर निराधार और अनाथ की श्रेणी में ढकेल के रखा है। शब्द शक्ति एवं सामर्थ्य की महिमा को प्रभाव को, समुचित ढंग से पहचाननेवाले प्रकांड पंडित सातवळेकरजी इसीलिये महिला वर्ग की मानसिकता में परिवर्तन लाने के लिये बलपूर्वक बताते थे कि 'अबला का सच्चा अर्थ समझ कर व्यवहार करो।

राष्ट्र सेविका समिति की संस्थापिका स्व. वंदनीय मौसी (उर्फ लक्ष्मीबाई) केळकर और उनकी उत्तराधिकारी स्व. वंदनीय ताई (उर्फ सरस्वतीबाई) आपटे इन दोनों की जीवन शैली एवम् कर्तृत्व यह शत प्रतिशत सिद्ध करता है कि पं. सातवळेकरजी द्वारा निरूपित व्याख्या यथार्थ है। परिपक्व बुद्धि के एवम् अहर्निश समाज सेवा में रत शतायु पं. सातवळेकरजी समझाते थे कि 'अबला' का सच्चा अर्थ है जिसके बल को सीमा या मर्यादा नहीं ऐसी साध्वी स्त्री यानी अमर्याद शक्ति (बल) की मूर्ति। यदि यह यथार्थ सामने रख कर, आत्मसात् कर, महिला वर्ग आगे बढ़ेगा तो मानव समुदाय का कल्याण होगा। अज्ञानवश (अर्थात् अनजान में) जो न्यूनगंड (Inferiority Complex) महिलाओं में विकसित होता है वह दूर हो कर रहेगा।

ना. बा. लेले
दिल्ली

●●●

प्रथम दर्शन ही अन्तिम भेंट बन गई

वन्दनीया ताईजी आपटे का सन् १९९३ में जम्मू में राष्ट्र सेविका समिति के कार्यक्रम के निमित्त आगमन हुआ।

'वं.ताई' को चलते, फिरते, वार्ता करते तथा चेहरे की तेजस्विता का दर्शन करने का मेरा प्रथम अवसर था। मैंने उनके साथ आई एक परिचित बहन से पूछा कि आयु कितनी है? उत्तर मिला ८४ वर्ष। अकस्मात् मेरे मुख से निकल पडा ''ताईजी'' तपस्विनी तथा मूक साधक है। सुनते आये थे ''राष्ट्र नींव के पत्थर बने क्लेश नहीं'' परंतु 'ताईजी' को सचमुच वैसा देखा।

वीरभवन, जम्मू राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का प्रान्तीय कार्यालय। दस वर्ष से लेकर सत्तर वर्ष तक की आयु की सभी सेविकाएँ ''वं. ताईजी'' को घेरे हैं। अपने अपने क्षेत्र में होनेवाली आतंकवादी गतिविधियों की चर्चा व अनेकों प्रकार के अत्याचारों की कथाएँ सुना रही हैं। कुछ विस्थापित बहनें कैसी कैसी कठोर तथा दुःख भरी जिन्दगी व्यतीत कर रही हैं इसकी दास्ताएँ सुना रही हैं। वेदनापूर्ण बातों से वातावरण बोझिल हो रहा था। परन्तु ''ताईजी'' की सौम्य मूर्ति सभी के कष्टों को अपने ममतामय व्यवहार से हर ले रही थीं और ऐसी परिस्थिति में बहनों (नारी जाति) की भूमिका क्या होनी चाहिये समझा रही थीं। मुझे वह दृश्य ऐसा लग रहा था जैसे छोटी, बडी सभी नदियाँ, भागीरथी में मिलने को उतावली हो।

कश्मीर छोड़ना नहीं चाहिए। डोड़ा जिले में आत्मरक्षा हेतु उपाय करने के साथ साथ रोजगार हेतु भी प्रकल्प लेने चाहिये। इसके साथ-साथ कश्मीरी विस्थापित बहनों का मनोबल बने तथा आर्थिक सहारा भी मिले इस तरह की वार्ता पर उन्होंने कहा कि दोनों तीनों प्रकार के कार्यों की व्यवस्था में राष्ट्र सेविका समिति पूरा पूरा सहयोग देगी। परन्तु इन संवेदनशील क्षेत्रों के युवक व युवतियाँ अपने अपने घरों तथा इलाकों में रूके यह होना चाहिए।

यह सारा समय अत्यन्त स्नेहिल व सुखद वार्ताओं से भरपूर था। जब ९ मार्च १९९४ को प्रातः १०.०० बजे मैंने स्मृति मन्दिर रेशमबाग नागपूर के प्रांगण में एक मित्र बन्धु को कहा कि दोपहर में राष्ट्र सेविका समिति कार्यालय पर जाना है तो उन्होंने मुझे अति दुःखभरा समाचार सुनाया कि आपको नहीं मालूम कि ''वन्दनीय ताईजी'' का निधन हो गया है। पूरा समाचार सुनने पर मुझे लगा कि ''प्रभू'' से कहूँ कि इतनी शीघ्रता क्या थी? मन में विचार था- वह प्रथम दर्शन ही अन्तिम भेंट बन गया।

इन्द्रेश कुमार
हिमगिरि प्रान्त प्रचारक

●●●

ताई- माँ एक प्रेरणा

मैंने ताईजी को सर्वप्रथम देखा एक सामान्य गृहिणी के रूप में। विनायकरावजी और ताईजी दोनों भी आज जीवित नहीं परंतु स्मृतिरुप में अंत:करण में है और 'अस्ति' रुप से निरंतर में। आज जब मैं उन दोनों के बारे में विचार करता हूँ तो पुण्यनगरी के स्वभावविशेष से विसंगत इस स्वभावविशेष को देखकर बडा आश्चर्य होता है।

स्वयं के और अन्यों के जीवन को गति देनेवाले एवं गति अबाधित गतिशील रखनेवाला विलक्षण भावना-प्रधान मन विनायकरावजी को प्राप्त हुआ था। पुणे के मेरे जैसे अनेक स्वयंसेवकों के मन पर बाल्यावस्था में हुआ यह प्रभाव युवावस्था में रहा नहीं तो भी हर्षदायक अवश्य है। आगे चलकर विनायकरावजी की यह भावनोत्कटता मुझे असंगत लगने लगी। वैसे ही ताईजी के कार्यकर्तृत्व की सहजता- अराजनीतिकता असंगत प्रतीत हुई। पुण्यनगरी पर तीन सौ से अधिक वर्षों से राजनीति के संस्कार हुए हैं। उसी नगरी में रहते हुए स्वयं को अराजनीतिज्ञ रखना कठिन है। ताईजी वैसी थीं। योगायोग से ऐसे दस लोग किसी भी कार्यक्षेत्र में एक समय में उत्पन्न हुए तो पुणे शहर अवश्य ही सांस्कृतिक कार्यभूमि की करवट लेगा।

१९३६ से पूना में मेरा स्वयंसेवक जीवन प्रारंभ हुआ। कभी विनायकरावजी के घर ७५१ सदाशिव पेठ में जाने का अवसर प्राप्त हुआ। तबसे ताईजी से परिचित हूँ। विनायकरावजी की धर्मपत्नी, गृहिणी के रूप में पहचानता था। उनका बडप्पन समझते समझते कई वर्ष बीत गये। ताईजी सभी स्वयंसेवकों से सहजतासे अकृत्रिमतासे बोलती थीं। इसमें विशेष क्या है?

ताईजी का बडप्पन समझने के लिये तळजाई के ३५,००० स्वयंसेवकों के प्रांतिक शिबिर की ओर मुडना होगा। उस शिबिर वृत्त की पुस्तिका तुरंत ही छपकर उसकी सवा लाख प्रतियाँ दूसरे ही दिन प्रकाशित करनी थीं। उस प्रकाशन समारोह के लिये श्री. ग.म.माजगावकर और ताईजी को निमंत्रित किया था। ताईजी का भाषण मैंने प्रथम ही सुना। भाषण अत्यंत तर्कसंगत था। कार्यकर्ताओं को मार्गदर्शन एवं उत्साह देनेवाला था।

वं. मौसीजी के पश्चात् वे प्रमुख संचालिका हुईं उसमें कोई आश्चर्य नहीं यह अनुभव आया।

कार्यकर्ता के कार्य का यश और उसके गृहस्थ जीवन का यश समानान्तर प्रगती करता है ऐसा नहीं। विनायकरावजी के गृहस्थ जीवन के यश का आलेख इसे अपवाद नहीं था। ताईजी जैसी सहधर्मचारिणी के कारण ही वे ऐश्वर्यवान और यशवंत थे। वैभव के परिमाणों का अभाव ताईजी के समृद्ध सहवास ने नष्ट कर दिया। विनायकरावजी का गृहस्थ जीवन इसी कारण सामाजिक कार्यकर्ता स्वयंसेवक का आदर्श गृहस्थ जीवन है। शनीपार के निकट रहनेवाले इस परिवार का प्रतिबिंब यदि हजारों घरों में प्रतिबिंबित हुआ तो आजके अपने समाज में सुवर्ण चंपक का गंध महकने लगेगा।

अंतिम दो चार वर्ष के पूर्व तक रा.से.स की यह प्रमुख संचालिका स्कूटर पर किसी के पीछे बैठकर पुणे में भ्रमण करती हुई मैंने देखी है। देखते हुए आदर उत्पन्न होता था, आश्चर्य भी और 'कौतुक' भी। वाहन के नमूने से भी कार्य करनेवाले इस नमूने का महत्व अधिक है। यह सहजतया जँचता था। यह तदाकारिता अत्यंत कठिन है।

सेविकाओं के गुणावगुण से ताईजी भली भाँति परिचित थीं। सेविकाओं के प्रति नितांत आत्मीयता का प्रत्यय ताईजी के संभाषण से मैंने लिया है।

ताईजी का व्यक्तित्व सादा था। डॉ. हेडगेवारजी को कोई सौंदर्यशील कहने का ढाढ़स करेगा नहीं। वैसे ही ताईजी के बारे में। ताईजी कुरूप नहीं थी। वह सामान्यजनों जैसी थीं। अब्राहम लिंकन की 'कुरूप' यही ख्याति थी। अमरिका में युद्ध समाप्ति के पश्चात् युद्ध में काम आये एक योद्धा के यहाँ वे मिलने शोकसंवेदना प्रगट करने गए। उस माँ का वह इकलौता बेटा था। लिंकन ने माँ से कहा ''माँ मुझे ही आपका बेटा समझो। तुम्हारा बेटा मृत नहीं हुआ।'' हृदय से निकले इस लिंकन के उद्गारों से वह माता भावविभोर हो उठी, गद्गद हो गयी। लिंकन के मुलाकात के पश्चात् वे कहने लगीं- ''बेकार ही लोग लिंकन को कुरूप बदसूरत कहते हैं- इतना सुस्वरूप, सुंदर पुरुष मैंने देखा नहीं है।''

इसी अर्थ में ताईजी का व्यक्तित्व सौंदर्यशाली था। इस समाज को दीर्घकाल स्मरण में रहेगा। उससे हमें प्राप्त होनेवाली प्रेरणा हतोत्साहित कार्यकर्ताओं में चलने की और चलनेवालों को दौडने की शक्ति देगा।

शिवराय तेलंग

●●●

ताईजी का घर- संतनिवास था।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के डॉ. हेडगेवार एवं मा. काका लिमये के राष्ट्रभक्ति मंत्र से पावन घर- अर्थात ७५१ संघ की दृष्टि से आदर्श घर- समर्पित जीवन।

१९३६ से मेरा इस घर से रिश्तानाता है। नहीं, यह तो मेरा ही घर था। मेरे जीवन में स्वयं का घर, पश्चात संघ- उसके बाद घर तथा मेरे अभिभावक थे ताईजी और विनायकराव।

विनायकरावजी एवं ताईजी का गरीब श्रमिकों के प्रति विशेष लगाव था। इस कारण कसबा पेठ- पूर्व भाग में सैंकड़ों घरों से उनका परिचय था, संपर्क था।

पूरणसिंग- विडी कामगार ताईजी उनके सुखदु:ख के समय उनके घर जाती थीं। ऐसे अनेकों घरों में वे उनका प्रेमाधार थीं। चर्च के निकट झोपडी में टिकाराम राऊत- यह रजपुत अपाहिज परिवार रहता था। टिकाराम प्रभात शाखा का स्वयंसेवक था। उसकी १२x१५ की छोटीसी झोपडी थी। उसी में बकरी, बच्चे, रसोई बनाना, भोजन करना सब कुछ। ताईजी उनके घर में भोजन के लिये गई थीं। दोनों की दरवाजे में आरती उतारी थी। उनके यहाँ की रोटी-चटनी खाई। प्रेम से ग्रहण की। उसके बालकों के साथ आप दोनों की बातचीत हुई। उनके संघ संस्कार का ही दर्शन इससे होता है। पूर्व भाग में श्री. किराड के घर में वे जाते थे। झोपडियों में जाते थे। वही उन दोनों का आनंद था।

आप १८-१८ घंटे काम करती थीं। सदैव मुसकाना, मीठी बातें करना, मीठा खाने के लिये देना। उनको आलस्य नहीं था।

१९४८ के संघ बंदी के समय- आपातकाल में पूर्वभाग में रहनेवाले विश्वनाथ रसाल का येरवडा कारागृह में अचानक निधन हुआ। वह संघ का कार्यकर्ता था। घर में उनकी पत्नी व छोटा बेटा था। उनके आँसु पोंछने हेतु और उन्हें ढाढस बँधाने के लिये ताईजी प्रतिदिन उनके घर जाती थीं। ऐसे एक नहीं अनेकों उदाहरण हैं। आप सब की माता थीं।

१९८४ में भारतवर्ष की वनवासी एवं शहरी बहनों का शिबिर हुआ था। उस समय देश की तीन महान देवताएँ उपस्थित थीं। रानी माँ गाईडिनील्यु-नागालैंड (आयु ७० वर्ष) अनुताई वाघ कोसवाड (आयु ७५ वर्ष) और व ताई आपटे (आयु ७३) इस शिबिर में ४४ बोली भाषाएँ बोलनेवाली २५ राज्य की ७५० वनवासी और ५५० अन्य महिलाएँ सम्मिलित हुई थीं। स्वातंत्र्योत्तर काल में प्रथम ही इस तरह के शिबिर का आयोजन हुआ था। शिबिर में वनवासी कल्याणाश्रम के अ.भा.अध्यक्ष श्री. बाळासाहेब देशपांडे द्वारा इन तीनों देवताओं का सत्कार किया। वनवासी महिलाओं ने अपने अपने प्रान्त की विशेष वस्तु उन्हें भेंट की। वं. ताईजी का भाषण अतीव प्रेरणादायी रहा।

इन तीन देवताओं का सत्कार यह मेरे जीवन का अत्यंत आनंद का क्षण- सुनहरा पर्व! उन ७ दिनों में वं. ताईजी भी तरूण बनकर वनवासी महिलाओं के साथ घुलमिलकर भोजन, हँसी, मजाक भी करती थीं। ताईजी को उनके साथ देखते हुए मेरे मन में उनकी एक पुरानी स्मृति जाग उठी। १९४७ में 'पुणे मंडल' ७ में विठ्ठल रजपूत कार्य करते थे। मंडल ७ में १२-१३ रात्रिशाखाएँ भी खास करके पहलवान दरबारसिंग, विठ्ठल रजपूत के आग्रह से प.पू.गुरूजी की उपस्थिति में एक एकत्रिकरण लेने का तय हुआ। ५०० की उपस्थिति थी। कार्यक्रम वर्णनीय रहा। कार्यक्रम की पूर्वतैयारी झुग्गी-झोपड़ियों में जाना, मिठाई बनाना- ताईजी ने ४-५ दिन अविरत परिश्रम किये। विठ्ठल रजपुत के यहाँ उनकी पत्नी ने गुरुजी की आरती उतारी तो गुरुजी ने सोने की अंगूठी थाली में रखी परंतु उस बहन ने 'आप के कार्य के लिये, इतना कहकर वह लौटा दी। ऐसी असंख्य घटनाएँ उमड़ रही हैं- उन्हें रोकते हुए इतना ही कहूँगा ताईजी जैसा घर लाखों में एक था- वह 'संतनिवास' था।

रामभाऊ गोडबोले

●●●

ऐसा था ताईजी का स्नेह।

वं. ताईजी सुगृहिणी थी। मैं. स्व. आप्पाजी के साथ उनके यहाँ भोजन के लिये जाता था। खानेवाले की रूचि क्या है यह वे कैसे जान लेती थीं पता नहीं। स्व. आप्पाजी की रूचि का पदार्थ अवश्य बनाया जाता। स्व. आप्पाजी आनंद से भोजन करते और कहते 'सरस्वती बाई। आज बहुत अधिक भोजन कर लिये हैं। आपने बनाया हुआ पदार्थ अप्रतीम बना है। मैं भी डट के खाता।' बराड का युवक कितना और कैसे खाता है, यह बात वे जानती थीं- अत: 'नहीं' करने पर भी वे मुझे परोसती थीं। वे जानती थीं कि यह 'नहीं' कहना सच नहीं है। भोजन हो जाने के बाद वे हँसती थीं। उस हँसी में भाव यह रहता था- देखो तुम 'नहीं-नहीं' करते थे न पर मुझे मालूम था कि उस नहीं में कुछ दम नहीं है।

श्री. नाना लाभे

●●●

वे तो कर्मयोग का अध्याय थीं

संत ज्ञानेश्वर रचित ज्ञानेश्वरी ग्रंथ की महत्ता का वर्णन करते हुए संत नामदेव कहते हैं 'एक तरी ओवी अनुभवावी।' अर्थात् एक तो दोहा वास्तव में जीकर देखो। हमारी ताईजी ने एक दोहा तो क्या एक संपूर्ण अध्याय ही जीया और वह अध्याय है कर्मयोग का! हाँ, ताईजी ने संपूर्ण जीवनभर कर्मयोग साधा है। ताईजी को मैंने कभी अलसाए हुए नहीं देखा। इस दीपिका पर कभी कालिख नहीं चढ़ी। इस दीपिका की सारी ज्योतियाँ प्रसन्न उत्साह के साथ जलती रहीं। उन्हें अपनी उमर का कभी भान नहीं था परंतु उनकी आयु का लेखाजोखा मृत्यु ने रखा था। उनके वार्धक्य की आहट मृत्यु को मिल चुकी थी। मृत्यु उन्हें जरा भी कष्ट न देते हुए हलके से उठा ले गई। किसी को पता नहीं चला। ज्ञानेश्वरी के कर्मयोग का अध्याय पूर्ण हुआ और हमारी पीठ पर रखा आशीर्वाद अंतर्धान हुआ।

ताईजी मुझसे चौदह बरस बडी थीं। मैं आयु के आठवें वर्ष से उनके आस-पास खेलता-कूदता रहा हूँ। उनका मायका विद्वांस के यहाँ का। हमारे और विद्वांस कुटुम्ब के घनिष्ठ और घरेलू संबंध थे। ताईजी का विवाह विनायकराव आपटे से हुआ और विनायकराव का राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से विवाह हुआ था। ताई, विनायकराव तथा संघ इस प्रकार से एकरूप हो गए। 'संघ' में स्त्रियों को स्थान नहीं था फिर भी ताईजी विनायकराव जैसे ही 'स्वयंसेवक' थीं। उनका प्रत्येक आचार-विचार संघमय हो चुका था। मुझे उनका भाषण सुनने का संयोग उनके प्रमुख संचालिका बनने के बाद भी कभी प्राप्त न हो सका।

रोज के व्यवहार, बोलचाल में ही वे कभी बडे मोल के शब्द बोल जाती और अलसाया मन प्रफुल्लित हो उठता। सहज सरल बोली में ही कितना उपदेश भरा होता था। वास्तव में ताईजी साकार गीताई थीं।

स्वयं के अपत्यों पर तो सभी-प्राणों से भी बढ़कर प्रेम करते हैं। परंतु अपने आस-पास के सभी बच्चों को माँ जैसा स्नेह देना ताईजी का स्वभावधर्म बन गया था। यह स्नेह कार्यकर्ताओं को किसी स्वार्थवश या राजनीति का सूत्र इस नाते से नहीं वरन् ईश्वरी अंत:करण के फलस्वरूप करना चाहिए जैसा ताईजी ने किया। उनके इस प्रेम सामर्थ्य का अनुभव जितना उनके अपने बच्चों ने लिया है उतना हम बच्चों ने भी। संगठन का सामर्थ्य गणवेश में नहीं, बैंक की जमापूँजी में नहीं, या पॉश कार्यालयों में नहीं होता, वह होता है प्रेम से एकजूट हुए कार्यकर्ताओं के मन में और कलाइयों में। ताईजी ने हमें भाषण तो नहीं दिये परंतु अपने व्यवहार से ऐसे मन गढ़े। आचरण जैसा प्रभावी कथन नहीं होता। उनकी कृति उनकी कथनी थी।

ताईजी का रसोईघर मेरा रूठने का, हठ करने का एक स्थान था। मेरा एक महत्त्वपूर्ण काम था। दस लाख का कर्ज चाहिये था। 'जाणता राजा' (नाटक) के लिये मुझे बैंक से पैसे चाहिये थे। कर्ज मिलने में देर हो रही थी। मैं चिंतित था। मैंने वैसे तो कभी अपनी परेशानियों के लिये ताईजी को कष्ट नहीं दिया था। ताईजी के शब्दों का मोल कितना अधिक है मैं जानता था परंतु मेरा 'जाणता राजा' का काम रूका पडा था।

मैं ताईजी के पास गया। रूठकर बैठा। मायके आई हुई बेटी की तरह तक्रारें, शिकायतें कीं। ताईजी ने वह सब सुन लिया और मुस्कराई। परंतु किसी प्रकार की सलाह या आश्वासन नहीं दिया। मैं विस्मित था। वे उठकर रसोई में गईं और भुनी हुई मूंगफली तथा नारियल की दो बर्फियाँ तश्तरी में मेरे सामने लाकर रखीं, मुझसे बोलीं- हां, खाओ! मैंने अनमने ढंग से कहा- ''मुझे नहीं चाहिये। मेरा 'जाणता राजा' अब मैं बंद करता हूँ, अपने आप ही बंद पड जाएगा। ताईजी- बर्फी खाओ, रूठो मत।

मैं- नहीं!

ताईजी- अच्छा कल आना! मूंगफली का लड्डू बनाकर रखूँगी और सचमुच ही दूसरे दिन मैंने ताईजी के हाथों बना मूंगफली का लड्डू खाया। बैंक से कर्ज का काम हो गया था। ऐसी थी ताईजी। वे ज्ञाता थी। कई बार जीवन में ऐसा होता है। बहुत महान् व्यक्ति के आस-पास हम सतत मँडराते रहते हैं परंतु गर्दन उठाकर, उचककर, आँखों पर हथेली धरकर उस व्यक्ति के मस्तक की ओर देखते ही नहीं? ताईजी के सहवास में मैं साठ सालों तक रहा परंतु अब यह बात महसूस होती है कि उस ममतामयी का बडप्पन (ऊँचाई) अपनी समझ में ही नहीं आया? यह ऊँचाई कंपासपेटी की पट्टी से नापी भी नहीं जा सकती। हमारी ताईजी काया से तो अणुरेणू जैसी छोटीसी थीं परंतु अनंत आकाशसरीखी विशाल थीं, यह विशालता परखने के लिये हमें ही आकाश में उडान भरने की आवश्यकता थी और वह ऊँचाई नापने के लिये हम सबों की रगें भी कम ही पडेंगी।

बाबासाहेब पुरंदरे

सुधियों के आँगन में

शरद रेणु, कु. मंजू नरूली, कमल भाटे, माधुरी मराठे, सौ. सुशिला बडगे,
सरोज मल्होत्रा, सौ. मेधा अभ्यंकर, विनोदकुमारी, लीला, सुदेश डोगरा,
रमा शास्त्री, सिंधु रिसबूड, प्रभा सीता, मंदाकिनी मुजुमदार, प्रमिला काळे,
उषा लिमये, अन्नपूर्णा स्वाँई, रेखा, मालती पांडे, सौ. मेधा नांदेडकर,
सुलभा, सौ. वसुंधरा हरदास, सौ. उषाताई जोशी, बबुताई केवटे,
सौ. माणिक टिळक, माधुरी मराठे, पंकज वली, शांताबेन, सौ. शैलजा काकीर्डे.

तुम्हारे हाथ तो नहीं जल गये

अतीत की स्मृतियाँ अलिखित इतिहास के मौन पृष्ठ होते हैं; जिन्हें व्यक्ति का मन स्मरणशक्ति की विधा से पढ़ता है, समझता है और उन्हीं कथाओं में एक पात्र बनकर उन स्मृतियों को जीवन में एक बार नहीं अनेक बार जीवन्त करके जीता है। इतिहास बना व्यक्ति कितनी बार हमारे पास आता है। दूर होने पर भी परम आत्मीयता का बोध निरन्तर देता रहता है। मन को स्नेह से सिक्त करता है.... जीवन को प्रेरणा देता है।

ऐसा ही व्यक्तित्व रहा है वंदनीया ताई आपटे जी का। वंदनीया ताई जी के साथ रहने का मुझे बहुत कम ही सौभाग्य मिला है परन्तु जीवन के अनेक क्षणों में मैंने उनके सान्निध्य को अप्रत्यक्ष रूप से अनुभव किया। मेरे प्रचारिका-जीवन के पन्द्रह वर्षों में वे सिर्फ एकबार ग्रीष्मकालीन वर्ग के समापन समारोह में आयीं। यह वह वर्ष था जब उनके ७५ वर्ष पूर्ण हुए थे। हम सभी सेविकाएँ उनकी शतायु कामना के लिए ''अमृत महोत्सव'' मना रही थीं। स्वभावत: सभी प्रदेश उनके आगमन, दर्शन की प्रतीक्षा में थे।

ग्रीष्म कालीन वर्ग का समापन एवं वं. ताई जी का अभिनंदन दोनों कार्यक्रमों के सुयोग के कारण प्रदेश भर से कार्यकर्ता बहनें तीन दिन पूर्व आ गईं। वन्दनीया ताईजी कैसी हैं... हमें क्या मार्गदर्शन देंगी.... यही उत्सुकता उनके मन में थी। उ. प्र. की अधिकांश बहनें ऐसी थीं जिन्होंने अपने संगठन ''राष्ट्र सेविका समिति'' स्त्री प्रमुख संचालिका जी को देखा ही नहीं था। उत्साही बहनें वंदनीया ताई आपटे जी का सान्निध्य प्राप्त करने के लिए जहाँ व्याकुल थीं, वहीं उन्होंने सभी व्यवस्थाओं, कार्यक्रमों को अवर्णनीय, श्रेष्ठ बनाने का निरन्तर प्रयास किया। प्रतीक्षा समाप्त हुई... वंदनीया ताई आपटे जी का माननीया बकुलताई देवकुले (तत्कालीन अखिल भारतीय सहकार्यवाहिका) जी के साथ आगमन हुआ। उनके स्वागत का वह दृश्य आज भी स्मरण आता है, तो हर्ष एवं आह्लाद् से दीप्त अनेकों परिचित चेहरे सामने आने लगते हैं। सम्पूर्ण परिसर सेविकाओं ने सजाया था... आगमन के दिन नगर की बहनें वं. ताईजी के साथ भोजन पर आने वाली थीं... परन्तु वे सभी प्रात: से ही आकर उनकी प्रतीक्षा करने लगीं। सभी ओर प्रणाम करने की जैसे प्रतिस्पर्धा लग गयी थी।

तीन दिन के कार्यक्रम योजनानुसार सम्पन्न हुए। हर कार्यक्रम से पूर्व वे मुझसे कहती- ''शरद्! मैं पहली बार तुम्हारे प्रदेश में आयी हूँ, अत: अपने प्रदेश की रीति-नीति मुझे समझाती जाओ।'' मेरा मन उनके इस सहज कथन से भर जाता। आज वर्ग का अन्तिम दिन था- स्नान के बाद बुलाकर पूछने लगीं- ''शरद्! आज क्या कहना है? मेरी हिन्दी तो बहुत अच्छी नहीं, यहाँ के लोग समझ पायेंगे क्या? मैंने कहा- ''ताई जी आप ऐसा क्यों कहती हैं.... आप आयीं यही हमारा सौभाग्य है, आपका यहाँ की (३०० कार्यकर्ता शिबिरार्थी सहित) बहनों के साथ रहना ही सभी की प्रेरणा है।

अन्तत: प्रतीक्षित दिन भी आ गया। लक्ष्मीनगर (मुजफ्फरनगर) की नई मण्डी स्थित वैदिक पुत्री कन्या पाठशाला का प्राङ्गण श्रोता बन्धु भगिनियों से खचाखच भरा हुआ था। सभी समविचारी संगठनों के बन्धु भगिनियों को उनका अभिनंदन करने का सौभाग्य मिल रहा था, इसलिए सभी प्रफुल्ल थे तथा यह देखने, सुनने, जानने को उत्सुक थे कि देश में स्वराज्य की भावना भरने वाले लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक जी की पौत्री कैसी हैं? वर्ग में प्रशिक्षण हेतु आयीं सेविकाओं ने ७५ दीपकों

के मध्य ७६ वाँ दीपक जलाने हेतु एक सुन्दर दीप स्तंभ की रचना की। दीपस्तंभ को पारम्परिक रूप देने हेतु सफेद कांच की छोटी बड़ी शिशियों एवं कांच की प्लेट का सहयोग लिया गया। क्रमश: नीचे से ऊपर की ओर छोटे होते गये मंदिर की आकृतिवाले इस दीप स्तंभ को फैवीकोल से जोड़कर तैयार किया गया। मंच के एक कोने में तीन-चार फूट ऊंचे दीपस्तंभ को एक मेज पर पुष्प से सजा कर रखा गया था। अभिनंदन माल्यार्पण से पूर्व वं. ताई आपटे जी ने सभी दीपक अपने हाथ से जलाये। ७६ वाँ दीपक जलते ही पूरा परिसर तालियों की गड़गड़ाहट से गूँज गया। उधर संचालिका बहन कह रही थी ''बधाई है...बधाई है... आप शतायु बनकर हमारा मार्गदर्शन करती रहें।''

सभी संस्थाओं द्वारा अभिनंदन के उपरान्त गीत चल रहा था

'' हे मनस्विनि! शुचि सुशीला भरत भू की चन्द्रिका,
कोटि-कोटिक भगिनियों में दीप्त तव मन की प्रभा!''

इधर हल्के बढ़ते अंधेरे में वह दीप स्तंभ जगमगाता ऐसा लग रहा था मानो रत्न जटित हो। ७६ दीपों की आत्मा शतगुणी परिलक्षित हो रही थी। दीपों में पर्याप्त स्नेह था इसलिए ज्योति-आभा भी एक-दूसरे से प्रतिस्पर्धा करती दिखाई दी। अचानक मेरे मस्तिष्क में ईश्वर की प्रेरणा हुई कि दीपकों की दाहकता से फैवीकोल पिघल जायेगा, काँच की प्लेटें चटक कर टूट भी सकती हैं। दीपकों के गिरने से मंच पर अग्नि प्रज्वलित होने की संभावना भी प्रबल है।'' अपने मन में आये इस अनर्थकारी विचार के प्रति मैं सतर्क हो गई। लुक्ते-छिपते जल-विभाग तक गयी और एक बाल्टी पानी भरकर मंच के पीछे रख दिया। एक सेविका को समझाकर मैंने बाल्टी के पास खड़ा किया और स्वयं उस दीप स्तंभ के पास खड़ी हो गई।

मंच के किनारे पर खड़ी मुझको दीपकों की तपिश ने छू लिया परन्तु मेरी तो निगाहें कांच की प्लेटों पर थीं। वं. ताई आपटे जी का बौद्धिक चल रहा था। कांच की प्लेटों ने चटकना प्रारंभ कर दिया। मेरे इशारे पर वह बहन पानी की बाल्टी लाकर मेरे पास रख गयी। बौद्धिक के बाद अन्य कार्यक्रम, ध्वजावतरण हुआ। वंदेमातरम् हो रहा था कि काँच की प्लेटों के गरम टुकडे बिखरने प्रारंभ हो गये। सभी दक्ष की स्थिति में हाथ जोड़े खड़े थे। मैंने अपने हाथ खोले और पट-पट गिरते कांच के टुकड़ों, शिशियों, दीपकों को उठा-उठा कर पानी की बाल्टी में शीघ्रता से डालने लगी। वंदेमातरम् समाप्त होते-होते साइड विंग और मेजपर की चादर ने आग पकड़ ली। मैं दोनों हाथों से मसल कर आग बुझाने का प्रयत्न करने लगी.... दो-तीन संघ कार्यकर्ता बन्धु पानी लेकर दौडते आये। मेरा शीघ्रता से सहयोग किया, एक दुर्घटना टल गयी।

वंदनीया ताई आपटे जी यह सभी कुछ अविचलित भाव से देख रही थीं। व्यवस्था एवं योजना के अनुसार उन्हें अध्यक्षा, मुख्य अतिथि के साथ जलपान हेतु जाना था। वे चली गयीं। हम लोग दूर-दूर तक विखरे कांच के टुकड़ों एवं शीशियों आदि को बटोरने लगे। वह क्षण आज भी परम प्रेरणादायक लगता है जब वन्दनीया ताई जी अपने हाथ में एक क्रीम की शीशी लिए भीड के मध्य मुझे तलाशती मंच तक आ गयीं और बोलीं- ''तुम्हारे हाथ जल गये होंगे... दिखाओ!'' मैंने दोनों हाथ उनके सामने खोल दिए। गर्म कांच से अंगुलियों की त्वचा जलना स्वाभाविक ही था। कार्यक्रम की सफलता में डूबी हुई मुझे हाथों में कुछ हुआ है ऐसा अनुभव ही नहीं हुआ। जब वन्दनीया ताई जी के सामने हाथ खोले तो अनुभव हुआ पूरी अंगुलियाँ जल गई हैं। मैं आगे कुछ कह पाती तब तक उन्होंने क्रीम की शीशी खोलकर मेरे हाथ पर लगाना प्रारंभ कर दिया।

मैं उनकी तरफ देख रही थी। जीवन में पहली बार इतनी शीघ्रता से किसी आत्मीय को स्नेह लेपन करते पाया। आँखें सजल हो गईं... हँसकर उनसे बोली- ''ताईजी कुछ नहीं हो रहा!'' ''झूठ बोलती हो। एक गर्म कांच का टुकडा उठाने पर दाहकता मन को छू जाती है। देखो तो सारी खाल जलकर काली-सफेद हो गई है'' उन्होंने कहा जिन दो संघ कार्यकर्ताओं ने सहयोग किया था वे भी वहाँ आ गये और ताईजी उनके हाथ पर भी क्रीम लगाते हुए बोलीं- ''मैं तुम्हारी सबकी माँ हूँ। व्यवस्था के अनुसार मुझे मंच से जाना पड़ा परन्तु मेरा, मन तुम्हारे सभी के लिए व्याकुल था।'' मराठी युक्त हिन्दी में यह स्नेह लेपन सिखा गया कि कार्यकर्ता के प्रति हृदय में परम आत्मीयता एवं मातृभाव होना चाहिए। कार्यकर्ता की सतत चिन्ता करना श्रेष्ठ नेतृत्व का विशेष गुण है।

ये क्षण मुझे अनेक बार समय-समय पर अनुप्राणित करते रहे हैं। तन से तो आहत होने के क्षण जीवन

में नहीं आये परन्तु मन से आहत होने के क्षण बारं-बार आते रहे। इन क्षणों में वंदनीया ताई आपटे जी का वह स्मृति-चित्र मेरे आहत मन पर मलहम लगाकर प्रेरणा देता रहा। आज भी इस प्रेरणादायक, गोपनीय स्मृति को पृष्ठों पर अंकित करते करते आँखें अश्रु पूरित हो गई हैं। उनका यह भाव मेरे हृदय में लबालब भरकर झलकता रहे यही प्रभु से कामना है।

डॉ. शरद रेणु, मथुरा

●●●

वे मेरे पैर दबाने लगीं

''जब वे मेरे पैर दबाने लगीं... तो मैं सिहरकर रोमांचित हो उठी। मुझे ऐसा लगा जैसे मेरा रोम-रोम स्नेह-रस में डूबा जा रहा है। एक विचित्र ऊर्जा शक्ति ने मेरे शिथिल होते शरीर को झटके के साथ खड़े होने की प्रेरणा दी। कितना अलौकिक था मेरे जीवन का वह क्षण।''

आपके मन में कौतुहल होगा कि शाक्ति हीन देह में शक्ति का संचार करने वाली कौन थी? वह था महान व्यक्तित्व वन्दनीया सरस्वती ताईजी का छोटा कद, इकहरा बदन, असीमित वात्सल्य की साकार प्रतिमूर्ति ! यह घटना उनके 'अमृत महोत्सव' वर्ष में सम्पन्न होने वाले मुजफ्फरनगर वर्ग की है। मैं प्रबोध वर्ग की शिबिरार्थी थी। घोष-पथक में वंशी मेरा विषय था। संचलन की तैयारियाँ चल रही थीं कि मैं ज्वर एवं सिर दर्द से पीड़ित हो गई। इस क्रम में पूरा सप्ताह ही निकला जा रहा था। मेरा मन व्यथित होने लगा कि इस वर्ष हमारी प्रमुख संचालिका जी आयेंगी और मैं किसी कार्यक्रम में भाग नहीं ले सकूँगी। वंदनीया सरस्वती ताई आपटे जी का वर्ग में आगमन हुआ... मैंने भी अक्षमता की स्थिति में उनको उठकर देख लिया। आज मैं काफी ठीक थी। डाक्टर ने दूसरे दिन भोजन करने के लिए कह दिया था।

संचलन निकलने की पूर्व रात्रि से ही मैं बार-बार माननीया शरद्दीदी (उस समय पश्चिमी उ. प्र. की प्रान्त प्रचारिका) से आग्रह करने लगी कि 'मैं कल संचलन में चलूँगी'' वे मेरी अशक्तता का स्मरण कराकर स्नेहपूर्वक समझाती रहीं- '' कि चलना परन्तु पीछे चलने वाली गाडियों में बैठकर।' अशक्त तो मैं बहुत हो गयी थी फिर भी आत्मबल जोर प्रोत्साहित करके मन में ५ किलोमीटर चलने का विश्वास पैदा कर रहा था। संचलन से दो घन्टे पूर्व मैं एक बार पुनः आदेश हेतु प्रयत्न करने माननीया शरद दीदी को बाहर देखकर उनके पास गयी और आग्रह करने लगी। उनके फिर-फिर समझाने पर जब मैं जिद करने लगी तो उन्होंने उच्च स्वर में कहा- ''पाँच छह दिन से कुछ खाया नहीं है कैसे चलोगी ५ किलोमीटर ?'' मेरी आँखों से आँसू टपकने लगे।

इतनी देर में मैंने देखा कि वन्दनीया ताई जी, जो दोपहर विश्राम के बाद मुँह धोकर लौट रही थीं, हम दोनों को देखकर पास आकर खड़ी हो गयीं। मैंने जल्दी से आँखें पोंछ लीं। पास आते ही उन्होंने स्थिति की गम्भीरता को समझ लिया। मेरे कंधे पर हाथ रखकर पूछा- ''क्या बात है? शरद् डाँट रही है? यह सभी को बहुत डराती है। बोलो क्या बात है?''

मैंने उनकी तरफ पलकें उठाकर जैसे ही देखा, जोर से रो पड़ी। वे सांत्वना देते हुए बोलीं- ''अब शरद बड़ी नहीं, मैं बड़ी हूँ। बताओ क्या बात है?'' ''अब शरद् दीदी बड़ी नहीं मैं बड़ी हूँ'' उनके इस वाक्य ने मेरे हृदय में आशा का संचार किया। मैंने झट आँसू पोंछ कर कहा-'ताईजी मैं पिछले ६-७ दिनों से बुखार से ग्रस्त थी। सिर में भी माइग्रेन का भयंकर दर्द था। कल ठीक हुई- आज कुछ खाना खाया है। मैं संचलन के घोषगण में हूँ। शरद दीदी कहती है तुम अशक्त हो। पूरा रास्ता नहीं चल सकोगी। अतः गाडी में जाना। आज्ञा नहीं दे रही है पैदल चलने की--- आप आज्ञा दे दो न।''

वं. ताई जी के सामने धर्म संकट था। शरद् दीदी मौन खडी थी। मैं आशा भरी आँखों से उन्हें देखकर पुनः बोली- 'आज्ञा दे दीजिए न।' ताईजी बोली- ''तुम दोनों की बात अपनी जगह सही है। तुम्हारी अस्वस्थता के कारण शरद को ही कष्ट उठाने पड़े हैं। परन्तु तुम्हारी इच्छा है तो संचलन में जाओ। जैसे ही थको वैसे ही गण से निकलकर गाडी में बैठ जाना।'' उनकी आज्ञा मिलते ही मैं प्रसन्न हो उठी। वं ताईजी शरद दीदी

से बोली- 'उसे जाने दो, डाँटना मत।'' इस वाक्य को सुनकर कितना अच्छा लगा मुझे कि शरद् दीदी को भी डाँटने वाली कोई है।

संचलन समाप्त हुआ। मेरा थकना स्वाभाविक ही था। मैं कटे पेड़ की तरह अपने कमरे में बिस्तर पर जाकर गिर गयी। मेरी बड़ी दीदी कु. अंजू एवं उनकी सहेली कु. हर्ष मेरे एक-एक पैर के जूते खोलने लगीं। कमरे की अन्य बहिनें पंखा झलने लगीं। उत्साह में चली तो गयी थी परन्तु अब शरीर झनझना रहा था। आँखों के सामने अंधेरा सा लगा। अचानक मैंने देखा वं. ताईजी गोले के तेल की शीशी हाथ में लिए कमरे में आ गईं। सभी बहनें सकपका गयीं। मैं भी जल्दी से उठकर बैठी। मेरे पास बैठते हुए वे बोलीं- ''लेटी रहो... लेटी रहो। मैं तुम्हारा कमरा पूछते-पूछते आयी हूँ।'

मैं कुछ बोल पाती, उससे पहले ही शीशी से तेल निकालकर मेरे पंजों पर लगाती हुई मेरे पैर दबाने लगीं। मैं सिहर कर संकोच से उठी। बोली- 'ताईजी, मैं ठीक हूँ, कुछ नहीं हुआ।'

''नहीं तुम थक गयी होंगी। भगवान ने मेरे वचन को स्वीकार करके तुम्हें शक्ति दी है। आगे से ध्यान रखो अधिक जिद नहीं करनी चाहिए, बड़ों की बात मानना हित में होता है।''

उन्होंने मेरे पैर दबाते- दबाते एक विशेष शिक्षा मुझे दे दी- ''आज्ञा पालन।'' (मुझे ध्यान आया कि शरद दीदी ने प्रात: वं. ताईजी के सम्मुख एक शब्द भी नहीं कहा था। अच्छी कार्यकर्ता के लिए यह एक विशेष गुण ही होता है।''

वं. ताई जी आज हमारे बीच में नहीं लेकिन यह संस्मरण मेरे हृदय में जहाँ स्नेह प्रेम सद्भाव घोलता है वहीं ध्येय-पथ पर चलने वाले मेरे मन को 'आज्ञाकारी' बनने की निरन्तर सीख देता है; जिसे मैंने अच्छी तरह जीवन में धारणा करने का प्रयत्न किया है।

कु. मंजू नरुला, मेरठ

●●●

प्रथम भेंट

वं. मौसीजी अनेक बार खामगाँव आती थीं। एक बार ऐसी ही आयी थीं, तब मैंने उनको बताया कि मुझे पुणे जाना है। उन्होंने तुरंत बताया ''आप पुणे जा रही हैं तो ताई आपटे से मिलो, उनसे परिचय कर लो। और ताईजी का पता भी दिया। कुछ दिन बाद पुणे में जाने के पश्चात् मैं ताईजी को मिलने गयी। नमस्कार आदि होने के बाद मैं अपना परिचय दूँ, उतने में ताईजी ने पूछा, ''खामगाँव की कमलाताई भाटे न ?'' मेरा आश्चर्यचकित चेहरा देखकर उन्होंने स्नेह से मेरी पीठ पर हाथ रखा और कहा, ''मौसीजी का पत्र आया है वर्धा से। उस स्नेह स्निग्ध प्रसन्न व्यक्तित्व से मैं प्रभावित हो गयी- यही अनुभव मुझे आगे भी आता रहा।

स्नेह का सौजन्य

खामगाँव के लायनेस क्लब की पदाधिकारी भगिनीने बताया हुआ यह अनुभव कार्यक्रम में मेरा परिचय देते हुए उन्होंने कहा- आज की अध्यक्षा कमलाताई भाटे को मैंने पहले देखा नहीं था, तबसे मैं इनको जानती हूँ। एक बार मैं नागपुर से आ रही थी तब मुझे अचानक बुखार हुआ। मेरे ही डिब्बे में राष्ट्र-सेविका समिति की प्रमुख संचालिका थीं, (उनका पद मुझे बाद में पता चला) उन्होंने अपने स्थान पर मुझे लिटाया। कुछ ओढने के लिये दिया- दवाई भी दी। कुछ समय बाद बुखार उतरा और मुझे आराम मिला। फिर अच्छी बातचीत हुई। शेगाव में उतरते समय मैं उनके आभार मानने लगी तब उन्होंने हँसकर कहा- 'अरी - आप तो खामगाव की याने हमारी कमलाताई के गाँव की याने हमारी ही। संकोच क्यों करती हो ? ऐसी थी हमारी ताईजी- आज केवल स्मृतिशेष हुई है।

कमल भाटे- खामगांव

●●●

निष्ठा तारकशक्ति

वं. ताईजी सबको बताती थीं संगठन से एकनिष्ठ रहने की आयु बढाते रहो। अपने अंतिम पत्र में उन्होंने लिखा है- संगठन पर निष्ठा रखो, आनंद, शांति, समाधान, जीवन में चाहिये तो अधिक समय देकर कार्य करना है। संगठन के प्रति निष्ठा यह तारकशक्ति है। उसी के आधारपर संगठन का गौरवमय मार्गक्रमण होगा। उनका यह आदर्श जीवन में लाना यही उनको वास्तविक श्रद्धांजलि है।

वह स्फूर्ति तरुणियों को लजानेवाली थी

सन् १९८३ दक्षिण भारत के कांकतीय साम्राज्य का स्थान। वं. ताईजी का प्रवास जिले जिले में तय किया था। बैठकें, लोगों से मिलना जुलना, कहीं शिबिर ऐसे कार्यक्रम तय थे।

एक शिबिर इंदूर (निजामाबाद) जिले में लेने का तय हुआ। शिबिर के समारोप का कार्यक्रम था। सभी सेविकाओं को संपत की आज्ञा दी जा चुकी थी। प्रान्त अधिकारी, वं. ताईजी और अध्यक्षा के साथ मंचपर विराजमान हो गयीं। समय हो गया यह देखकर मैंने 'दक्ष' की आज्ञा दी। वं. ताईजी को ध्यान में आया कि अब ध्वजारोहण होगा और आश्चर्य की बात यह कि अध्यक्ष और प्रान्त अधिकारी मंच से नीचे पहुँचे उसके पहले वं. ताईजी चार-पाँच फूट ऊँचे मंच से कूदकर ध्वज से तीन फूट के अन्तर पर अपने स्थान पर खडी हो गयीं। ७३ वर्ष की वं. ताईजी की गतिशीलता, समयसूचकता, और स्फूर्ति तरुणियों को भी लजानेवाली थी।

माधुरी मराठे

●●●

क्यों सब ठीक है न?

वं. ताईजी का स्वर्गवास हुआ तब मैं महाड में थी। खबर सुनकर ऐसा लगा जैसे अपने घर के ही बडे व्यक्ति से हम बिछुड गये हैं। दि. १८/३/९४ के श्रद्धांजलि कार्यक्रम के लिये मैं और मेरी पुत्री सौ. नीलिमा पुणे पहुँची। श्रद्धांजलि देने वाले सभी ने वं.ताईजी के मातृत्व का गौरव किया। प्रत्येक को वं. ताईजी में अपनी माँ ही मिली है।

वं.ताईजी का वैसे बहुत कम सान्निध्य मुझे मिला। परन्तु अल्प सहवास में भी जो अनुभव मुझे आया है- वह चिरस्थायी है। वं. ताईजी जब जबलपूर आयी थीं- तब एक समय का भोजन मेरे यहाँ रखा था। वं. ताईजी आएंगी- प्रमुख संचालिका, इतना बड़ा व्यक्तित्व अपने घर आ रहा है- सब ठीक होना चाहिए- कुछ कमी नहीं होनी चाहिए- इस विचार से मन में कुछ घबराहट थी। गाडी का हॉर्न बजा- मैं बाहर आई- वं. ताईजी की प्रसन्न-शान्त- श्यामल-तेजस्वी मूर्ति घर के अन्दर प्रविष्ट हुई। मैंने चरण छुए- उन्होंने पीठ पर प्रेम से हाथ फेरा और पूछा- 'क्यों सब ठीक है न?' इन शब्दों के साथ मेरी घबराहट कहाँ गई पता नहीं- ऐसा लगा जैसे मेरी माँ- मेरी मौसी ही आयी हो। घर में सभी से- लडका बहू नाती- पति परिचय हुआ। हँसी-खुशीसे भोजन हुआ। समिति की सर्वोच्च अधिकारी- परन्तु व्यवहार में कहीं भी इसका अहसास नहीं हो रहा था। कितनी सरल, कितनी स्नेहपूर्ण माँ की ममता से ही वे हम सभी को देखती थीं। उन्होंने तुरन्त कहा- कौंसे की कटोरी से शुध्द घी तलुवे पर घिसो- इससे आराम होगा। काम करना है न? तो तबीयत अच्छी रखनी है। कितना अपनत्व।

अविरत कार्य करते चलो

इंदोर की प्रान्तीय बैठक- म. प्र. सम्मेलन की थी। मैं और चि. क्षमा (मेरी पुत्री) गये थे। चि.क्षमा ने शोध प्रबंध पूरा किया है- यह मालूम होने पर मा. कुसुमताईजी साठे ने कहा 'क्षमा, अब एक साल समिति कार्य विस्तार हेतु दो- विस्तारिका निकलो। मैंने कहा- क्षमा का विवाह पक्का हो गया है- अन्यथा एक वर्ष कार्य हेतु देती। वं. ताईजी को मिलने गये, चरण छुए। वं. ताईजी को भी मालूम हुआ कि चि. क्षमा का विवाह है- तो उन्होंने क्षमा और ससुराल के लोग सभी की जानकारी पूछी। चि. क्षमा को पास बैठा कर, प्रेम से बोलीं 'देखो विवाह के पश्चात् इतना काम तो नहीं कर पाओगी। पर इसका बुरा नहीं मानना। पहले अपना घर देखो- घर के सभी लोगों को अपना बना लो। फिर काम करने में कोई दिक्कत नहीं आएगी। ऐसा ही हमारा कार्य बढ़ता है। घर गृहस्थी सम्हालते हुए कार्य करने का मन्त्र उन्होंने दिया। उनके वे शब्द, उनका वह स्पर्श, उनकी वह ममता अब कहाँ मिलेगी?

सौ. सुशीला बडगे, जबलपूर

●●●

मैं दंग रह गयी

वन्दनीया ताईजी से मेरा परिचय पहली बार २० नवम्बर १९९३ की शाम को मा. मंजू जी गुप्ता के घर पर हुआ। जब जालन्धर में वं. ताईजी वार्षिक उत्सव पर पधारी थीं। उनसे मिलकर ऐसा लगा जैसे हम बहुत पहले से परिचित हैं। कारण उनका शान्त, स्नेहमयी व्यवहार। अगला दिन २१ नवम्बर कार्यक्रम का दिन था तथा २२ नवम्बर सुबह वं. ताईजी को जम्मू जाना था। जम्मू के लिये गाडी जालन्धर कैंट से चलती है। उस दिन मेरा स्वास्थ्य भी ठीक नहीं था। मुझे स्टेशन पर पहुँचने में देर हो रही थी इसलिये सोच रही थी कि ताईजी से कोई बात भी नहीं हो पाएगी। किन्तु स्टेशन पर पहुँच कर पता चला कि गाडी एक घंटा लेट है। हम लोग प्रतीक्षालय में बैठे थे। मैंने ताईजी को बताया कि मैं अकसर पुणे आती रहती हूँ, अब जब भी वहाँ मेरा चक्कर लगा तो आपके पास जरूर आऊँगी। ताईजी हमें पुणे आने का निमंत्रण दे रही थीं तो मैंने उन्हें बताया कि मेरी देवरानी का बेटा पुणे में पढ़ता है उसी को मिलने हम वहाँ आते रहते हैं। ताईजी की स्मरणशक्ति इतनी तीव्र थी कि जब दिसम्बर में मेरी देवरानी उनसे मिलने पुणेमें उनके निवास पर गई तो उन्होंने उसे पहचान लिया तथा जालन्धर के सबका हाल पूछा।

कुछ समय बाद गाडी आने की घोषणा हुई। हम लोग प्लेट-फॉर्म पर पहुँचे। यह प्लॅटफार्म नम्बर एक था। उसी समय दूसरी घोषणा हुई कि गाडी एक नम्बर के बजाय तीन नम्बर पर आ रही है। तीन नम्बर के लिये पूरा पूल चढ कर दूसरा प्लॅटफार्म पार करना था। हमें चिन्ता हुई कि हम लोग तो भाग कर पहुँच सकते हैं किन्तु वं. ताईजी इतना तेज़ कैसी चलेंगी तब ताईजी ने कहा कोई बात नहीं चलते हैं। अभी पुल पर पहुँचे थे कि गाडी प्लॅटफार्म पर आती दिखाई दी। हमने और तेज चलना शुरू किया, वं.ताईजी भी हमारे बराबर उसी तरह से भाग रही थीं तथा कह रही थीं कोई बात नहीं हम पहुँच जाएँगे। हमें चिन्ता हो रही थी क्योंकि यहाँ गाडी केवल पाँच मिनट ही रुकती है। ताईजी का डिब्बा भी प्लेटफार्म के बाहर जाकर लगा था जहाँ पत्थर पडे होते हैं और उन पर चलना और भी मुश्किल हो रहा था। जैसे तैसे भागते भागते डिब्बे तक पहुँचे। वं. ताई जी को डिब्बे में चढाया उनके साथ मा. मीनाताई तथा मा. निर्मलजी थीं। उसी समय गाडी चल पडी। इतनी उमर में वं. ताईजी की चुस्ती देख कर मैं दंग रह गई।

सरोज मल्होत्रा, जालंधर

●●●

अहंकारी ना बनो

वं. ताई को मैंने प्रथम जो देखा तो वे एक मेले के लिये, धार्मिक मेले के लिये विरार में आयी थीं। बातों बातों में मेरी माँ से उन्होंने पूछा ''आप के मैके का नाम क्या? माँ ने कहा 'आपटे' तुरन्त ताईजी ने कहा ''अरे वा! आप तो हमारी अपनी ही हैं।'' यह उद्‌गार सब लोगों के सामने बडे प्यार से ताईजी के मुँह से निकले। वह छोटीसी मूर्ति-काली-साँवली ताई मेरी माँ को अपने मैके की याद दे कर खुश कर रही है। स्वाभाविक ही माँ के और सभी के मन में अपनत्व निर्माण हुआ।

मेरी नानी की उम्र की यह महिला इतनी दूर का प्रवास भी करती है, बडी बडी सभा में भाषण भी देती है। उनका यह आत्मविश्वास देखकर ही हमलोग चकित हुए। ताई कभी राजनीति पर अपना स्वतंत्र मत देती है तो कभी सामाजिक चिन्तन कर रही है। इन बातों से मैं अत्यंत प्रभावित हुई।

हमारा पाथेय

उसके बाद पुणे में मेरा आना जाना आरंभ हुआ, ताईसे मिलना जुलना शुरू हुआ। ऐसे एक प्रसंग में ताई को लेकर मुझे कार्यक्रम में जाना था। मैंने रिक्षा रोका और ताई को बुलाने ऊपर ताई के घर गई। ताई और मैं दोनों ही नीचे आए। ताई ने देखा रिक्षा खडा है, उन्होंने कहा 'अरे! रिक्षा क्यों रोका? अपने को यहाँ पास ही तो जाना है। व्यर्थ खर्च करना पैसे का अपव्यय होता है ना। इस बात से मुझे नई दृष्टि मिली। सामाजिक काम करनेवालों को बहुत सोचना चाहिए। उनको मितव्ययी होना चाहिये, सीधा सादा रहना चाहिये यह सीख मुझे अनायास ही मिली। धीरे धीरे हमारी ताई वं. ताई कब हुई, पता ही नहीं चला।

अपने अपने क्षेत्र में काम करने के लिये हम जब

निकलीं तब ताई ने हमारी एक बैठक ली। वह बैठक अविस्मरणीय है। उसमें उन्होंने अपने ध्येय का सार छोटे-छोटे उदाहरण देकर हमें समझाया। उसमें दी हुई सीख और सावधानता का इशारा कभी भूल नहीं सकते। पहले तो हमलोग घर छोडकर काम करने निकलीं इसलिये हमारा अभिनंदन किया ताईने और आगे कहा — ''आप लोग बाहर जा रहे हैं। कभी भी किसी पर नाराज नहीं होना। पर साथ साथ जल्दी में कोई निर्णय नहीं लेना। तुम्हारे रहनसहन और प्यार से दूसरों को जीतना। कभी नाराजगी होगी तो भी बाहर प्रकट ना हो इसकी कोशिश करना। उन्होंने एक मराठी कहावत बताई। (गुस्सा तनिक केवल ओठों से निकले परंतु प्यार मात्र अंत:करण से उमडकर आए।) यह मराठी कहावत उनके अपने जीवन में प्रत्यक्ष व्यवहार में थी। आप लोग आपस में बडे प्यार से रहो। जहाँ जाओगी वहाँ हँसमुख रहो। अहंकारी ना बनो। अपने काम पर दृढ विश्वास रखो। जो भी मत तुम्हारा होगा उसपर विचार करो। उसका अभ्यास करो, जीवन में इससे लाभ ही होगा। आप सब लोग यशस्वी होंगी। अपने स्वास्थ्य की चिंता करो। कभी भी किसी भी तरह की मदद लगी तो मुझे नि:शंक होकर सूचना दो।''

उन्होंने दिया हुआ यह पाथेय तथा हमारे प्रति व्यक्त किया हुआ विश्वास यह लेकर ही हम सब बैठक से बिदा हुए।

अपने काम में व्यस्त होते हुए भी कभी कभी उनकी एकाध चिट्ठी आ जाती और उसमें अपनत्व का भाव प्रकट होता। क्यों कि ताई लिखती ''आज ही प्रात:काल तुम्हारी याद आई थी और इसलिये सहज ही तुम्हें यह पत्र लिख रही हूँ।''

कितना जबरदस्त जादू था इस वाक्य में। कितना प्रेम टपक रहा था। और उससे हमारा उत्साह द्विगुणित होता था। कितना अलग सा ही ढंग था हमें जागृत करने का। सर्वसामान्य सेविकाओं की भी याद उनको आती थी यह देखकर मन खुश हो उठता था।

मेरे जीवन की एक ऐसी ही याद जो मैं कभी भी भूल नहीं सकती। मेरी माँ की मृत्यु हुई तब वं. ताई, जो उसी दिन परप्रांत के प्रवास में जानेवाली थी, स्वयं ही मेरे जैसे एक सर्वसामान्य विस्तारिका से मिलने आईं। उस समय ताईने केवल अतीव स्नेह से मेरी पीठ पर हाथ रखा। वह हाथ मुझसे बहुत कुछ कह रहा था। किसी के सांत्वन के लिये शब्द ही चाहिये ऐसा नहीं। भावनात्मक हाथ भी फेरा तो भी सांत्वना हो जाती है।

ताई — हर एक ने अपना जय और पराजय भी विश्वास से कहने का एक आश्वस्त स्थान! अपने ही व्यवहार से तथा वाणी से आदर्श सामने रखनेवाली, अपनी ममता के स्पर्श से सेविकाओं में दस हाथी का बल निर्माण करनेवाली और वंदनीय शब्दों की सच्ची प्रचीति देनेवाली हमारी ताई जैसा परिपूर्ण व्यक्ति विरला ही होता है।

सौ. मेघा अभ्यंकर, पवई

●●●

पूर्व में आभा निखरती

१९९१ का जनवरी मास। वं. ताईजी का पूर्वांचल का प्रथम बार प्रवास हो रहा था। असम के बाद वे मणिपूर आने वाली थीं। पूर्वांचल की सह प्रमुख मा. वासंतीदी और प्रमुख कार्यवाहिका मा. प्रमिला ताई भी उनके साथ थीं। वं. ताईजी आयीं उसके दूसरे दिन मकरसंक्रांति थी। विविध क्षेत्र के कार्यकर्ताओं के साथ बातचीत का एक कार्यक्रम रखना था उसके लिये यही दिन औचित्यपूर्ण होगा ऐसा सोचा। तील के लड्डू लाये- यहाँ तो काले तील के ही लड्डू मिलते हैं। वं. ताईजी ने पूछा तब मैंने बताया। वं. ताईजी भी अपने साथ तीलगुड लायी थी। वह उसमें मिलाया- उन्होंने कहा देखो विनोद, ये तीलगुड जैसे जुड गये हैं न वैसाही हमको जुडना है। निमंत्रित बंधुबहनें आनेपर समिति के कार्य के बारे में चर्चा हुई। मणिपुर में स्त्रियों पर अन्य प्रांतों जैसे बंधन नहीं हैं अत: यहाँ समिति का कार्य द्रुतगति से बढना चाहिये ऐसा उन्होंने आग्रहपूर्वक बताया। साथ साथ यहाँ की जीवन पद्धति, स्त्रियों की समस्याएँ आदि के बारे में जानना चाहा। आनेवाले हर व्यक्ति से पारिवारिक बातें कीं। अपने देश के प्रति कर्तव्य के बारे में अपनी सरल स्नेहसित व्यावहारिक भाषा में बताती रहीं। विघटनकारी तत्त्व कैसे प्रभावी हैं यह जानकर वे व्यथित हो गयीं परंतु विश्वासपूर्वक कहा कि यह परिस्थिति निश्चित बदलेगी- अगर उसके लिये हमारा संकल्प हो तो।

-विनोद कुमारी, इंफाल

●●●

मैं गावसकर को पहुँचा दूँगी तुम्हारा पत्र

असम के प्रवास में वं. ताईजी के निवास की व्यवस्था इला शर्मा के घर की थी। उनकी सास भी अपने जमाने में सामाजिक कार्य से जुड़ी थी। वं. ताईजी का अपने घर में निवास उनको बडा सौभाग्य का लगा। दिन भर वं. ताईजी अलग अलग कार्यक्रमों में व्यस्त रहीं। रात भोजन के पश्चात् घर के सब लोग- बालबच्चे सब वं. ताईजी के साथ बातचीत करने के लिये उत्सुकता से एकत्रित हुए। सब बच्चे वं. ताईजी के साथ उनके मंचक पर चढ बैठे। वह उनके साथ बातचीत कर किसीको क्या क्या आता है पूछताछ कर रही थीं। बच्चे हार्मोनियम, तबला उठा कर लाए और उनको गीत सुनाए। बच्चों के साथ वह इतनी घुलमिल गई कि बच्चों को भी हम उनको प्रथम बार मिल रहे हैं यह महसूस नहीं हुआ। कई प्रकार से बातचीत चलती रही। छोटे मानस ने अचानक पूछा- ''ताईजी, आप कहाँ रहती हैं? ''पुणे में'' वं. ताईजी ने उत्तर दिया। 'याने बंबई के पास न?'' विश्वजित ने पूछ ही लिया। वं. ताईजी ने हाँ कहते ही मानस ने पूछा- ''ताईजी, मैंने गावस्कर के नाम एक पत्र लिखा है आप उनको दे देंगी? उसकी माँ ने उसको रोकना चाहा-, परंतु वह रोक ना पायी। और वं. ताईजी ने भी हँसते हँसते कहा कि'' दे दो पत्र- मैं गावस्कर को पहुँचा दूँगी तुम्हारा पत्र।'' मानस खुश हो गया। वं. ताईजी छोटे बच्चों के प्रति कितनी स्नेहशील थीं, उनकी निराशा न हो इसका कितना ख्याल रखती थी।

लीला, नौगांव

●●●

मातृभूमि से पलायन नहीं करेंगे

वं. ताईजी नवंबर में जम्मू आई थीं। हम भद्रवाह किश्तवाड की बहनें उन्हें मिलने गयीं। हमने उनको वहाँ के हालात बताए। अत्याचारों, अपमानों की करूण कहानी सुनकर उनकी आँखों में आँसू आए। हम सब बहनों की पीठ पर अपना स्नेहपूर्ण हाथ फेरते हुए उन्होंने हमें धीरज रखने को कहा। अगले क्षण उनका रूप बदल गया। आँखों में आँसू नहीं थे। वे ही आँखें दृढता से झलक उठीं। उन्होंने कहा कि हम भारत की मुन्नियाँ ऐसी हीन दीन नहीं बनेंगी। याद करो वह दुर्गाभवानी। वही साहस तथा निर्भयता धारण कर असुर शक्ति का विनाश होने तक विश्राम ना करो। हम अपनी मातृभूमि से पलायन नहीं करेंगे। दूसरों को भी नहीं करने देंगे। हमने एक बार कश्मीर घाटी के अपने मकान छोड दिये। परिणाम क्या हुआ?

इन सभी संकटों की जड है हिंदुओं का संगठित नहीं होना, राष्ट्रीय हित का विचार संगठित रूप से नहीं करना। यह समझ कर उठ कर काम करेंगे तो निश्चित परिस्थिति बदल जाएगी।

मैं जुनागढ बैठक में नहीं आ पायी। बडा अफसोस है कि वं. ताईजी की मातृमूर्ति का दर्शन होने से वंचित रह गई।

सुदेश डोगरा, भद्रवाह

●●●

मैं नहीं 'हम'

ताईजी सदा 'हम' शब्द का ही प्रयोग किया करती थीं। कभी मैं शब्द उनके मुँह से नहीं सुना। वं. ताईजी का कहना था कि 'हम' में अपनत्व है, अपनापन है और मैं में अभिमान और अहंकार। उन्होंने हमेशा अहं व अहंकार से बचने के लिये सावधान किया। ताईजी ने सदा देने में ही विश्वास किया है। लेने में नहीं। देने में ही सच्चा सुख व सन्तोष है ऐसा उनका कहना था। जम्मू प्रवास में ताई ने जिस गाडी का इधर उधर आने जाने में प्रयोग किया उसके ड्राइवर के खाने पीने के बारे में वे पूछताछ करती रहीं। धन के रूप में आशीर्वाद देना वे नहीं भूलीं। बात देने की नहीं ध्यान की है। छोटी से छोटी बात का भी उन्हें ध्यान हमेशा रहता था।

रमा शास्त्री, कार्यवाहिका जम्मू

●●●

शाखा यह संजीवनी

वं. ताईजी पुणे में जब भी रहती थीं प्रति दिन किसी ना किसी शाखा में जाने का क्रम था। छोटी छोटी शाखाओं पर भी वे जाती थीं तब वहाँ की सेविकाओं को आनंद भी होता था- कभी संकोच भी होता था। परंतु ताईजी कहती थीं शाखा यह मेरी संजीवनी है। मन के तनाव, बेचैनी, उदासी शाखा में आने से कम होते हैं- मन पुन: स्वस्थ, स्थिर होता है, अधिक सक्रिय होता है। मैं प्रथम सेविका हूँ बाद में प्रमुख संचालिका। सेविका के नाते शाखा में नित्य आना यही अपना प्रमुख कर्तव्य है।

अन्यों के प्रति उदार, स्वयं के प्रति कठोर

स्व. वं. ताईजी जबलपुर आयी हुई थीं। मेरे घर उनका निवास था। उनकी आत्मीयता का अनुभव तो आ ही रहा था। किंतु सब के लिये ममत्वभाव रखनेवाली वं. ताईजी स्वयं के स्वास्थ्य के प्रति कितनी उदासीन थी इसका एक अनुभव आया। मेरे पैरों में बिवाइयाँ हो गई थीं। अत: मैं रात को पैरों के तलवे को सरसों का तेल मल रही थी। मेरी दृष्टि वं. ताईजी के पैरों की ओर गई। उनके पैरों में तो इतनी गहरी बिवाइयाँ थीं कि मुझे आश्चर्य हुआ कि दिनभर वे चल कैसे सकती थीं। मैंने कहा मैं तेल मल देती हूँ। किंतु वं. ताईजी ने इतनी बेफिक्री आवाज में उत्तर दिया कि मैं अधिक बोल न सकी। वे बोलीं रहने दो। क्या इतना ध्यान देना है। मुझे अब आदत हो गई है।'' मेरे बारबार कहनेपर भी उन्होंने ध्यान नहीं दिया और न मुझे तेल मलने दिया। कार्य में मग्न व्यक्ति अपने शरीर के प्रति कैसे उदासीन हो जाते हैं इसका वह एक अनुभव था।

वास्तव में मुझे ध्यान आया कि एक संगठक को स्वयं के प्रति कठोर एवं अन्यों के प्रति उदार होना चाहिए।

सिंधु रिसबूड, जबलपूर

●●●

निश्चिंत मन से जाइए

१९८२ समिति का अ. भा. संमेलन बंगलोर में होनेवाला था। वं. ताईजी प्रमुख संचालिका बनने के पश्चात् का यही प्रथम विराट कार्यक्रम था। उनके शांत, स्निग्ध, बाह्य चमकदमक विरहित व्यक्तित्व की कसौटी थी। नेतृत्वविषयक अपेक्षाएँ, कुतूहल सभी के मन में था। कार्यक्रम के पूर्व दिन वे वहाँ पहुँची थीं। पथसंचलन यह महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम था दूसरे दिन। उसके लिये प्रशासकीय अनुमति के लिये निवेदन दिया। वह अस्वीकृत होकर वापस आया। पथसंचलन नहीं? यह कैसे होगा? सभी तरुण सेविकाएँ धूमधाम से तैयारी में लगी थीं। उनको यह बात पताही नहीं थी। पुलिस आयुक्त के पास सब चक्कर काट रहे थे। यश नहीं आ रहा था। आयुक्त महोदय ने रात १० बजे पुन: मिलने के लिये आने को कहा। रूक्मिणीअक्का, प्रभा नारायण, आदि बहनों के साथ श्री नरहरीजी गये। जाने से पूर्व वं. ताईजी को मिलने आये। सभी ने चरणस्पर्श किया। वं.ताईजी ने उनको आशीर्वाद देते हुए कहा कि निश्चिंत मन से जाइए। आपका काम होगा। अपना कार्य ईश्वरी है। बाधाओं के बादल आते जाते रहेंगे। जाओ, यशस्वी हो कर आओ। आने पर मुझे बताना। मेरे कमरे का दरवाजा खुला मिलेगा। घडी दौड रही थी। वं. ताईजी अपने कमरे में शांतचित्त बैठी थीं। हम सब वहीं थे। १२ बजे के बाद सब लोग लौटे। अनुमती प्राप्त कर के ही आए। अतीव श्रद्धाभाव से सभी ने ताईजी को प्रणाम किया। यह दृढ आत्मविश्वास कहाँ से आया? यह तो जगज्जननी का आशीर्वाद था। संगठन का नेतृत्व- आत्मविश्वास पूर्वक तेजस्विता से प्रस्फुरित हुआ।

प्रभा- बंगलोर

●●●

यह हृदय हो राष्ट्र अर्पित

रुक्मिणी वरंगल जिले की कार्यवाहिका। उनको कर्करोग है ऐसा ध्यान में आने पर उसके पैर का आपरेशन कर वह काटना पडा। पुणे के पास खडकी अस्पताल में कृत्रिम पैर के लिये वह दाखिल हुई थी। वं. ताईजी प्रवास में थी। वापस आने पर उनको समाचार मिला और यह भी पता चला कि वह दूसरे दिन वरंगल लौटनेवाली है। रात हो रही थी- तेज बारिश हो रही थी। अपनी एक कार्यकर्ता बहन बीमार है और मैं उसकी पूछताछ ना करूँ? वं. ताईजी को बडी वेदना हुई। उतनी रात उन्होंने एक संघ बंधु को फोन कर के बताया 'मुझे अस्पताल जाना है आज- अभी। कुछ व्यवस्था होगी?' वं. ताईजी ने अनेक लोगों के लिये इतना कुछ दिया है कि उनका शब्द नहीं मानना संभव ही नहीं था। वे बंधु गाडी लेकर आये। गाडी कुछ दूर जाने पर खराब हुई। तब ताईजी ने कहा कि स्कूटर होगी तो देखो। वं. ताईजी को इतने दूर स्कूटर पर ले जाने का उस कार्यकर्ता को संकोच हो रहा था। वं. ताईजी ने कहा, ''कोई बात नहीं तुम निश्चिंत हो कर स्कूटर चलाओ। भूल जाओ ताई तुम्हारे पीछे बैठी है।'' स्कूटर पर बैठकर ताईजी वहाँ पहुँची इतनी रात, बारिश में ताईजी को

देख कर रुक्मिणी की आँखों में आँसू आ गए। ऐसी ममता तो केवल माँ ही दे सकती है ऐसा उन्होंने कहा। तब वं. ताईजी ने कहा- 'मैं माँ ही हूँ तुम्हारी। संगठन के नाते रिश्ते ऐसे ही पक्के होते हैं।' रुक्मिणी को अपना एक पैर जाने का दुःख था वह भी कर्करोग के कारण। थोडीसी निराशा उनके चेहरे पर देखते ही ताईजी ने उसके सर पर हाथ रखकर ''रुक्मिणी- तुम तो अच्छे कार्य से जुडी हो ना, ईश्वर सब कुछ ठीक करेगा। एक पैर गया तो क्या अपना हृदय है न समिति को देने के लिये। वह दे दो। उसीको दृढ बनाओ।''

अब रुक्मिणी की आँखों में आँसू थे कृतार्थता के। अपने संगठन की सर्वोच्च पदाधिकारी अपने जैसे एक सामान्य कार्यकर्ता की इतनी चिंता करती है यह अनुभव सुखद था।

रुक्मिणी को कृत्रिम पैर का सहारा लेना ठीक नहीं लगा। आज भी वैसाखी के सहारे वह समिति का कार्य वं. ताईजी के कथनानुसार कर रही है। वं. ताईजी के स्वर्गवास का समाचार मिलते ही उसको सचमुच अपनी माँ के चिरवियोग का दुःख हुआ।

सीता, वरंगल

●●●

भजन मुझे याद हो गया

वं. ताईजी एक विलक्षण व्यक्तित्व! १९९० में मैं मेरी सास कमलताई जवखेडकर के साथ वं. ताईजी के यहाँ गयी थी। वैसे नागपूर में उनकी भेंट कई बार होती थी। हम पहुँचे तब वं. ताईजी पूजा कर रही थीं। पूजा के पश्चात् उन्होंने घर की पूछताछ की। पश्चात् कार्यक्रम कौन-कौनसे चल रहे हैं पूछा। उस समय रामशिला पूजन के कार्यक्रम जोर शोर से चल रहे थे। उस समय 'तेरा अक्षरी मंत्र जपा। श्रीराम जयराम जयजयराम' यह भजन हम गाते थे। वह भजन मैंने उनके पूजा घर में गाया। उन्हें वह बहुत पसंद आया। उसकी एक प्रति मैंने वं. ताईजी को दी। कुछ समय के पश्चात् वं. ताईजी नागपूर आयीं। मेरी भेंट होते ही उन्होंने बताया मंदाताई वह भजन मुझे याद हो गया है। इस आयु में उनकी स्मरणशक्ति तथा नया नया ग्रहण करने की शक्ति देखकर मैं आश्चर्यचकित हो गयी।

मंदाकिनी मुजुमदार, नागपुर

●●●

चौका सम्हाल लिया

एक बार वं. ताईजी मेरे यहाँ आयी थीं। उस समय मेरा बायाँ हाथ फ्रॅक्चर होने के कारण गले में बंधा था। मैं एक हाथ से गृहकार्य कर रही थी। घर में काम करने अनायास मेरी भांजी आयी हुअी थी। परन्तु वं. ताईजी आते ही घर की स्थिति देखकर उन्होंने चौका सम्हाल लिया। ना कहने पर भी उन्होंने बेसन बनाया और वह भी पुणे में बनाते हैं वैसा। खोबडा, जीरा वगैरह डालकर खूब बढिया! बेसन ताईजी के हाथ का बना हुआ सभी ने खाया और बहुत तारीफ की। ताईजी का खाना बनाना और प्रेम से सबको खिलाना यह तो अभिजात गुण था।

१९८४ में दिसंबर माह में भोपाल में गॅस रीसन हुआ। यह हादसा भयंकर था। पूरे भारत से पैसा एकत्रित करके वं. ताईजी वह राशि देने भोपाल पहुँची थी। वहाँ तीन जगह समिति द्वारा सिलाई केन्द्र खोले गये। स्वयं वं. ताईजी के हाथों इन केंद्रों की शुरूवात हुई।

प्रमिला काळे, भोपाळ

●●●

शांत तेजोमय प्रदीप

वं. ताईजी का और मेरी माँ का पुराना परिचय था। अपने रिश्तेदारों से भी अधिक ममता उनसे हमें मिली। वं.मौसीजी याने नेतृत्व और कर्तृत्व तो वं. ताईजी याने कर्तव्य और त्याग का प्रतीक। वं. मौसीजी याने बादलों में चमकने वाली विद्युत् तो वं. ताईजी याने मंदिर में जलनेवाला स्निग्ध नंदादीप! मौसीजी का कर्तृत्व, नेतृत्व अवर्णनीय तो ताईजी का परमत्याग व प्रसिद्धि पराङ्मुखता शब्दातीत। ऐसी ये दोनों कर्मयोगिनियाँ। अभी अभी अलबर्ट श्वाइटझर की जीवनी पढी। कर्मयोग, परिश्रम का सातत्य, कार्यनिष्ठा, कार्य करते समय 'स्व' का निरास ये उनके गुण वं. ताईजी के भी जीवन में उतनीही प्रखरता से प्रतीत हुए थे।

उषा लिमये, वसई

●●●

वह आश्वासक स्पर्श

नेतृत्व केवल धनसंपत्ति या विद्वता से संपादित नहीं होता। प्रखर देशप्रेम एवं आत्मीयतापूर्ण व्यवहार द्वारा नेतृत्व सिद्ध होता है। ताईजी के पास वही नेतृत्व था जो अखिल भारतीय संगठन को मार्गदर्शन करने के लिये समर्थ था। उनका सहज और सरल भाव सबके हृदय को स्पर्श कर लेता था। भारतवर्ष के प्रत्येक स्वयंसेविका के श्रद्धा का वे केंद्रबिन्दू बन गयीं। हिमालय से कन्याकुमारी तक सब सेविकाएँ उनको आत्मीयतासे 'ताईजी' कहती थीं। एवं वे सबकी प्रेरणास्त्रोत बनी थीं। विशेषत: मेरा उनके साथ घनिष्ट संबंध था। मैं जब जब पुणे जाती थी तब उनके दर्शन के लिये जाया करती थी। उनका चरणस्पर्श, उपदेश, हँसमुख चेहरा, व्यंग्यात्मक दो बातें, लौटते समय में मिठाई देना इन सब की अनुभूति मन में संजोते हुए, समाधान युक्त मन से लौटती थी। उनका स्पर्श और बातें ही मनको बहुत प्रभावित करती थीं। उनका पार्थिव शरीर चला गया किंतु उनका हिंदुत्व-संगठन का संदेश अमर है।

अन्नपूर्णा स्वाँई, कटक

●●●

यह सती का व्रत है

जुनागढ बैठक के पूर्व वंदनीया ताई ने सभी अधिकारी बहनों को अपनी बेटी विजूताई के घर पर बुलाया। मैं भी सबके साथ गयी। सब भोजन कर वापस निकले तो वं. ताईजी ने मुझे रोक लिया। मेरी समझमें नहीं आ रहा था कि क्या करूँ। तो वं. ताई ने मुझे बाहर के झूले पर अपने साथ बिठाया। मैं संकोच के साथ उनके पास बैठी। मेरे मन में आया कि ये क्षण अविस्मरणीय रहेंगे ऐसा सोच ही रही थी तो मेरा मौन तोडते हुए वं. ताई ने पूछा — ''कार्य कैसा चल रहा है? किसी प्रकार की कठिनाई तो नहीं आ रही है? मुझे तो सिंधुताई की ज्यादा चिन्ता है, कैसे करूँ उसका निवास कहाँ है? वह अब कहाँ रहेंगी? निरंतर मुझे यह चिन्ता लगी है। वैसे वह नागपूर या पुणे कहीं भी रह सकती है।'' तब मैंने उनसे कहा ''आप क्यों चिन्ता करती हैं हम लोग देख लेंगे। आप चिन्ता मत कीजिए।'' इस पर मुस्कराते मेरी पीठ पर हाथ फेरते हुए बोली 'तू तो सब कुछ कर सकती है।'

शनिवार का व्रत था। मुझे भोजन नहीं करना था। शान्ताताईने कहा कि वंदनीया ताई जी को आप उनके कक्ष तक ऊपर छोड कर आइए। मैं उनके साथ-साथ चल रही थी तभी वे अपने निवास स्थान से आगे बढीं तो पीछे से शान्ताताई ने कहा कि 'ताई कहाँ जा रही हैं?' तो बोलीं 'अरे तुम्हारी ताई न अब पगला गई है। विनोद करने से शान्ताताई थोडी संकोच में आई पर बोली आप जैसे हम भी बनें यही आशीर्वाद दें।' वं. ताई कुछ थकी हुई लगी। अत मैंने उनका हाथ पकड कर ऊपर ले जाने हेतु हाथ बढाया और कहा 'मैं आपको ऊपर लेकर चलती हूँ।' तो हँसते हुए बोलीं अब तो मैं अकेली ही जाऊँगी। मुझे ऊपर तक पहुँचाने की आवश्यकता नहीं। यह नहीं लग रहा था कि ये सचमुच ही हमें छोडकर अकेली ही जाएँगी।

आत्मीयता का बोध

मेरे स्वास्थ्यमें काफी गडबड चल रही थी। वं. ताई को पता लगा। उन दिनों उनका प्रवास उत्तर प्रदेश में था। उन्होंने २ दिन में ही अपना प्रवास रोक कर वे दिल्ली आईं। मेरे स्वास्थ्य के बारे में चिन्ता व्यक्त की। उनको देखकर मेरा मानसिक बल शारीरिक बल से एकदम बढ गया। मन में लगा कि इतना बडा व्यक्ति चलकर अपने पास आया और मैं लेटी रहूँ यह विचार मेरा आत्मविश्वास बढाने लगा। मैं एकदम से उनके सामने जो खड़ी हो गई। कहीं उन्हें ऐसा न लगे कि मेरे स्वास्थ्यमें काफी गड़बड़ है।

१९८४ में जब आंचल का क्षेत्रीय सम्मेलन हुआ उसमें वंदनीया ताई उपस्थित थीं। उनका सम्पूर्ण सम्मेलन में पूर्ण समय सहभाग रहा। मौन रूप से सब सुनती रहीं और स्वयम् देखती रहीं। उसी के बाद मेरा अचानक अपघात हो गया। जब वंदनीया ताई को पता लगा तो बोलीं 'इतना बडा समारंभ किया। तेरी नजर किसी ने नहीं उतारी न, इसीलिए नजर लग गई है। यहाँ आत्मीयता का बोध हुआ।

हम सभी प्रचारिकाएँ रातको ११ बजे चाय हेतु एकत्र

होते थे। बैठक के बाद वही समय अपने अनुभव सुनने सुनाने का होता था। हमारी वार्ता शुरू हुई कि वं. ताई अचानक आती थीं और हमारे जैसे ही हँसी मजाक में सम्मिलित होती थीं। हम लोगों को कभी भी ऐसा नहीं लगा कि हमारे बीच प्रमुख संचालिका विराजमान हैं। ऐसा लगता था मानो हमारी सम आयु की ही बहन साथ में है।

इस बार भी जुनागढ में उन्होंने मुझे बुलाया। तुम प्रचारिका हो इसका ख्याल हर समय रखती हो न? अपने साथ की प्रचारिकाओं की चिंता करती हो या नहीं? पता है यह सती का व्रत है? मैंने उनसे कहा 'हाँ, जानती हूँ। वह निभाने का भी यथासंभव प्रयास करती हूँ।' आगे उन्होंने पूछा 'तुम्हारी किसी सहयोगी प्रचारिका के मन में विवाह करने की इच्छा निर्माण हुई तो क्या करोगी? उसका तिरस्कार? उसको इस विचार से परावृत्त करने के प्रयत्न करोगी?' यह मेरी भी परीक्षा थी। मैंने उत्तर दिया- तिरस्कार क्यों करेंगे? अगर सचमुच उसके मन में यह इच्छा है तो हम सब उसके लिये योग्य वर खोजने के प्रयत्न करेंगे। उसमें विकृति नहीं आएगी यह देखेंगे।' और अगर तुम्हारे मन में इच्छा जगे तो?' यह प्रश्न तो अनपेक्षित था। मैंने उनसे कहा 'यह मार्ग मैंने स्वेच्छा से अपनाया है- मेरा मन पक्का है। ऐसा विचार मेरे मन में नहीं आएगा। अगर आएगा तो मैं अपने बडे अधिकारियों को खुले मन से यह बताऊँगी। छिपाऊँगी नहीं। मेरा विश्वास है कि ये लोग योग्य व्यवस्था करेंगे। वं. ताईजी ने कहा- मैं यही देखना चाहती थी कार्य के प्रति कितना दृढविश्वास है तुम्हारा।

रेखा, दिल्ली

●●●

यह मृत्यु? नहीं समाधि

वं. ताईजी का जीवन अर्थात साक्षात् कर्मयोग और भक्तियोग का मनोहारी संगम। उनके रक्त के कण कण में व्याप्त थी देशभक्ति, क्षण क्षण में प्रकट होता था कर्मयोग।

जो अभक्त नहीं अथवा विभक्त नहीं वह भक्त। भक्ति की यह परिभाषा वं. ताईजी की देशभक्ति के लिए सार्थ ही है। उनका संपूर्ण जीवन समिति को कणश: क्षणश: अर्पित था। श्रवण मनन से लेकर आत्मनिवेदन तक नानाविध भक्ति का सोपान की प्रथम पौडी श्रवणभक्ति जीवन के सातवें वर्ष में ही वे चढ़ीं।

मन में समिति के उत्कर्ष का निरंतर ध्यास था। उसके कारण जो पढना या देखना होता या वही उनका भगवत दर्शन था। भ्रमण तीर्थयात्रा थी। वाणी से समिति के बारेमें जो जो बोलना होता था वही उनका भजन कीर्तन था। स्वीकृत कार्य सुचारू रीतीसे संपन्न करने हेतु शरीर जीवित रखना। आवश्यक अतएव समयानुसार जठाराग्नि को अर्पित अन्न की आहुती यही उनका यज्ञ था। और दिनांत मे क्लान्त शरीर बिस्तरपर लिटानेपर मिलनेवाली नींद उनकी समाधि थी।

केवल परिवार के ही नहीं अपितु समाज के हर व्यक्ति को अपनी ममता देनेवाली यह माता चिरविश्राम के आखिरी क्षण तक अपना कर्तव्य करती रहीं। इसीलिए उनकी मृत्यु के बाद मन में प्रश्न खडा हुआ कि यह समाधि है या चिरनिद्रा।

दिनभर के कार्यक्रम सहजता से निभानेके बाद ताईजी विश्राम के लिए बिस्तरपर लेटी और कालपुरूषने यही क्षण पकडकर अपना काम कर लिया। सामान्य जनोंसे सामान्य सहजता से व्यवहार करनेवाले व्यक्ति का यह अन्त सामान्य कैसे कह सकते हैं? जो आत्मा मूलत: मुक्त ही थी उसकी शांति के लिए ईश्वर को क्या प्रार्थना करेंगे? एक आश्वासन दे सकते हैं कि हम भी जीवनके अंतिम क्षणतक आपके द्वारा आलोकित पथ पर चलते रहेंगे।

मालती पांडे

●●●

सेवाकार्य में जुट जाएँ

सेवा बस्ती में जा कर कार्य करने का वं. ताईजी का नित्य आग्रह रहता था। वहाँ जाते समय किस प्रकार की वेषभूषा, व्यवहार हो उसके बारे में वे बारीकी से सूचना देती थीं। उस बस्ती के लोगों के सुखदुख से समरस होने की आवश्यकता पर बल देती थीं। अपने ही समाजपुरुष का कोई भी अंग दुर्बल, विकल रहना अपने लिये शोभादायक नहीं है ऐसा प्रतिपादन वे करती थीं। प्रत्येक शाखा ने कम से कम एक बस्ती से संपर्क करना चाहिये यह नित्य बताती थीं।

नाहं कामये राज्यं न सुखं न पुनर्भवम्
प्राणिनां दु:ख तप्तानां यही उनका संकल्प था- व्यवहार था

फूलों से बढकर बड़ी भेंट

फूलों से बढकर बड़ी भेंट क्या हो सकती है? श्री शक्तिपीठ में एक बार अखिल भारतीय बैठक हुई थी, तब की एक बात याद आती है। हमारा घर श्रीशक्तिपीठ के समीप होने के कारण एक दिन सब अधिकारी और नागपूर की सब सेविकाओं का सहभोजन हमारे घर करने का तय हुआ। वैसे देखा जाये तो यह कार्यक्रम समयपर अचानक निश्चित हुआ था; इसी कारण घर के हम सब उसी व्यवस्था में मग्न थे। और अपने परिवार का सर्वोच्च आदरणीय व्यक्ति घर आनेवाला, याने हमारे लिए मानो त्यौहार की खुशी।

हँसते खेलते सभीने वं. ताईजी के साथ भोजन का आनंद उठाया। लेकिन बाद में मेरी माँने मुझसे कहा कि 'हम वं. ताईजी के लिये भेंटवस्तु ला नहीं सके। फिर बगीचे से ही गुलाब के और अन्य कुछ पुष्प चुनकर एक गुलदस्ता तैयार किया, और निकलते समय वं. ताईजी को दिया। और उन्हें बताया कि इच्छा होने पर भी हम कुछ भेंटवस्तु न ला सके। इसपर वं. ताईजी तुरंत बोलीं, ''ताजे, प्यारे फूलोंमें से जो आदर और प्यार मेरे और समितिके लिये दिखाई दे रहा है, वो अन्य किसी चीज में से शायद ही दिखाई देता। इसलिए ऐसा मत सोचो कि हम कुछ लाए नहीं।

ऐसा कहते हुए ताईजी ने उन फूलों को सूँघते हुए बडी खुशी से अपने पास रख लिया।

सौ. मेधा नांदेडकर

●●●

वह अन्तिम दर्शन

(अहमदाबाद) कर्णावती की वह अर्धवार्षिक बैठक सदैव अविस्मरणीय रहेगी। वं. ताईजी का वह अंतिम दर्शन! देखकर लगा कि इस उम्र में भी सदैव सादी रहने वाली वं. ताईजी की कमर कुछ झुक गई है, शरीर भी थका हुआ परन्तु मन वैसा ही प्रसन्न। शरीर की थकान मन को छू तक नहीं रही थी। प्रार्थना और वन्देमातरम् होने तक अब भी स्थिर खड़े होने की तैयारी। पीछे मा. भारती ताई खड़ी थी पर उनका दृढ़ विश्वास ''डरो मत, मुझे कुछ नहीं होगा।''

उनका वह अन्तिम मार्गदर्शन पूरे समय मजेदार, पर सारगर्भित। चुटकियाँ सुन हँसते रहे.. हँसते रहे.. बौद्धिक खतम हुआ। सबके मुख से एक ही उद्‌गार आज तो वं. ताईजी का बौद्धिक सुन कर आनन्द आ गया.. मजा..आ गया। अन्यथा हर समय गंभीर हो कहती हमें अपना काम बढ़ाना है। देखो.. आगे का कार्य अब तुम सब लोगों को ही सँभालना है.. पता नहीं अगली बैठक तक मैं रहूँगी या नहीं। सुन कर मन बोझिल हो जाता परन्तु इस समय ऐसा कुछ भी नहीं कहा। वातावरण एकदम प्रसन्न एवं हास्य विनोद भरा।

मुझे हमारी माताजी का कथन याद आया। अधिक हँसने पर वह कहा करती है, 'देखो खूब ज्यादा हंसों मत। बाद में रोओगी।' वही हुआ। वं. ताईजी ने हँसते-हँसते रूला ही दिया। कहते हैं अति निकट का व्यक्ति यदि अपने से दूर हो और उसके साथ कोई घटना घटित होने वाली हो तो अन्तर्मन के तार जुड़ जाते हैं और संदेश हम तक पहुँच जाता है। यह बात और है कि हम उस घटना का सही रूप से आकलन नहीं कर पाते। बैठक से लौटने के बाद ऐसा ही कुछ हुआ। मन अस्थिर सा लग रहा था। कुछ अघटित होने का आभास बार बार हो रहा था। सोचा शायद लता दीदी और मा. विमलताईजी के जाने का समाचार सुनने के कारण ऐसा लग रहा हो। परन्तु यह उदासी बढ़ती ही गई। मुझसे रहा नहीं गया। अपनी भावनाओं को पत्र द्वारा केन्द्र कार्यालय तक पहुँचा ही दिया। मेरा पत्र वहाँ पहुँचा ही होगा तभी मा. चित्रा दीदी का केन्द्र कार्यालय से दुःखद सन्देश दूर संचार द्वारा आया 'वं. ताईजी नहीं रहीं' हम इतने दूर थे कि अन्तिम दर्शन संभव ही नहीं था।

वं. मौसीजी के समय भी हम अन्तिम मानवन्दना के समय पहुँचे थे। पार्थिव देह हार फूलों से ढँका होने के कारण अन्तिम दर्शन से इतने दूर आकर भी वंचित रहे। उस समय मा. सौ. सिन्धुताईजी आठवले ने समझाते हुए कहा था अच्छा ही हुआ तुम अभी उन्हें देख नहीं पाए। कम से कम मौसीजी की याद आते ही उनका हँसमुख सुदर्शन चेहरा जो हमेशा तुमने देखा है वही याद आएगा।

आज इस प्रसंग पर भी उनकी कहीं बातों की याद आ रही है कि वं. ताईजी की याद आते ही उनका वह हँसता हँसाता चेहरा ही याद आएगा। वह अन्तिम दर्शन आँखों में आँसुओं का समुद्र भर जाता है। भावनाओं में न बहने का संदेश दे जाता है।

सुलभा

●●●

शान्तचित्तसे राष्ट्रसेवा करो

वं. मौसीजीने वं. ताईजीको अपना दायित्व सौंपा इसीमें उनके गुणोंकी पहचान है। वं. ताईजी सालमें कमसे कम दो बार अष्टभुजा मंदिर में देवी के दर्शन के हेतु पधारती थीं। देवी के नित्य पूजन की क्या व्यवस्था है ऐसा उन्होंने एक बार पूछा। तब हमने बताया कि साल में ६ रु. देनेवाले ऐसे अनेक दाता हम खोज रहे हैं। उससे यह व्यवस्था हो जायेगी। उन्होंने तुरंत अपने पैसे दिये और कहा कि देवी की पूजा के लिए यह मेरा योगदान। अगली बार जब वे आयीं तब उन्होंने एक सूचना की कि ऐसे ६-६ रु. कबतक एकत्रित करोगी? इकट्ठा १००/- रु. लेते जाओ और सौ रुपयोंका नोट हमें दिया। इससे प्रेरणा ले कर सभी से हमने प्रार्थना की और हमें यश मिला।

वं. ताईजी का एक विशेष - उनके पास जाकर उनको अपने मन की बात बतानेवालों की बात शांतिसे सुन लेती थीं - कितनी भी छोटी बात हो। इसी कारण उनके प्रति सबकी श्रद्धा निर्माण हुई। प्रारंभ में वं. मौसीजी जैसा काम मैं कैसे कर सकूँगी ऐसा संदेह उनके मन में था। परंतु आपके व्यवहार से सभीके मन उन्होंने जीत लिए। अपनी असुविधाओं के बारे में वे कभी शिकायत नहीं करती थीं। चुपचाप वह सहन कर लेती। अपने लिए कुछ अलग व्यवस्था कर लेना उन्हें तनिक भी पसंद नहीं था। शांत चित्त से राष्ट्र की सेवा करो ऐसा हमेशा बताती थी और उन्होंने भी वही किया। उनके शांत जीवन जैसा अंत भी शांतिपूर्ण हुआ।

सौ. वसुंधरा हरदास

●●●

बडप्पन का बोझ नहीं

तुलसीबाग स्थित मंदिर में हररोज रात को महिलाएँ एकत्रित होती थीं। ताईजी महीने में एक बार जा कर उनके बीच कुछ समय बिताती थीं। वहाँ आनेवाली प्रमिला दातार नाम की महिला ताईजी के उस तरह के व्यवहार से बहुत प्रभावित हुई। उनके द्वारा प्रदत्त वास्तु में आज पुणे में ''परिवार निवास'' नामक तीन मंझिली भवन महिलाओं के लिए एक नया प्रकल्प साकार हुआ है। उषाताई बताती है - एक बार ताई के साथ रिक्षा में जा रही थी। हमारा दिनभर इतना घूमना हुआ कि वं. ताईजी बहुत थक गईं। हमने उनको गन्ने का रस पिलाने के हेतु रास्तेमें आग्रहपूर्वक रिक्षा रोका। वं. ताईजी के कहने पर हमने रिक्षावाले को भी रस पीने के लिए बुलाया, लेकिन वह रिक्षा छोडकर नहीं आ सकता था। तब ताईजी ने रस का प्याला स्वयं ला कर रिक्षावाले को दिया और बाद में हम दोनोंने रस लिया। ऐसा था वं. ताईजी का अपनत्व निर्माण करने का तरीका।

ताई के बड़प्पन का बोझ नहीं था।

उषाताई का काम मुख्यत: पूर्व भाग में है। उस बस्ती में वं. ताईजी को ले जाने के लिए उषाताई कारण खोज रही थी - वहाँ की बहनों को अपने साथ जोडने की उनकी इच्छा थी। उनको वह मौका मिला, उनके पोते का जन्मदिन वहाँ के एक विद्यालयमें मनाने का तय किया। एक कार्यक्रम बनाया - वं. ताईजी को कार्यक्रममें बुलाया। विद्यालयोंमें बालकों की माताओं को भी आमंत्रित किया था। उषाताई के प्रयत्नों से काफी महिलाएँ उपस्थित हुईं। वं. ताईजी के ऋजु व्यक्तित्व से वे प्रभावित हुईं। वं. ताईजी ने कहा 'उषाताई आपके पास हमेशा आती है। आज वह अपने पोते को लेकर आयी है। आपका आशीर्वाद प्राप्त हो इसलिए। आप बड़ों से मेरी प्रार्थना है कि आप उसे आशीर्वाद दें कि वह कुलदीपक बने' उन बहनों को इतना सम्मान किसीने नहीं दिया था। वे गद्‌गद् हो उठीं और अपनी पद्धति से उन्होंने उस बालक का अभिष्टचिंतन किया। इस तरह वे वं. ताईजी के स्नेह में बँध गयीं। उस विभाग से किसीने उन्हें बुलाया और वह नहीं गयी ऐसा कभी नहीं हुआ। किसीने कुछ खाने को दिया तो वे अपना व्रत, नियम तोड कर खाती थी। लेकिन उषाताई किसीके यहाँ कुछ भी नही खाती थी। ऐसा करना ठीक नही यह समझते हुए भी। ताईजीने कहा ''यह तो ठीक नहीं है। एक बार ऐसेही एक विधवा महिला के घर दोनों गईं। पति गुजर जाने के कारण घर की आर्थिक अवस्था बहुत ही खराब थी। हमें देने के लिए घर में कुछ नहीं था। ताईजी के ध्यान में यह बात आ गयी। तो उन्होंने कहा देखो इस तरह का संकोच नहीं करना।

घर में जो कुछ है उसीमेंसे थोडा दे दो। तो उस लडकी ने आधा आधा किलो जवार ही दी। उसमें से थोडी जवार ताईजीने ली। इस तरह हर एक समस्या का समाधान ताईजी सहजता से करती थी। अत: हम किसी बड़े व्यक्ति के साथ हैं ऐसा बोझ नहीं रहता।

याद एकादशीके डिब्बे की

ताई का एकादशी का व्रत रहता था। फलाहार करने अपनी सहेली ताई मांडके के यहाँ जाना यह तो हमेशा का क्रम था। वं. ताईजी ने इस संसार से विदा लेने से पहले दिनू एकादशी का व्रत था। ताई उस दिन कमलाताई मांडके के घर फलाहार के लिए जा न सकी, इसलिए उषाताईने डिब्बा भर के उन्हें भेज दिया। ताईने कहा, ''डिब्बा कल शाम को वापस दे दूँगी।'' डिब्बा वैसा ही रह गया। ताई तो इस संसार से चली गयी।

निवेदन सौ. उषाताई जोशी
शब्दांकन कु. शैला भागवत

●●●

मैं तो ताई की लाडली

राऊतवाडी यह एक पुणे के पास छोटासा देहाती गाँव है। १९७२ के अकाल में पुणे की शाखाने इस गाँव की जिम्मेदारी ली थी। ताईजी और अन्य सेविकाएँ वहाँ बार बार वहाँके निवासियों की मदद के लिए जाती थीं। और इसी समय गाँववालों और ताईमें स्नेह के अटूट धागे बँध गये। देहाती ताई को बहुत सम्मान देते थे। इसी राऊतवाडी की एक उत्साही महिला बबूताई केवटे जिजामाता कार्यालय में मिली और उनकी दिल की भावना इन शब्दोंमें उमड पडी - ''मैं तो ताई की बहुत लाडली'' इस एक ही वाक्य में बबूताई का ताई के प्रति अपार स्नेहभाव दिखाई देता है।

गोपालराव देशपांडेने बबूताई का वंदनीय ताई के साथ बहुत पहले से परिचय करा दिया था। ताईजी कई कार्यक्रमोंके लिए अक्सर राऊतवाडी जाया करती थीं। साथमें सेविकाएँ भी रहती थीं। अकाल में उस गाँवको गेहूँ, चावल आदि अनाज और कपडा इत्यादी की सहाय्यता दी गयी। जानवरोंको हडपसर लाकर उनके घास, आदि का प्रबंध किया गया। और यह सब करने के लिए ताईजी को बारबार राऊतवाडी को जाना पडता। अकाल खत्म हो गया, लेकिन उन गाँववालोंका ताई के साथ जुडा प्यार का रिश्ता वैसे ही रहा। तीन साल के बाद जब बरसात हुई, तो ताईजीने उस खुशी में गाँववालों को खाना खिलाया। बबूताई के शब्दोंमें ''ताई हमेशा अच्छे रूपमें आती थीं। सब की खबर लेती थीं। पूछताछ करती थीं। बाल-बच्चोंको नामसे पुकारकर बुलाती थीं। सभी गाँववालों को वे अपने घर की बडे बुजुर्ग जैसी लगती थीं। ताईजी कितनी भी थकी हो वह सबके साथ बातचीत करती थीं। समयानुसार महिलाओंकी संख्या कम-ज्यादा रहती थी।

बबूताई बड़े गर्व के साथ बता रही थी कि १९८९ साल में रमणबागमें जो संमेलन हुआ था उसके लिए मुझे ताईजी ने गाँव की महिलाओं को साथ में लेकर आनेका निमंत्रण दिया था। और उस संमेलनमें सबके सामने मुझे व्याख्यान देने को मजबूर करके मुझमें धैर्य जगाया। वं. ताईजीके समीप रहनेके कारण बबूताई को सामाजिक कार्य के प्रति लगन और आस्था निर्माण हुई। ताईजी के कहने से ही वह भा. ज. पा. की बैठकों को जाती थी। गाँवमें पेटी, ध्वनिक्षेपक, मंदिर का कलश इत्यादि सुविधाएँ होती रहीं। हाल ही में मंदिर में श्री. शिवजी की पिण्डी की स्थापना करनेकी उनकी मनीषा है। बेलके छोटे छोटे पौधे बबूताई सबको बाँटती है।

बबूताईने ताई के छोटे पोते विक्रांत के लिए खुद के घर में काजल तैयार करके दिया था। ताई के घरमें बबूताईने पीने के लिए पानी माँगा, तो उन्हें बर्फी या खाने की चीजें पहले मिलती थीं। कभी कभी ताई कहती - मुझे आज चाय पीनी है, मेरे साथ तुम भी थोडी सी ले लो। तो बबूताई को उनकी बात माननी ही पडती थी। ताई को किसीने कुछ दिया तो वे सबमें बाँट देती थीं। ताईजी बहुत सी जगहोंपर बबूताई को साथ ले

जाती थीं। आपतकाल में कारागृहके बांधवों के लिए ताईके कहने पर बबूताई और राऊतवाडी के लोगोंने अनाज, सब्जी इत्यादि सामान इकट्ठा किया था।

गत सालके अधिक मास में ताईजी राऊतवाडी जाकर आयी थीं। बबूताईने उनके लिए बनाई हुई खानेकी चीजें भी उन्होंने खायीं। अगर ताईजी वह न खाती, तो बबूताई के मन को गहरी ठेंस पहुँचती।

ताईजी को श्रद्धांजलि अर्पित करनेके लिए और प्रसाद लेने के लिए राऊतवाडी का मंदिर लोगोंसे खचाखच भर गया था। यह बताते हुए बबूताई भावविभोर हो उठी थी। क्या, क्या बताऊँ ऐसी उनकी अवस्था बनी हुई थी। ताईजीके संस्कारोंसे, सान्निध्य से तैयार हुआ यह मासूम और क्रियाशील व्यक्तित्व देखकर वं. ताईजीके असामान्यत्व का साक्षात्कार हुआ और ताईजीके उस उत्तुंग व्यक्तित्व के सामने श्रद्धा से हम नतमस्तक हो गये।

बबूताई केवटे
राऊतवाडी

●●●

स्मृतियों की यह पावन सरिता

संगठन के कार्य के लिए जो अत्यंत आवश्यक है और जो ताईजीके स्वभाव में समाया हुआ था वह गुण याने सबको स्वयं में समाहित कर लेना और स्वयं सबके साथ हिलमिलकर रहना। उन्हें तो कभी कोई सेविका परायी लगी ही नहीं। 'मेरे घर आओ' यह शब्दप्रयोग कभी किया ही नहीं उन्होंने। सदैव 'अपने घर आना' इस प्रकार के आमंत्रण के कारण कोई उनका आग्रह टाल नहीं पाता था। उन शब्दोंमें इतना मार्दव था कि परायेपन का गंध भी वहाँ फटक नहीं सकता था।

कथनी सी करे करनी

हमें बौद्धिक के लिए जाते समय हाथों में सदैव पेन और कॉपी लेकर जाने की आदत थी। ताकि महत्त्वपूर्ण बातें लिख सके। परंतु वं. ताईजीके बौद्धिक के समय कुछ भी लिख नहीं पाते थे। संपूर्ण बौद्धिक में वास्तविकता हुआ करती थी। उनके कथनमें केवल तत्वज्ञान नहीं था पर अनुभव के बोल, सीखनेलायक और अनुसरण करने योग्य बहुत कुछ होता था।

सरल सादी जीवनशैली और उच्च विचार यह उनकी विशेषता थीं। उनके घर कभी भी पहुँचने पर या तो वे पूजा में या रसोईघरमें व्यस्त दिखाई पडती थीं। तब वे अंदर बुलाकर बैठाती थीं। बातें करते करते हाथोंसे काम चलता रहता। चाहे काम की बातें हो या घरेलू वही अपनेपनसे बातें करती थीं ताईजी। दिखावटीपन तो जरा भी नहीं था। कभी क्रोधित नहीं देखा उन्हें, सदैव शांत, समझदारी का स्वर हुआ करता था।

व्रत प्रतिदिन शाखामें जाना

नियमित शाखा में जाना यह तो क्रम तो उनका था ही परंतु अधिकारी बनने के बाद भी जिस भाग में जिस दिन शाखा लगती थी उस दिन वे वहाँ उपस्थित हती थीं। अत: सभी शाखाओं की सभी सेविकाओं से परिचय था, स्मरणशक्ति भी कमाल की थी उनकी। मेरा मायका पुणे का ही है अत: कई बार वहाँ जाना होता था। ताईजी का घर शहर के बीचों बीच था। अत: थोडी देर ही सही परंतु उनके घर जाना संभव होता था। कई दिनों तक भेंट ना हो पाई तो मेरी बहन या भाई मिलनेपर पूछताछ करती थी। बहुत दिनोंसे मिली नहीं कहा करती थीं।

जब मराठवाडा विस्तारिका का कार्य आरंभ किया तब कभी आते जाते पुणे में जाना संभव होता था। एक बार मेरे माताजीकी शाखा में गुरूपूजन का उत्सव था। मैं भी साथ गई थी। उत्सव समाप्त होनेपर मैं अन्य सेविकाओंके साथ बातचीत में लगी हुई थी। विमलाताई बार बार जलपान के लिए बुला रही थी और मैं टाल रही थी। मैंने बताया मैं चाय नहीं पीती। ताईजीने वह सुना और पास आकर बोलीं तुम समिति का कार्य करने के लिए तैयार हो ना। अत: कहीं भी जाना या रहना पडता है। लोगों को आतिथ्य करने के लिए चाय बनाना आसान होता है। मना करनेपर देनेवालों को बुरा लगता है। अत: उनकी भावना का मान रखकर पीनी चाहिए। आदत ना हो तो भी डाल लो। परिस्थिति से थोड़ा बहुत समझौता करना ही पडता है।

अमृत महोत्सव

वं. ताईजीकी ७५ वीं वर्षगाँठ के निमित्त से समिति का कार्य बढ़ाना और संपर्क कार्य और मजबूती से बढाना उसके अंतर्गत अपने अपने विभाग में ७५ छोटे बडे शिबिर आयोजित करना जिनमें छोटी बडी बालिकाएँ, तरुणियाँ और भगिनियोंका सहभाग रहे ऐसा कार्यक्रम तैयार किया था। शिबिर पूर्ण होनेपर उनका समारोप का कार्यक्रम विभागश: हो। यह निश्चित किया गया। मराठवाडा विभाग का कार्यक्रम परभणी जिले में करने का निश्चित हुआ। उसके अनुसार वं. ताईजी कुछ अधिकारी भगिनियों के साथ आई हुई थीं। कार्यक्रम अच्छी तरहसे संपन्न हुआ। मेरे साथ कार्य करनेवाली सेविकाओंने ६० वीं वर्षगाँठ हेतु मुझे ताईजीके हाथों शाल भेंट की। संकोच तो हो रहा था परंतु मना नहीं कर सकती थी। वं. ताईजी के हाथों शाल स्वीकारते समय एक प्रकार से वह सम्मान ही है यह अनुभव हुआ और स्वीकारना पडा।

किसी भी कार्य हेतु निधी संकलन करते समय यदि कोई कहे इतने पैसे कैसे जमा कर पाएँगे तो ताईजी कहती पैसे के अभाव से अपना कार्य रूकेगा नहीं। कार्य आरंभ कीजिए, निधी अपने आप संकलित होगा और वास्तव में कई बार ऐसा ही अनुभव हुआ।

बस्तर जिले में वनवासी कल्याण आश्रम की बालिकाओं के आवास गृह के कार्य के हेतु मैं दो साल भानपुरी नामक ग्राम में गई थी। १९८७ में वहाँ समिति की फरवरी मास की बैठक आयोजित की गयी थी। वं. ताईजी अन्य अधिकारी गण सभी आये थे। वं. ताईजी की व्यवस्था उनके अधिकार योग्य की गयी थी। बैठक, चर्चा आदि हो जाने पर ताईजी हमारे कमरे में आती, बैठती, बातचीत चलती। हम यदि संकोचवश खडे रहे तो वे कहती अरे मैं कोई पराई हूँ क्या? शाखास्थानपर मैं अधिकारी हूँ परंतु यहाँ मैं तुम सबकी ताई हूँ। वास्तवमें कितने सम्मान का स्थान था उनका, परंतु गर्व, अहंकार का किंचित मात्र भी स्थान नहीं था वहाँ।

इसी समय भानपुरी के पास चित्रकूट व वहाँ की बालिकाओंका आश्रम और बारसूर गाँव की बालिकाओं का छात्रावास देखने के लिए हम सबको जाने का कार्यक्रम तय हुआ था। जगदलपूर के एक संघकार्यकर्ता की गाडी में ताईजी मा. सिंधुताई और एक अन्य अधिकारी की व्यवस्था की थी। हम बाकी सब लोग एक टेंपो में गए। टेंपो चित्रकूट से ही वापस आनेवाला था। और गाडी बरसूर में से आनेवाली थी। परंतु वहाँ से लौटते समय गाडी का एक पहिया छूटकर दूर खाई में जा गिरा। गाडी एक ओर लुढक गई। बडा अपघात होते होते बचा। दूसरी व्यवस्था होनेतक सबको वहीं रूकना पडा। टेम्पो पहले ही पहुँच गया था। सब गाडी की प्रतीक्षा कर रहे थे। कुछ सूझता नहीं था। अंत में मा. प्रमिलाताई मेढे व अन्य एक दो लोग टेंपो से फिर जगदलपूर उनके घर गए। सब लोग उसी समय आकर बैठे थे। इस घटना से सभी थोडे भयभीत थे। क्यों कि इतने बडे व्यक्ति के बारेमें ऐसा हुआ सब लोग क्या कहेंगे? परंतु वं. ताईजी ने सबको आश्वस्त किया और भानपुरी जाने हेतु सबको साथ ले निकले। उनकी गाडीने भानपुरी के आश्रम में प्रवेश किया तब हमने चैन की साँस ली। जिस कार्य का ईश्वरीय अधिष्ठान उनके जीवन को प्राप्त था उसी ईश्वरने उनको बचाया।

सौ. माणिक टिळक
मुंबई

●●●

जीवनव्रती का व्रत

तापी बनकर जन्म लिया। गृहिणी का आदर्श रखा॥
धर्मपत्नि बन आपटेजीकी। जीवन रथ को सार्थ किया॥
पुत्री, भगिनी, माता बनकर। स्त्री रूप का आदर्श रखा॥
सेवा अपना हृदय बनाकर। संगठन का उत्कर्ष किया॥
ताई बनकर सबके मन में। स्नेह भाव निर्माण किया॥
भरत खंड को कुटुंब कहकर। स्वदेश भाव जागृत किया॥
मधुरवाणी और शांत भाव का। हर क्षण ऐसा बोध किया॥
जीवन व्रती का व्रत ले मन में। कर्तव्य अपना पूर्ण किया॥
लो श्रद्धांजलि हे लोक माता। हमने व्रत का संकल्प किया॥

माधुरी मराठे
भाग्यनगर

●●●

उन्होंने मुझे प्रचारिका बना दिया

१९८० में तीन दिन के कार्यक्रम के लिये वं. ताईजी विशाखापट्टणम् आयी थीं। इससे पहले एक बार वं. ताईजी के साथ ट्रेन में मिलना हुआ था। भाषा के कारण उनके साथ जादा बातचीत नहीं हो पायी थी। फिर भी ताईजी ने मुझे पहचान लिया। मुझे भाषा का प्रश्न था परंतु फिर भी संवाद के लिये कोई कठिनाई नहीं हुई। निरंतर प्रवास के कारण समापन के बाद ताईजी का स्वास्थ्य बिगड गया। उन्हें बारबार पाखाना जाना पडता। मैं भी ताईजी के साथ बहुत रात तक जगी थी। आखिर ताईजी ने मुझे अपने बिस्तर पर जबरदस्ती सुलाया और अपना एक हाथ मेरे ऊपर रखकर स्वयं भी सो गयी। उनका वह वात्सल्यमय स्पर्श आज भी मुझे याद है। शायद उसी स्पर्श ने मुझे एक प्रचारिका बना दिया। स्वयं को कष्ट हो रहे थे तब भी उन्होंने मेरे कष्टों का ध्यान रखा।

१९८१ में फिरसे विजयवाडा में हमारी भेंट हुई। ताईजी देर रात दो बजे पहुँची। निवासस्थान पर ताला लगा हुआ था। हमें जो ट्रेन बतायी गयी थी वह प्रात: छह बजे आनेवाली थी। अत: निवासस्थान व्यवस्थित करके हम चले गए। प्रात: पाँच बजे आ जायेंगे ऐसा सोचा था। ताईजी को वहीं बिठाकर ताईजी के साथ आए हुए अधिकारी कार्यवाहिका को संदेशा देने आई। हम सब दौडे। अपने से ताईजी की अव्यवस्था हुई यह देखकर कार्यवाहिका की आँखों में आँसू आए। वे दुखी हुई परंतु ताईजी ने मुस्कुराकर मीठी मीठी बातों से सब को हँसा दिया। सबका बोझ हल्का किया।

पंकज वली

●●●

बदलते परिप्रेक्ष्य

भिलाई में अ. भा. वनवासी कल्याणाश्रम का एक कार्यक्रम था। ताईजी को इस कार्यक्रम में आग्रहपूर्वक बुलाया था। ताईजी उस समय अपनी बेटी सौ. विजया तांबे के यहाँ थीं अत: उनके साथ मुझे कर्णावती से भिलाई प्रवास करने का सुअवसर मिला। उस प्रवास में बातों बातों में उनके जीवन का एक प्रसंग मुझे ज्ञात हुआ।

शांताताई, एक बार मुझे बहुत ही खाँसी हुई। ढेर सारी दवाइयाँ लीं परंतु रामा शिवा.... हमेशा तो मैं सभी को लौंग इलायची की पावडर शहद में घोलकर देती थी वह खांसी का रामबाण इलाज है परंतु विनायकरावजी के देहांत के पश्चात् मैंने पान, लौंग, इलायची खाना छोड दिया था। अत: वह इलाज नहीं किया था। एक दिन जोरदार खाँसी आयी। जी घबडाने लगा उसी समय 'उनकी' आवाज आयी। कहने लगे समाज कार्य करनेवाले सौभाग्यशाली ही होते हैं। अत: रुढियों को त्याग कर स्वयं को सुहागन ही समझना और खाँसी के लिये लौंग, इलायची ले लो, सुपारी का त्याग नहीं करना ये शब्द सुने। मैंने लौंग का चाटन खाया और जादू जैसे इतने दवाइयों से न थमनेवाली मेरी खाँसी थम गयी। मैं स्वस्थ हुई।

यह प्रसंग जब जब मुझे याद आता है मुझे स्मरण होता है रामकृष्ण परमहंसजी और शारदामाता का। उन्होंने भी यही बताया था न।

ताईजी को मिलने के लिये काफी लोग आते थे। एक दिन सौ. वीणा देव बेटी के विवाह का निमंत्रण देने के लिये आई। उनके पिताजी सुप्रसिद्ध लेखक गो. नी. दांडेकरजी का विवाह भी विनायकरावजी और ताईने किया था। अत: अपने इस दादी को उन्होंने आग्रहपूर्वक निमंत्रण किया और वे जब जाने के लिये निकलीं तो ताईजी ने कुमकुम की डिब्बी (कुयरी) और सुपारी उसके सामने रखी। वीणा, घर में कोई नहीं है अत: तुम स्वयं ही कुमकुम लगा लो और सुपारी भी ले लो।

ताईजी आप ही मुझे कुमकुम लगाइए। वीणा ने आग्रह किया।

ताईजी ने उसे कुंकुम लगाया, सुपारी दी।

ताईजी हमेशा ही कार्यकर्ताओं का मन टटोलती रहतीं। जुनागढ बैठक की ही बात है। मणिपूर में हिंदु संमेलन था। उसी के अंतर्गत था मातृसंमेलन। मैं और विजूताई योजनानुसार असम जानेवाले थे। ताईजी को प्रणाम किया और बताया, हम असम जानेवाले है।

ताईजी ने कहा, 'शांताबाई, असम का जीवन निराला ही है। संपूर्ण असमभर बहुत चलना पडेगा। दंगे फिसाद होते रहेंगे। पर्वतीय प्रदेश है। भोजन भी अलग चावल का। पर्वत चलेगा?'

'हाँ ताईजी सीताजी जो हमारे सामने हैं। बन में जाते समय रामप्रभु ने भी बहुत अडचनें बतायी थीं।

ताईजी प्रसन्नता से हँसी। आशीर्वाद दिया 'यशस्वी भव।'

४ मार्च को संमेलन हुआ। ९ मार्च को ताईजी का देहांत हुआ। असम की बताने लायक बातें मन ही मन में रह गयीं। ताईजी, आपने जानेमें बहुत जल्दी की।

शांताबेन गानी

●●●

अब चिंता उसे करनी है

वं. ताई के निधन के पूर्व वे शायद बहुत बेचैन थीं- ऐसा मुझे लगा। मैं और मेरे पति दि. ५ मार्च ९४ को दोपहर १२-३० से १-३० बजे तक उनके यहाँ थे। मा. सौ. विमलाताई और लता दीदी बाकरु के निधन से वे बहुत व्यथित थीं। मा. सौ. सीतालक्ष्मीजी के स्वास्थ्य के लिये भी वे चिंतित थी। मा. सीतालक्ष्मीजी जुनागढ़ बैठक में नहीं आयी थी। अत: वं. ताईजी को उन्होंने पत्र द्वारा प्रत्यक्ष मिलने की इच्छा प्रकट की थी। पत्र में प्रार्थना की थी कि वं. ताईजी नागपूर आ सकेंगी तो वहाँ आने में सुविधा रहेगी। वं. ताईजी को कुछ कारणों से प्रवास करना कठिन था- उस का भी उनके मन को कष्ट हो रहा था। मैं अनेक बार उनके घर गयी हूँ पर वं. ताईजी के मन की बेचैनी पहले कभी नहीं दीखी। वह मुझे बिदा करने सीढ़ियों तक आयीं परन्तु चलने में भी उन्हें कष्ट हो रहे थे। मैंने उनसे कहा, 'ताई अपने स्वास्थ्य की चिंता करो'। उन्होंने तुरन्त कहा 'अब मेरा क्या बाकी रहा है? मैं पूर्ण रूप से तृप्त हूँ। अब चिंता (आकाश की ओर हाथ करके) उसे करनी है।' इतना कहकर वे मुड़ गयीं। मैं उदास मन से नीचे आई। रास्ते में हम कुछ बोले नहीं। परंतु इतनी जल्दी-अर्थात् ४ दिनों में ही वं. ताईजी हमें छोड़कर जायेगी ऐसा नहीं लगा था।

सौ. शैलजा काकीर्डे

●●●

कसौटी के क्षण

अनेक कठिन प्रसंगों में अविचल रहनेवाली ताईजी की एक घरेलु बात ने सत्वपरीक्षा ली थी। विनायकरावजी एक बार बहुत बीमार हुए और ताईजी की अथक शुश्रुषा से स्वस्थ भी। मानो उनको मृत्यु के कराल मुख से ही उन्होंने बचा लिया। १९६६ में वे जानलेवा कर्करोग से ग्रस्त हुए। अब भविष्य निश्चित ही था। सेवा, शुश्रुषा अन्यों से मिलना-जुलना, समिति का कार्य सभी शांतमन से यथावत चल रहा था। विनायकरावजी की बीमारी दिन-प्रतिदिन बढती गयी। "११ दिसम्बर १९६६ को सुबह ही उन्होंने कागज-पेन लिया और पत्र लिखा। ५-६ माह हुए विश्वकीर्ति का एक अतिथी मेरे यहाँ बस्ती के लिए आया। भूख-प्यास भूलकर मैंने उसकी सेवा की। पर उसकी इच्छा है कि मैं उसके साथ परलोक परदेश जाऊँ। इतना अच्छा साथी मिलना भी कठिन। मैंने भी उसके साथ जाने का निश्चय किया है।" यह पत्र पढ़ते ही वसंतरावजी और ताईजी सिसक उठे। परंतु दादा ने उन्हें समझाया। उसके पश्चात उनकी आँखों में किसीने आँसू देखे नहीं। घर के छोटे बच्चे आने जानेवाले लोगों को घर की उथल-पुथल का कभी एहसास ही नहीं हुआ। इस में ताईजी का श्रेय अत्याधिक है। सभी रिश्तेदार आते जाते रहते, उनकी भेंट होती ही थी। परंतु विजया उनकी छोटी बेटी दूर अहमदाबाद- कर्णावती में रहती थी। उसकी और 'दादा' की भेंट हो, जितना समय अपने पास है वह आनंद से व्यतीत हो इसलिए उन्होंने पत्र लिखा। "दादा के स्वास्थ्य की चिंता नहीं करना पर नाताल की छुट्टियों में सब लोग जरूर आइयेगा। हम सब एक साथ रहेंगे।" भविष्य उनको दीख रहा था। फिर भी मन का समतोल उन्होंने कायम रखा। इतना ही नहीं तो 'दादा' के जितने दिन शेष हैं वे उनके साथ आनंद का काल हो, सभी लोग उनके सहवास का आनंद ले और दे यही उनका प्रयास था। उनकी इस जानलेवी बीमारी में भी उनको हाथ पर हाथ रखकर बैठे हुए किसी ने देखा नहीं। उनके कष्ट बढ़ते गये और मन स्थिर नहीं था परंतु उनका देह कष्ट करता ही रहा अन्यों के लिये। ●

समिति परिवार की ओर से भावांजलि

जयश्री खांडेकर, प्रतिभा भावे, लता देशपांडे,
पी. राधा, वासंती (वेलणकर) भंडारी.

अधिकारी व्यक्ति की राय लें

प्रति वर्ष वं. ताईजी अखिल भारतीय बैठकके लिए नागपूर आती थीं और उनकी उपस्थिति में अहल्या मंदिर स्मारक समिति की एक बैठक जरूर होती थी। और वे अनेकानेक कार्यक्रमों में भाग लेती थीं। उस समय वे सर्वोच्च पद पर होते हुए भी हमारे साथ घुलमिल जाती थीं इसीलिये उनके बडप्पन का बोझ हम पर कभी नहीं आया। मेरा वं. ताईजी से निकटता से परिचय १९८४ में हुआ। १९८२ से स्व. विद्वांस गुरूजी हमें पूजा (धार्मिक विधी) सिखाते थे। १९८४ तक हम कुछ बहनों ने पौरोहित्य करना भी शुरू किया था। उस साल वं. ताईजी के प्रवचनों का आयोजन किया था। प्रतिदिन अभिषेक होता था। स्मिता पूजा कर रही थी और मैं पौरोहित्य कर रही थी। पूजा होने के पश्चात् उन्होंने मुझे शाबाशी दी और तब से वे मुझे 'अहल्या मंदिर के गुरुजी' ऐसे पुकारती थीं। जब जब वे आती थीं तब पूछती थीं, गुरुजी क्या नया सीखा? वर्ग कैसे चल रहे हैं? महिलाओं ने पौरोहित्य करना लोगों को पसंद है क्या? उनकी इस पूछताछ से मेरा उत्साह और द्विगुणित होता था। वं. ताईजी को अथर्वशीर्ष, पुरुषसूक्त, श्रीसूक्त पूरे मुखोद्गत थे। अभी अभी दिसंबर में हुए अखंड हरिनाम सप्ताह में वे उपस्थित थीं। उनका तब का उत्साह देखकर हमें कल्पना भी नहीं थी कि यह उनका अंतिम दर्शन होगा। उस सप्ताह में रोज सुबह कोई एक दम्पती पांडुरंगजी की पूजा करते थे। पूजा करते समय पत्नी ने पति के दाईं ओर या बाईं ओर बैठना ऐसा संदेह हुआ, कोई बोलते थे पत्नी की जगह पति के बाईं ओर है इसलिये पूजा समय उसने पति के दाहिनी ओर बैठना चाहिये। वापस जाते समय वं. ताईजी ने मुझे पास बुलाकर कहा, ''जहाँ तक मुझे ज्ञात है पत्नी की जगह पति की बाईं ओर है। पर मैं इस विषय में अधिकारी व्यक्ति नहीं हूँ''। इसलिये किसी अधिकारी व्यक्ति को पूछ लेना उचित होगा। मैं शीघ्र ही हमारे टोकेकर गुरुजी के पास गयी और तब शंकानिरसन हुआ। शंका का क्या निरसन हुआ यह बताने जब मैं अहल्या मंदिर आईं तो ताईजी पुणे निकल गयीं। बात नहीं हो पाई। लेकिन उन्होंने जो संदेश दिया जहाँ शंका होगी वहाँ लोगों को चर्चा के लिए अवसर न देते हुए अधिकारी व्यक्ति की राय शीघ्र लेनी चाहिये यह महत्त्वपूर्ण पाठ उन्होंने मुझे दिया। वं. ताईजी को प्रणाम करने के पश्चात् वे अत्यंत प्रेम से पीठ पर हाथ फेरती थीं। उनका स्पर्श याने उनका बोलनाही था। उस स्पर्श से वे बताती थीं। जयश्री, अच्छा काम करती हो, आगे बढो। आज भी मैं वह स्पर्श, वह स्पंदन महसूस कर रही हूँ। देवी अहल्या मंदिर में चलनेवाले सभी प्रकल्पों के बारे में उनके मन में उत्सुकता रहती थी और वे उचित मार्गदर्शन भी करती थीं। उनके देहांत से मानो हमारा दीपस्तंभ ही टूट गया। वे कहती थीं ४५ वर्ष की उम्र के बाद घर गृहस्थी संभालते हुए हमें कम से कम एक घंटा काम के लिये देना चाहिये। उन्होंने बताए हुए मार्ग पर निरंतर चलना घर गृहस्थी संभालते हुए समाजसेवा करते रहना यही ताईजी को उचित श्रद्धांजलि होगी।

जयश्री खांडेकर
देवी अहल्या मंदिर

●●●

सामान्य शरीर में ''असामान्य व्यक्तित्व''

वं. मौसीजी का गंभीर शांत, प्रसन्न व्यक्तित्व तो वं. ताईजी का चैतन्यमय, उत्साही और प्रसन्न व्यक्तित्व।

लक्ष्मी-सरस्वती के संगम से राष्ट्रसेविका समिति की वर्धा की गंगा संपूर्ण भारत में ही नहीं भारत के बाहर भी प्रवाहित हुई। जिस आदर्श नेतृत्व में हमारी श्रद्धा है उनका स्मरण, शाब्दिक गुणगान से करना यह श्रद्धांजलि नहीं, तो उनके स्मरण से मिलनेवाली स्फूर्ति-कार्य के प्रति समर्पण भाव को जागृत रखना यही श्रद्धांजलि होगी। समिति की सेविका एक अलग व्यक्ति रूप नहीं संगठन श्रृंखला की वह एक कडी है। एक एक सेविका जब समिति कार्य से एकरूप होगी वही उसकी इस समर्पित जीवन को सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

वं. ताईजी जब वर्धा आती थीं तो मेरे निवास पर ही ठहरती थीं। अत: उनके व्यक्तित्व के अनेक पहलू मैं देख सकी। उनके सामान्य से दीखनेवाले आचरण में असामान्यत्व के अनेक उदाहरण आज स्मरण आ रहे हैं।

सर्व प्रथम वं. ताईजी की भेंट हुई नागपूर के समिति के प्रधान कार्यालय देवी अहल्या मंदिर में। वं. मौसीजी को अंतिम बिदाई देने के पश्चात् हम सब अहल्या मंदिर में ही रूकी थीं। दूसरे दिन प्रात: वापस लौटते समय प्रमुख संचालिका वं. ताईजी को प्रणाम किया। उन्होंने प्यार से पीठ सहलाई और कहा 'तुम सब अत्यंत दु:खी मन से लौट रही हो। सम्हाल कर जाना। इन शब्दोंमें उनके मातृहृदय की प्रचीति मिली। वं. मौसीजी ने कितनी बडी जिम्मेदारी उन्हें सौंपी थी। ऐसी परिस्थिति में भी दूसरों की मनस्थिति की चिंता वे करती थीं। यह बात मन पर अमिट प्रभाव अंकित कर गयी और यही सभी का मातृस्थान बना।

वं. मौसीजी के निधनोपरांत श्रद्धांजलि का कार्यक्रम था। मा. आप्पाजी जोशी ने वं. ताईजी के संबंध में कहा ''वं. मौसीजीने योग्य व्यक्ति पर कार्य का दायित्व सौंपा है। वं. ताईजी जब कभी वर्धा आती मा. आप्पाजी जोशी के यहाँ अवश्य जाती थीं। मा. आप्पाजी जोशी के निधन के बाद श्रीमती काकू से मिलने अवश्य जाती रहीं। अनेक व्यस्त कार्यक्रमों के बावजूद भी वे मिलने के लिये समय निकाल ही लेती। विदर्भ के प्रवास में वे वर्धा अवश्य आती। एक दिन के लिये संभव न हो तो कुछ घंटों के लिये प्रवास, कष्ट का विचार न करते हुए आती थीं ऐसी थीं उनकी श्रध्दा आराध्य देवता देवी अष्टभुजा के प्रति।

वं. ताईजी जब आती, हम अपनी कठिनाइयाँ उनको बताती। कार्य को प्रतिसाद बहुत कम मिलता है कोई आता नहीं। वं. ताईजी ऐसे समय हमें आशावादी मार्गदर्शन करती। वे हमेशा आत्मपरीक्षण की सलाह देती। एक बार महँगाई के विरोध में मोर्चा निकला। हम उनमें सम्मिलित नहीं हुए। उन्होंने तुरंत टोका 'क्या आप लोगों के लिये महँगाई नहीं है क्या? समाज की समस्याओं के लिये हमेशा आगे रहना चाहिये' ऐसा वे कहती। उन्हें रामदास स्वामी का 'दासबोध' ग्रंथ बहुत प्रिय था। क्योंकि उसमें कोरा उपदेश नहीं है। वे कहती थीं महिलाएँ ही महिला की शत्रु है ऐसा कहा जाता है। यह कलंक हमें धोना चाहिए। आज समाज की स्थिति कैसी है? सत्त्वहीन हो गया है समाज। सत्त्व को जगाना चाहिए। समाज याने हम ही तो हैं। हमें ही अपना 'स्व' जागृत करना है। बच्चों पर संस्कार हमें ही करना है। हम कर सकते हैं ऐसा उनका आत्मविश्वास था। हरेक महिला ने दिन के चौबीस घंटों में से एक घंटा राष्ट्रकार्य, समाजकार्य के लिये देना ही चाहिए ऐसा वे हमेशा कहती थीं।

वं. ताईजी देवी अष्टभुजा मंदिर, वर्धा की प्रमुख विश्वस्त थीं।

सौ. लता देशपांडे
वं. लक्ष्मीबाई केळकर स्मृति वाचनालय, वर्धा

●●●

रसना पर नियंत्रण

वं. ताईजी के पति श्री. विनायकरावजी आपटे के निधन के पश्चात् वं. ताईजी पहली बार देवी अहल्या मंदिर में आई थीं। उनका बौद्धिकवर्ग आयोजित किया था।

देवी अहल्या मंदिर की पुरानी वास्तू बैठक के कमरे में सभी सेविकाएँ एकत्रित थीं। सामने वंदनीया मौसीजी, माननीया ताई दिवेकर तथा मा. ताईजी आपटे बैठी थीं। कमरे में नीरव मौन छाया हुआ था। वंदनीय मौसीजी केलकर ने बोलना प्रारंभ किया। प्रथम स्व. विनायकरावजी को श्रद्धांजलि अर्पित की, तत्पश्चात् मा. ताईजी का परिचय नई सेविकाओं को कराया और ताईजी को सेविकाओं के लिये मार्गदर्शन करने का आदेश दिया।

वं. ताईजी खडी हुईं। कई क्षण वे स्तब्ध खडी रहीं। कंठ से बोल नहीं फूटते थे, मानों सारा जीवनपट उनके मन:चक्षुसमक्ष साकार हो रहा था। गला रूंध गया था। नेत्र सजल हो उठे थे। सेविकाएँ उनके शब्द सुनने के लिये व्याकुल थीं ... क्षणमात्र में ही दु:खावेग को रोककर ताईजी ने सदा की भाँति बोलना प्रारंभ किया। ४५ मिनट उनकी वाक्गंगा अविरत बह रही थी। सेविकाएँ उनका एक-एक शब्द मंत्र की भाँति अपने हृदय में सहेजकर रख रही थीं। एक कर्तव्यदक्ष सेविका वैयक्तिक दु:ख पर मात कर पुन: समिति कार्य में रममाण हो गई।

१५ अगस्त १९८६ शिशु ज्ञान मंदिर में वं. ताईजी के हाथों ध्वजारोहण संपन्न हुआ। बालक-बालिकाओं को ताईजीने उद्बोदक किंतु रंजक कथाएँ बताईं। सारा कार्यक्रम समाप्त होने पर मेरे यहाँ भोजन का कार्यक्रम आयोजित किया था। वं. ताईजी व अन्य कार्यकारिणी की सदस्याएँ भोजन करने बैठीं। ताईजी ने हर पदार्थ की सराहना की परंतु आग्रह करने पर वे बोलीं ''इंदुताई सच कहूँ? आज इस उमर में भी मैं काम करते हुए दिखाई दे रही हूँ उसका असली रहस्य रसना पर नियंत्रण रखने में ही है'' वास्तव में रसना पर ही नहीं अपितु जिव्हा पर भी कार्यकर्ता का नियंत्रण होना चाहिये यही ताईजी ने सूचित किया। मुझे स्मरण आया एक सूत्र ''एक बार खाए वो योगी, दोबारा खाए तो भोगी, तीन बार खाए सो रोगी।''

उस दिन शिशु ज्ञान मंदिर कार्यकारिणी की सदस्याएँ सुबह से काम में लगी हुई थीं। भोजन के समय ताईजी से उनका परिचय करवाया तो वे बोलीं ''इंदुताई तुम्हारी इन कार्यकर्ता बहनों का उत्साह और कार्य कौतुकास्पद है। तुम पंचकन्याओं के प्रयत्नों से पाठशाला की कीर्ति बढेगी, कार्य बढेगा'' ताईजी का यह आशीर्वाद था। उनकी इच्छा को मूर्तरूप देने के लिये सब बहनें प्रयत्न करेंगी इसमें कोई शंका नहीं।

एक बार समिति का ग्रीष्म वर्ग विदर्भ के वरोडा में रखा गया। मा. विद्याताई पंडे सर्वाधिकारी थीं। उनकी पाठशाला में वर्ग रखा गया था।

मैंने तीन बजे प्रार्थना का अर्थ बताना प्रारंभ किया। सेविकाएँ सुन रही थीं, लिख रही थीं। चार बजे समय समाप्त हुआ तो मैं कमरे के बाहर आई तो क्या आश्चर्य! वं. ताईजी अकेली बरामदे में प्रार्थना का अर्थ सुनते हुए बैठी थीं। पता नहीं कबसे खडी थीं? मैंने पूछा आप कब आईं? ताईजी ने कहा - आधा घंटा हुआ होगा। इतना आश्चर्य मत करो। मैंने ही कहा था ''प्रार्थना का अर्थ बताते हुए व्यवधान ना आए। अत: मेरे आने की सूचना ना दें। मुझे स्वयं भी यह अर्थ सुनना था इसलिये बाहर खिडकी के पास खडी होकर सुन रही थीं। हम स्वयं विलंब से जाएँ तो उसके कारण अन्य लोगों को कष्ट क्यों दें? आज गाडी ही देर से पहुँची।''

दूसरे दिन उन्हें लेकर हम बाबा आमटेजी के आनंदवन में गए। बाबा आमटेजी उस समय सोमनाथ गए थे। सौ. साधनाताई ने हमारा स्वागत किया। दो घंटे की चर्चा में वेदांत से लेकर प्रचलित वर्तमान घटनाओं तक सारे विषयों पर बातें हुईं। वं. ताईजी का अनेक विषयं का पठन, जीवनानुभव और बहुआयामी बुद्धि का परिचय हुआ।

शिक्षा और जीवन एक ही सिक्के के दो पहलू हैं।

अपनी शिक्षा का आपके प्रत्यक्ष जीवन से संबंध होना चाहिए, केवल ज्ञान से कोई लाभ नहीं। वं. ताईजी सदैव यह कहती थीं। कृषि महाविद्यालय की सर्वोच्च उपाधि पानेवाले विद्यार्थी को प्रत्यक्ष खेतीबाडी के कामों का कोई ज्ञान नहीं होता। 'गीता' याद कर लेने या केवल पढ लेने के बजाय उसे जीना सीखना होगा। भारतीय श्री विद्या - निकेतन की शिक्षा का यही मूलभूत दृष्टिकोण है यह बताते हुए मुझे अभिमान का अनुभव हो रहा है।

सौ. प्रतिभा भावे
अध्यक्ष - भारतीय श्रीविद्यानिकेतन

●●●

जागो नारी

जागो नारी जागो देश। ताईजी का यह सन्देश॥
हम भारत माँ की पुत्री हैं। माँ की सेवा करनी है॥
यही हमारा धर्म है। धर्म की रक्षा करनी है॥ जागो....
नारी शक्ति रूपिणी है। माता दुर्गा भवानी है॥
वीर नारी झाँसी है। ममतामयी माता है॥
नारी अहल्या और अष्टभुजा भी है॥ जागो....

पी. राधा
विशाखापट्टनम्

●●●

सरस्वति नमस्तुभ्यं मातृरूपिणि वत्सले
स्मरामो दिव्यचरितं आत्मसामर्थ्यवृद्धये।।
मस्तके हिमखण्डं च जिव्हाग्रे मधुशर्करा
एतद् मन्त्रं विजानीयात् रत्नाभरणमुज्ज्वलम्।।
यस्या: ही सेवा सम्पत्ति: वृत्तिर्जनसुखकारिणी
विनायकस्य वीरजायां ताईं नित्यं स्मराम:।।
मातृवत् स्नेहवात्सल्यं राष्ट्र कार्यार्थ जीवनम्
सरस्वति नमस्तुभ्यं सेविका प्रेरणा बलं।।

प्रतिभा भावे

●●●

साधना के दीप

शुद्ध सात्विक स्नेहसूत्र में
संगठन के मोती पिरोए आपने,
कोटी कोटी हृदय धराए
राष्ट्रभक्ति के बीज बोए आपने
शक्तिजागरण के स्वप्न अपने
आँखों में ये जो संजोए मौसीजी ने
शिवसंकल्प को उस साकार करने
साधना के दीप जलाए आपने
लक्ष्मी सरस्वती की जीवन ज्योति से
जाग उठी हिंदुराष्ट्र की सुप्तशक्ति
सर्वस्व समर्पण की समिधाओं से
अब करें हम माँ भारती की आरती
मिले सफलता और दीर्घ आयुरारोग्य
वंदनीया पूजनीया ताई आपको
समर्पित तव छ्व का अखंड सौभाग्य
और स्नेहाशिष सदा मिले हम सेविकाओं को

वासंती (वेलणकर) भंडारी

●●●

और बाळूकाका प्रचारक बने

श्री. गजानन सदाशिव तथा बाळूकाका वझे - यह एक संघ के कारण पगला हुआ व्यक्तित्व। १९३६ से 'संघ' नामक भूत उन्हें छू गया। अत: घर बार सब छोडकर वे राम कार्यालयमें आ गये और 'आपटे' गृह की एक इकाई बन गये।

उनका घर पुणे में ही था। अपने बेटे का इस तरह और कहीं रहना उनके पिताजीको अनुचित लगा। एक दिन रात दस बजे वे अपने दूसरे बेटे के साथ 'आपटे' के यहाँ पहुँचे।

"कैसा है यह लडका न घर आता है न घरकी कोई जिम्मेदारी उठाता है - न नौकरी, न कुछ। आपने उसे बहकाया है" वे अपना दिल खोलकर बोल रहे थे। मनकी टीस बता रहे थे और दादा उनको समझा रहे थे। बाळू काका बाहर बैठकर सब सुन रहे थे।

ग्यारह बजे के आसपास ताई कॉफी के गिलास लेते बाहर आ गयी- "आपकी चिंता मैं समझ सकती हूँ। हमारा भी वह बेटा ही है। वह अपने घर में है ऐसा समझिये। अब काम के बारे में बच्चे बडे हो गये कि उनपर सख्ती नहीं कर सकते।" ताईने कहा।

"आपका कहना ठीक है। परंतु उसकी माँ..." पिताजी
मैं स्वयं घर आकर समझाऊँगी उन्हें - दूसरों के लिए, देश के लिए काम आनेवाला बेटा होने के कारण उनकी कोख धन्य हुई है।

उसकी माँ रोज राह देखती है - पिताजी
"वे प्रतिदिन घर आएँगे। बाळूकाका सुनिये 'पुणे' में रहोगे तब अवश्य ही रोज अपने घर की चक्कर लगाना। माँ के हाथ का भोजन करना। दूसरों की सेवा करते समय माँ की मानसिकता भी जाननी चाहिये।

अपने बेटे को ले जाने के लिये आए हुए बापूसाहेब वझे, आपटे के घर की ईकाई बनकर ही वापस गये और बाळूकाका आजीवन प्रचारक बने।

पू. बाळासाहेब देवरसजींके साथ ➧

➧ प्रथम संचालिका का अनुसरण
करनेवाली द्वितीय संचालिका

वं. उषाताई और वं. ताई ➧

जम्मू – काश्मिर के माजी राज्यपाल
श्री. जगमोहनजींके साथ वं. ताईजी

मा. अनूताई वाघ, रानी–माँ गाईदुनुल्लू
और वं. ताई

मा. उमाभारतीजी, वं ताईजी
और सौ. भिशीकर

मा. कमलाताई होस्पेट का
सत्कार करती हुईं वं. ताईजी ▶

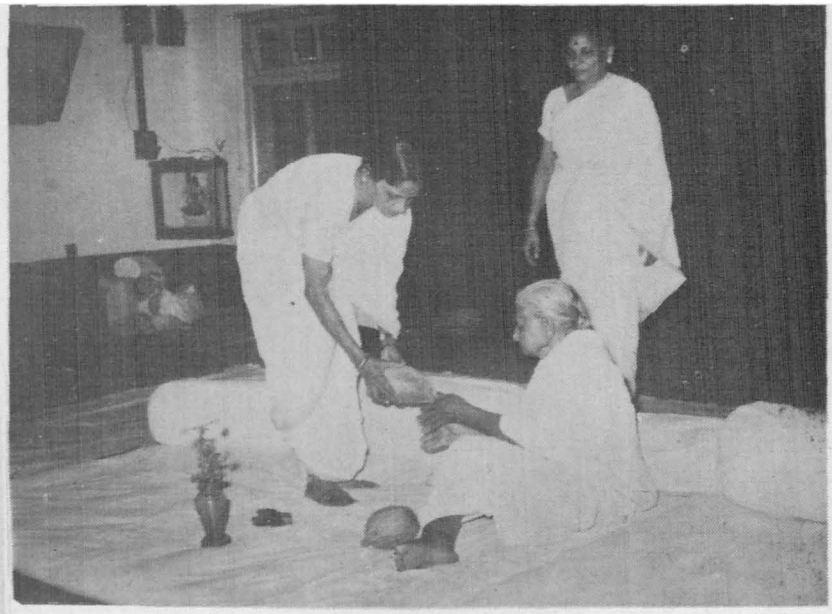

◀ कॉ. गोदावरी परुळेकरजींके साथ वं. ताईजी

मा. गंगुताई पटवर्धनका सत्कार करती हुअी
वं. ताईजी साथमें मा. सरोजिनी बावर ▶

नागपूर संमेलनमें देवी अष्टमूजा का आशीर्वाद पाते हुए मान्यवर सामाजिक कार्यकर्ती बहने

मद्रास के कार्यक्रममें नामवंत समाजसेविका श्रीमती पद्मा सुब्रमण्यम से वार्तालाप

रा. से. समीति के मूल आधार जीवनव्रती सहकारी वं. मौसीजी समवेत
जिजि काणे, ताई अंवर्डेकर, ताई आपटे, ताई दिवेकर तथा माई नागले

सहकारी भगिनी जिनके कारण भारतभर में राष्ट्र सेविका समीतिका कार्यविस्तार हुआ

कृतज्ञ मी ! कृतार्थ मी ! वं. ताईजीके चरित्रकथा के प्रकाशन समारोहपर

विश्राम के समय थकान दूर करने हास्यविनोद से सहकारियोंको उल्हसित कर रही है, वं. ताईजी
मा. मृणालिनी देसाई, मा. वकुळताई देवकुळे, मा. योगिनी जोगळेकर के साथ

समितीकार्य फले फुले फिर भी संघकार्यकी न हो उपेक्षा
अर्धांगिनी बन निभायी अर्धनारीनटेश्वररूपी कठिन तपस्या
ती. विनायकराव तथा दादा आपटे और वं. ताई

वं. ताईजी अपने परिवारमें

वं. ताईजी विविध भावमुद्राओंमें

जीवन पथ-पर

मेरे माता पिता सच्चे अर्थ में लोकमान्य थे

किसी के पिता प्रसिद्ध व्यक्ति होते हैं तो किसी की माता कीर्तिवान होती है। माता पिता दोनों जाने माने और प्रसिद्ध हैं ऐसा उदाहरण अपवादात्मक ही मिलता है। और इन दोनों का खानदान बडा धनवान या उच्चविभूषित था ऐसी बात भी नहीं। दोनों का जन्म सर्वसाधारण कनिष्ठ मध्यम परिवार में हुआ परंतु मेरे माता पिता दोनोंही कीर्तिवान थे। सच्चे अर्थो में लोकमान्य थे। इसीलिये मैं स्वयं को माननीय विनायकराव आपटे का पुत्र कहूँ या राष्ट्रसेविका समिति की ताई आपटे का पुत्र कहूँ यह प्रश्न सदा मेरे सामने उठता है। और एक विशेषता इनमें थी कि ये दोनों सामान्य कार्यकर्ता थे। घर घर में जाना, स्वयंसेवक सेविकाओं का हाल पूछना, कोई बीमार हो तो उसकी पूछताछ करना, उनकी आवश्यकतानुसार मदद करना, सेवा करना, छोटे बच्चों को प्रोत्साहन देना, किसी को पीठ पर शाबाशी देना तो किसी को सांत्वना, संकट में फंसे लोगों को सहायता करना और अपने घर का द्वार हर आनेवाले के स्वागत के लिये खुला रखना ऐसा था इनका जीवनक्रम। परंतु इसके बाद भी प्रसिध्दि से दोनों ही दूर थे, सेवाकार्य वह भी बिना किसी दिखावे के ऐसा यह अनोखा कुटुंब था। आंग्ल भाषा में अबू बेन अदेम नाम की एक कविता है उस कवितानुसार देवदूत ने मानों इन दोनों के नामों को प्रथम क्रमांक पर लिखा और दोनों ही अजरामर हो गए। ११ जनवरी १९६७ के दिन मेरे पिताश्री विनायकराव आपटे जानलेवा बीमारी का हाथ पकड अपने मातृगृह चले गये और ठीक २७ वर्षों बाद ताई आपटे मेरी माताजी बिलकुल क्लेशरहित और कोई सूचना दिये बिना चिरनिद्रा में अनंत के प्रवास को चली गयी। इन २७ सालों में कभी पिता की कमी महसूस नहीं होने दी परंतु आज यह खालीपन बहुत ही महसूस हो रहा है। माँ ने यह सब कार्य करते हुए राष्ट्रसेविका समिति का प्रमुख संचालिका पद भी समर्थता से सँभाला।

क्या क्या याद करें?

तीर्थरूप माँ के कौन कौन से गुणों का वर्णन करूँ? हमारी आर्थिक स्थिति पूर्णत: समाधानकारक नहीं थी। प्राथमिक शाला में शिक्षक, उसके उपरांत न्यायशास्त्र का अभ्यास और रात की शाला में शिक्षक का कार्य। तंगी की स्थिति में परिवार को थोडी मदद मिले इसलिये ट्यूशन इस प्रकारसे तो दादा का प्रवास और प्रयास चल रहा था। इस स्थिति में माँ ने टाट को पैबन्द लगाने का कार्य आनंद के साथ किया। आने जाने वालों का स्वागत प्रेमपूर्वक किया और अतिथि को घर की तंगी का जरासा भी अनुभव नहीं होने दिया। उसमें भी १९३६ में जब दादा पर पुणे संघशाखा की जिम्मेदारी आई तब माँ को यह कसरत और भी अधिक मात्रा में करनी पडी। परंतु बिना डगमागाए उसने खुशी से सब सँभाला। वे दिन ही कुछ और थे। उस समय संघ के कार्यालय आस्तित्व में नहीं थे। संघ का कार्यक्षेत्र धीरे धीरे वृद्धिंगत हो रहा था। मद्रास, बंगलोर से लेकर दिल्ली तक कोई भी अतिथि किसी भी समय आता था, परंतु उसे घर की स्थिति का अनुमान भी नहीं होने दिया जाता था, उसका भलीभाँति स्वागत किया जाता। यह सब माँ ही करती थी। जो भी व्यक्ति हमारे यहाँ से आतिथ्य पाकर जाता वह उसे भूलता नहीं था। आज ४०-५० सालों बाद भी उनमेंसे कोई मिलता है तो उस आतिथ्य का स्मरण कराता है। शनीपार के पास की उस वास्तु के वास्तव्य की आज भी कई वयोवृद्ध कार्यकर्तागण

याद दिलाते है और इस सब कार्य में माँ के सहभाग की स्मृति ताजा करते हैं।

बहुतों का आधार

महात्मा गांधी के वध के समय का प्रसंग है। उस समय पू. दादा का प्रवास कोल्हापूर जिले में चल रहा था। उस समय हम बच्चे विद्यार्थी अवस्था में थे। फिर दादा जब पुणे में आए तब उन्हें भी कारावास हुआ, उसी दौरान पुणे में आँखों की बीमारी फैली हुई थी। माँ की आँखों पर भी उसका असर हुआ था। हमारे मकान की तीन बार छान बीन की गई, तीनों बार माँ ने सामना किया। छान बीन करनेवाले अधीक्षकों के कानूनी अधिकार के बारे में पूछताछ करते हुए साथही प्रसंगावधान रखते हुए माँ ने समर्थता से इस प्रसंग का सामना किया।

उस संघबंदी के समय भी माँ ने सैंकडों परिवारों में जाकर सत्याग्रहियों के घरवालों की पूछताछ की। निराश आप्तजनों को ढाढ़स बँधाया। उस समय रोज चार पाँच घंटों का माँ का यह कार्यक्रम चलता था। इस प्रकार से गृहस्थी की गाडी माँ ने बिना डगमगाए चलाई। ती. दादा ने व्यवसाय पूरी तरह से छोड दिया। पर माँ ने उन्हें कभी कोई दोष नहीं दिया। बल्कि आनंद और समाधान के साथ उन्हें पूरी तरह से साथ दिया। किस प्रेरणा से वह यह सब कर सकती थी यह मैं कभी जान नहीं पाया। ती. दादा ने हमारा मुद्रणालय का व्यवसाय आरंभ किया। वह समय तो और भी कठिन था। हम तीनों भाई बहनों के विवाह इसी दौरान हुअे थे परंतु किसी भी प्रकार की कमी न रखते हुए यह समय माँ ने निभाया।

पानशेत प्रलय

१९६१ में पुणे में पानशेत बाँध के फूटने से आए प्रलंयकारी संकट में माँ ने समिति की भगिनियों को साथ लेकर सहायता का कार्य अहोरात्र चालू रखा। उस समय पुणे की अनेक महिला संस्थाओं ने एकत्रित होकर संयुक्त स्त्री संस्था के नाम से एक संस्था स्थापित की। सेवाकार्य की दृष्टि से ही इसका निर्माण हुआ था। माँ का उस संस्था में स्थापना से लेकर आज तक सहभाग रहा। अलग अलग राजनीतिक दलों की पार्श्वभूमि होते हुए भी इन कार्यकर्ताओं में माँ का अलग स्थान था और अंत तक बना रहा।

गोवा मुक्ति संग्राम

गोवा विमोचन समिति के कार्य में भी माँ का सक्रिय सहभाग था। ना.ग.गोरे, जयंतराव तिलक और विनायकराव आपटे (दादा) इस समिति के कार्यवाह थे। इस कार्य में माँ तथा समिति की सहकारी सेविकाओं का सहभाग लक्षणीय था। सत्याग्रहियों को स्टेशन पर बिदा देना, निधि संकलन आदि सभी कार्य वही करती थी।

बाधाओं के पथ पर दौडे

घर की आर्थिक परिस्थिति अब कुछ सँभलने लगी थी। थोडे अच्छे दिन आ रहे थे। विपरीत दिन देखे हुए हम जैसे कुटुंबियों के लिये अब थोडे सुख के दिन देख पायेंगे ऐसा समय था। हाथी के पैरों से गया सोना चींटी के पैरों से वापस आ रहा था। आपटे परिवार की अगली पीढ़ी का पुत्रोत्सव संपन्न हुआ ही था कि..... सुपारी की भी जिन्हें आदत नहीं थी ऐसे हमारे दादा की जिव्हा को कैंसर जैसे दुर्धर रोग ने जकड लिया। हमारे स्थितप्रज्ञ दादा ने इस जगविख्यात अतिथि का भी स्वागत किया और वह भी असहाय वेदनाओं के द्वारा। टाटा रुग्णालय में उनकी जाँच की गई और 'फिजिक एक्सलेंट' का प्रमाणपत्र उन्हें मिला परंतु इतनी सुदृढ प्रकृति के व्यक्ति को यह रोग बहुत शीघ्र ग्रस लेता है इस उक्ति के अनुसार केवल ६ महीनों में ती. दादा को परलोकवासी होना पडा। माँ की जिम्मेदारी दुगुनी हो गई। घर की जिम्मेदारी के साथ ही माँ समिति के कार्य का क्या होगा, इस संभ्रम में थी। इसी वर्ष १९६८ में राष्ट्र सेविका समिति का अखिल भारतीय सम्मेलन पुणे में आयोजित किया गया था। वंदनीया मौसीजी के कथनानुसार माँ इस सम्मेलन में सहभागी हुई। उसी कार्यशैली का प्रभाव सदानुसार इस सम्मेलन पर भी रहा और इस प्रकार से उनका कार्य अबाधित आगे चलता रहा।

ती. दादा की दशक्रिया विधि के समय प.पू. बालासाहेब देवरसजी आए थे। तब उन्होंने कहा था- ''मा. विनायकरावजी का घर सर्वार्थ से संघ का घर कहा जा सकता है।'' इस एक वाक्य में ही माँ के कर्तृत्व का परिचय मिलता है।

गुरुतर भार मिला समिति का

१९७८ में वंदनीया मौसीजी ने समिति का कार्य करते करते ही चिर-विश्रांती ली और उनकी ही आज्ञानुसार समिति की प्रमुख संचालिका का दायित्व माँ को सौंपा गया। उस समय उनकी आयु थी ६८ वर्ष। इस आयु में माँ यह जिम्मेदारी निभा पाएगी या नहीं हमें आशंका थी, परंतु माँ की कार्यक्षमता ने वह आशंका झूठी साबित कर दी। सौभाग्य से माँ का स्वास्थ्य अच्छा था। मणिपूर, गोहाटी से ले कर मद्रास कन्याकुमारी तक माँ ने प्रवास किया, भाषण दिये, बौद्धिक वर्ग लिये। कई वर्षों पहले किया हुआ हिंदी का कुछ अभ्यास इस समय उपयोग में आया। मसुराश्रम के ज्येष्ठ कार्यकर्ता ब्र. विश्वनाथजी ने माँ का हिंदी भाषण सुनकर मुझसे कहा '' ताईजी इतनी अच्छी बोल लेती है, मुझे पता ही नहीं था।''

इसी समय में समिति के अखिल भारतीय सम्मेलन बंगलोर, अहमदाबाद, दिल्ली, नागपूर आदि स्थानों पर हुए। माँ के नेतृत्व का अनुभव उस समय सभी ने किया। समिति कार्य में भी वृद्धि हुई। भारत के बाहर के देशों में भी समितिकार्य आरंभ हुआ। गाँव गाँव के प्रवास के दौरान स्वयं के कारण किसी दूसरे को परेशानी न हो इस बात का माँ सदैव ध्यान रखती थी। मिताहार, कष्ट करने की वृत्ति इन सब गुणों के कारण उनका यह समय भी सुख के साथ गुजरा।

घर के कण कण में उनके अस्तित्व की अनुभूति

माँ का सतत प्रवास चलता था। परंतु उनका घर से अखंड संबंध रहा। अपने परिवारजनों की देखभाल का व्रत भी माँ ने अखंड निभाया। प्रवास में रहते हुए भी वह घर से संपर्क बनाए रखती थी। पत्र, फोन के द्वारा उसने घर के साथ धागा जोड रखा था। घर की छोटी से छोटी चीज में उसका मन बसता था। वह सब रिश्तेदारों के बीच का धागा थी, हर एक के सुख दुःख में वह सहभागी होती थी। माँ के बिना घर की कल्पना भी असंभव है। घर के कण कण में उनके अस्तित्व का अनुभव होता है। माँ, मौसी, भाभी, बुआ, दादी, परदादी हर नाते से वह सभी के पास थी। आज के विभक्त कुटुंबपद्धति के दौर में तीन पीढियों का एक साथ रहना सबको आश्चर्यजनक लगता था। पूजापाठ में उन्हें बहुत विश्वास नहीं था। तीर्थयात्राएँ न हो पाएँ तो भी चल सकता है परंतु 'रायगड' जरूर देख आओ कहकर उन्होंने हमें आग्रह से देखने को कहा था।

भगवद्गीता माँ की श्रद्धा का विषय था। उनको करीब-करीब सारी गीता याद थी। इसी कारण से वह दादा के द्वारा संपर्क में आए गीता धर्म मंडल के विविध कार्यक्रमों में सहभागी होती रहती थी। गीता जयंती के दिन दोपहर को महिलाओं के लिये गीता पाठ और तत्पश्चात् किसी व्यक्ति का भाषण यह मूल कल्पना माँ की ही थी।

लोकमान्य तिलक जी से जो उनका रिश्ता नाता था उसका माँ को अभिमान था। और वह व्यर्थ नहीं था। अपने कर्तृत्व से उन्होंने यह सिद्ध किया। ऐसी मेरी माता की स्मृति में मेरा विनम्र अभिवादन। उसका आशीर्वाद हमें सदैव मनोबल देगा।

वसंत आपटे

●●●

हमारा नाता भगवान से

३० अप्रैल १९७२ को जिजामाता ट्रस्ट बंबई का उद्घाटन समारोह था। वं. ताईजी को भी वहाँ पहुँचना था। मेल तथा एक्स्प्रेस गाडियाँ ठाणा में रूकती नहीं थी। अतः ताईजीने दोपहर ११-२० की पॅसेंजर तय की। ११-१० को टिकट निकाल कर स्टेशन पहुँची तो गाडी दूर पूल के नीचे खडी थी। ताईजी उधर जा ही रही थी, गाडीने चलना प्रारंभ किया। ताईजी ने गति बढ़ायी। सामने जाकर इंजिन ड्रायव्हर को गाडी रोकने के लिये हाथ से इशारा किया। गाडी रूकी। सामने आये हुए डिब्बे में- ताईजी और साथ की सेविकाएँ चढ गयीं और गाडी निकली।

आश्चर्य से लोग कहने लगे- आपकी गाडी छूटने वाली ही थी। आजसे गाडी का समय ११-१५ हुआ है। आपको देखकर ड्रायव्हर ने गाडी रोकी। आपका और उनका परिचय, रिश्ता-नाता है क्या?

जी हमारा नाता है भगवान से। हम अच्छा भला काम करते हैं अतः भगवान इस तरह किसी भी रूप में हमें सहायता करते हैं। अपने काम पर अपनी निष्ठा होनी चाहिये।

सरस्वतीनिकेतनम्

शनीपार के पास ७५१, सदाशिव पेठ यह अनेकों का घर था। इस घर ने अनेकों को अपनत्व, प्रेम, स्नेह दिया। घर में जगह तो कम थी परंतु अनेक लोगों के सम्भालने की भरपूर ताकद थी वहाँ! यह घर प्रात: ३॥-४ बजे ही जाग जाता। रात देर गए तक लोगों का आना जाना चलता रहता था। इस घर की सीढ़ियाँ अनेक लोगों के आवागमन से घिस गईं ऐसा सब हँसी मजाक में कहा करते। घर में जगह कम होने के कारण रसोईघर तक बिछौने डाले जाते थे।

पहली चाय भोर तडके ही बनती थी। घरवालों के साथ कोई न कोई बाहरवाले भी होते थे। सुबह-सुबह पेपर, कुछ अच्छे लेख, पुस्तकों का अच्छा पठनीय भाग वसंतराव पढकर दिखाया करते। दिन निकलने पर फिर किसी के पास समय नहीं होता था। औरों को दुनिया देखने के लिये घर से बाहर जाना पडता है, ताईजी के घर में ही 'दुनिया' आ जाती थी। ताईजी को बहुत पढ़ने के लिये तो समय नहीं मिलता परंतु प्रात: का यह 'श्रवण' बहुत जानकारी दे जाता। साहित्य, समाजकारण, राजकारण सभी कुछ होता था उसमें! हाथ कार्य करते और बुद्धि को खाद्य प्राप्त होता। घर के छोटे बच्चे बिछौने में लेटे-लेटे यह सब सुना करते। घर को इस बहाने अनेकविध विषय सामूहिक चर्चा की अच्छी आदत लगी थी। बच्चों को भी यह सूचना दे रखी थी कि "बाहर कुछ अच्छी बातें सुनो, देखो तो घर में बताया करो" गपशप की महफिल जमती तो छोटे बडे सभी उसमें शामिल होते। ताईजी कहतीं- "इसी तरह सब साथ रहो, प्रेम के रिश्ते बनाए रखो।" मौसी, चाचा, मामा सभी रिश्तेवालों को इस घर का बडा सहारा था। इनके साथ और भी स्नेही जैसे- बाळूकाका वझे, पेंडसेकाका, बाळासाहेब साठे, डॉ. साठे, बाबा आगाशे, मांडके परिवार, पानसे परिवार कितने नाम गिनें?

घर की सुबह जैसी अनोखी वैसी ही शाम भी थी क्यों कि दादा संध्या समय कुछ शीघ्र ही भोजन कर के बाहर जाते अत: रात सबका भोजन भी शीघ्र निपटता था। ७ बजे सब मिलकर रामरक्षा कहते।

इस समय घर के सभी सदस्यों का उपस्थित रहना अनिवार्य था। फिर चर्चा होती, चर्चा के समय कभी भी "तुम छोटे हो, तुम्हें क्या समझता है?" ऐसी भाषा का उपयोग नहीं किया गया। घर में कोई बीमार हो तो उसका परहेजवाला भोजन सभी के लिये बनता था। किसी एकको कोई पदार्थ खाना मना हो तो वह पदार्थ घर में बनता ही नहीं था, ताईजी का यह आदेश ही था। इस प्रकार की छोटी-छोटी बातों से ही घर एकसंघ रहने में मदद मिलती है। घर का बीमार व्यक्ति स्वस्थ होने पर ही नैवैद्य के लिये पुरणपोली बनती थी। घर के सुखदुख सभी लोगों ने बाँटने चाहिये ऐसा ताईजी का आग्रह था और घर की एकता का प्रतीक भी।

ताईजी ने संबंधों की अपनी अनेकों भूमिकाओं को बखूबी यशस्वीरूप से निभाया। अपने पिताश्री नानाजी विद्वांस की वह लाडली थी। माँ बीमार रहा करती थी परंतु ताईजी ने अंत तक दीदी का कर्तव्य निभाया। ताईजी के विवाह के बाद पिता ने कहा था 'मेरा सिपाही आज चला गया' उनकी बहनें तब छोटी ही थीं। विवाह के बाद भी रोज शाम को मायके आ कर माँ के कामों में हाथ बँटा जातीं। ताईजी की बहनें सिंधु, भांजी गंगूताई शाला से आकर बाहर सीढियों पर बैठी रहतीं, "हमारी ताई आने पर ही दूध पीएँगे।"

ससुराल में सगे सास-ससुर तो नहीं थे परंतु उस बडे मकान में मामाससुर, मौसीसास वगैरह थीं। उन दिनों में बड़ों का आदर लिहाज काफी रखना पडता था, परंतु ताईजी ने सबके लिये कष्ट सहकर सभी का मन जीत लिया था। समवयस्क ननदों से भी ताईजी के स्नेहपूर्ण संबंध थे जो आज तक कायम थे। उनकी सगी ननद बनूताई को तो अपनी भाभी के प्रति अत्यंत अभिमान था। सांपत्तिक स्थिति कमजोर होते हुए भी प्रेम के धागे पक्के ही थे, ऐसा बनूताई कहती हैं। ताईजी की बहन सिंधुताई बताती हैं- "ताईजी के बिना सभी का काम रूका रहता। हमसे १३-१४ साल बडी ताईजी हमारे लिये माँ जैसी ही थी। कोई बीमार हो, संकट में हो तो ताई ही पूछताछ करतीं, सहायता के लिये आती थीं। किसी को सहायता की आवश्यकता होती है तो उस समय का, क्षण का महत्त्व होता है, तभी सहायता के लिये तत्पर होना चाहिये, किसी को दुख पहुँचे ऐसे शब्द कभी मत बोलो, यह सब ताई ने सिखाया।" हम बचपन

में ताई के घर रहने के लिये जाते तो वहाँ देशभक्ति पर चर्चा होती थी, कोई मनोरंजन के साधन नहीं थे। फिर भी साल में एक बार ताई के घर जाना यह त्यौहार जैसी आनंद की बात थी।'' मैं पूना की रहनेवाली थी अत: फूलों का बहुत शौक था। मिरज में सुगंधी फूल नहीं मिलते थे पर ताईजी किसी आनेवाले प्रवासी के हाथों याद से फूल, गजरे भेजती थीं। वैसे तो बाजार में अब सभी वस्तुएँ उपलब्ध होती हैं परंतु कोई खास स्मरण के साथ अपनी पसंद की वस्तु भेजे तो उसका आनंद अवर्णनीय होता है।'' यह आनंददान हमें ताई ने ही सिखाया।

ताईजी जितनी स्नेहल उतनी ही कठोर भी थीं। अपना इकलौता बेटा है अत: उसके अधिक लाड उन्होंने कभी नहीं किये। उनकी भांजी गंगूताई ने बताया- '' एक बार वसंत स्कूल से आया। घर में कोई नहीं था। उसे हलुआ खाने का बडा मन हुआ तो मैंने स्टोव पर सूजी भुनना आरंभ किया। ताईजी ने सीढियों पर ही सुगंध से पहचान लिया। उन्होंने हलुआ तो बनाया परंतु वसंत को छोडकर सबको दिया। कारण पूछने पर कहा- घर में कोई नहीं था, स्टोव से कोई अपघात हो जाता तो? ऐसा इच्छा होते ही वह चीज उपलब्ध कराना योग्य नहीं है।'' बाद में दो दिन पश्चात् फिर हलुआ बनाकर उन्होंने वसंता को खिलाया। बच्चों को संस्कार किस प्रकार से दें इसकी शिक्षा सहज ही मिल गई। घर में इतने लोग आते-जाते रहते थे पर अपने बच्चों के प्रति अलग कुछ भाव ताई ने कभी नहीं रखा। सबको समान दृष्टि से देखा। मेरे विवाह के बाद पहले लड्के के समय दादी थकी हुई, तब सारी जिम्मेदारी ताईजी ने ही सँभाली। ताई ने धार्मिक व्रत आदि भी किये पर रूढी समझकर नहीं तो दूसरों को कुछ दे सकें इस दृष्टिकोन से।

यह सब करते हुए ताईजी की सतत सीखते रहने की इच्छा होती थी। इतनी व्यस्त होने पर भी वे कुछ सीखने के लिये क्लासेस में जातीं। उनकी ज्येष्ठ कन्या कुमुदताई बताती हैं- ''हमारे यहाँ सतत लोगों का आवागमन चलता रहता था। रात को भी कब कौन आ टपके इसकी खबर नहीं होती थी। दशहरे के दिन सुबह संघ का संचलन और शाम को घर में कॉफी-पान का कार्यक्रम रहता था। ४००-५०० कप कॉफी बनती थी। एक बार ताई बीमार थी, ज्वर था। परंतु ताईजी ने वैसी अवस्था में सब काम किये। उन्हें हिंदी सीखने की बडी इच्छा थी। भिडे क्लास में वे हिंदी सीखने भी जातीं परंतु लगातार ४ दिन भी ढंग से पढ नहीं पाईं। घर में कोई अतिथी आ जाते तो हम दौडकर उसे बुलाने पहुँच जाते, परंतु फिर भी ७० साल की आयु में भी वह अच्छी हिंदी में भाषण देतीं। हमें हर क्षण उससे कुछ न कुछ सीख मिलती रही। रास्ते में चलते-चलते केले का छिलका पडा हो तो हाथों से उठाकर दूर फेंक देतीं।

ताईजी को गृहस्थी और संगठन दोनों को देखना पडता। संघकार्य के लिये दादा ने वकालत छोड दी, गृहस्थी की गाडी तो चलानी थी। परंतु ताईजी ने बच्चों को साथ लेकर कर्तव्य बखूबी निभाया। इसी कारण से बेटे और माँ का नाता अधिक निकट का था। दोनों ने साथ-साथ बाधाओं को झेला, सहा। दादा ने सौंपी इस दोहरी जिम्मेदारी को ताईजी ने बिना किसी आक्षेप के पूरा किया। इस कार्य में उन्होंने स्वयं और दादा दोनों को ही अपयश आने नहीं दिया। यह यश प्राप्त करने में उन्हें क्या-क्या सहना पडा, कैसे सब सामान और साहस जुटाया यह बात अकल्पनीय है। गरीबी तो कई लोगों के भाग्य में होती है परंतु ताईजी ने उस गरीबी को भी अमीरी में जीया मनोबल के आधारपर। घर के सभी निर्णय ताई और वसंतराव ही लिया करते थे। वसंतराव का घर में पैर रखते ही ''आईऽय'' कहकर माँ को पुकारना इतना परिचित हो गया था कि भाँजे भी उसकी नकल करते थे। दोनों के बीच चर्चा; विवाद होते रहते, वह भी एक मजेदार बात होती। ताईजी की बहू उज्ज्वला वहिनी बताती है- '' विवाह के पश्चात् मुझे ताईजी ने बताया कि हमारी धनसंपत्ति नहीं परंतु मानव संपत्ति भरपूर है। उस बात की सचाई का अनुभव आज तक होता रहा है। वह हमेशा बताती थी कि समय मत गँवाओ, हर क्षण सत्कार्य हेतु खर्च करो। केवल गप्पें मारने की बजाय गप्पों के साथ हाथ से कुछ काम करते रहो। उन्हें ''नहीं'' शब्द से बडी चीढ थी। घर में अमुक है? ऐसा पूछने पर न होते हुए भी उन्होंने कभी नहीं है इस प्रकार उत्तर नहीं दिया और थोडी देर के बाद वह वस्तु उपस्थित की। घर के सभी लोगों से उन्होंने बहुत प्रेम किया। अत: उन्हें सबकी आदतें, पसंदगी, जन्मदिन सब याद रहता था। घर को उनके घर में 'होने' की इतनी आदत थी कि उनके 'न होने' की कल्पना भी सहन नहीं हो पा रही है।''

ताईजी के समधी, समधन इत्यादि सभी रिश्तेदारों से

अच्छे संबंध थे। यहाँ तक कि बहू के मायके वालों, बेटी, पोतियों के ससुरालवालों को भी ताईजी अपनों सी ही लगती थी। उनकी बहू की मामी उषाताई वैद्य लिखती हैं- ''मामाजी को पीलीया हो गया था। पुणे की हवा सेहत के लिये अच्छी है अत: हम पुणे आए थे। ताईजी उस समय ''७५१ सदाशिव पेठ' में रहती थीं। ''कौशिक' घर अभी पूर्ण हुआ था। ताईजी ने मुझे कौशिक में रहने के लिये कहा। मैंने ताईजी से कहा- अभी उस घर की गृहशांति भी नहीं हुई है परंतु ताईजी बोलीं; ''मुझे पूर्ण विश्वास है, मामाजी का स्वास्थ्य अवश्य सुधरेगा और वे यहाँ से स्वस्थ होकर जाएँगे।''

ताईजी के घर में वे स्वयं, उनकी बहू, पोताबहू और परपोता, इस प्रकार से चार पीढियाँ मिलकर रह रही थीं। ''जनरेशन गॅप'' की बातें करनेवाले इस युग में एक दूसरे को समझकर, सँभालकर रहें तो कोई कठिनाई नहीं होती यह ताईजी के घर में आने पर प्रतीत होता था। उनकी पोताबहू माधवी कहती है- ताईजी का एक अनोखा गुण था वे अपना काम किसी को बताने में बडा संकोच करती थीं। करीब-करीब सारा काम खुद करती थीं और श्रेय दूसरे को देती थीं। प्रवास के लिये जाते समय द्वार आए लोगों से कहती- ''मेरी बॅग माधवी ही भरकर देती है।'' सारा सामान वे स्वयं जुटाकर रखतीं, वह केवल बॅग में जमाकर रखना मैं करती थी। कुछ हिसाब वगैरे लिखना हो तो दैनंदिनी, पेन वगैरा स्वयं लाकर देतीं, भूल से पेन सामने ना हो तो स्वयं ही उठकर लाती। रात को कभी जागरण हुआ हो तो स्वयं दवाई हाथ पर रख कर लेने के लिये आग्रह करती, कहती- ''दवाई ले लेना कहने से वह शीशी भली चंगी हो जाएगी पर तुम लोग दवाई नहीं लोगे।'' यह सब अब याद आता है तो लगता ताईजी हमारे बीच से चली गई? हो ही नहीं सकता, वह जा नहीं सकती।

ताईजी की दूसरी पोताबहू वसुंधरा लिखती है- '' विवाह के बाद इस नानीसास का कभी भय या दबाव नहीं लगा। घर का वातावरण एकदम खुला था। घर में कितने लोग किसी भी समय आते-जाते रहते थे परंतु कितनी सहजता से वे सब छोडकर चली गईं।'' उनकी परपोती अवंती के शब्द हैं- परदादी के कोश में 'आलस्य' शब्द ही नहीं था। उनके साथ बात करते समय ऐसा लगता था जैसे सहेली से बातें कर रहे हों। हमारी बातों में सहजता से शामिल हो जातीं। उसे खाली बैठे हमने कभी नहीं देखा, कहीं फल्लियाँ छिलना तो कभी दीया बाती तैयार करना, कोई ना कोई काम हाथों से चलता रहता था।'' सभी पोते-पोतियों की वह लाडली थीं। उसे रोज मिले बिना चैन नहीं आता था। परंतु अब? केवल स्मरण! स्मरण ही शेष रह गया है।

●●●

भावना से कर्तव्य श्रेष्ठ

वं. ताईजी के पति मा. विनायकराव जी के निधन को तीन ही महीने हुए थे। जबकि वं. मौसीजी के रामायण पर प्रवचन 'रेणुका स्वरूप बालिका विद्यालय' में तय हुए। समय रात्रि ९-०० से १०-३० का था। प्रवचन स्त्री-पुरूष सभी के लिये थे। मा. विनायकरावजी के निधन को वर्ष भी न होने के कारण वं. ताईजी घर से बाहर नहीं जाती थीं। फिर भी कार्यक्रम व्यवस्थित हो इस हेतु उन्होंने हमारा मार्गदर्शन किया। समिति का अखिल भारतीय त्रैवार्षिक सम्मेलन पुणे में इसी शाला में हो ऐसा सुझाव वं. मौसीजी ने दिया। अपना दु:ख भूलकर वं. ताईजी ने इतनी बड़ी जिम्मेदारी स्वीकार की। वास्तव में परीक्षा की ही घडी थी। परन्तु सम्मेलन इतना अच्छा हुआ कि सभी प्रशंसा ही करते रहे। यह सम्मेलन संख्या की दृष्टि से तथा स्थान, स्वच्छता, भोजन व्यवस्था, जल व्यवस्था, कार्यक्रम योजना, सन्माननीय अतिथियों का आगमन सभी दृष्टि से अपूर्व था। १८०० उपस्थित सेविकाओं की पूरी व्यवस्था की गयी थी। इस सम्मेलन की तुलना आज भी अन्य सम्मेलनों से की जाती है। इसका एक ही कारण भावनाओं पर नियंत्रण रखकर कर्तव्य कर्म करने की स्थितप्रज्ञता वं.ताईजी में थी।

हमारी दादी-माँ

ताईजी के विविधांगी रूपों में से एक था पोते-पोतियों की ''दादी'' का। उन्हें दादी कहना अच्छा नहीं लगता था अत: 'ताई' कहकर ही सब बुलाते। पोते-पोतियों में उन्होंने कभी भेद-भाव नहीं किया। सबके साथ समान व्यवहार, समान स्नेह। सबकी वह प्यारी सहेली थी। हर किसी के गुणों का, चाहे व छोटा ही क्यों न हो, ताई को कौतुक था। किसी को उसने छोटा नहीं समझा, किसी के दोषों पर कभी भी ऊँगली नहीं उठाई। वैसे ही कभी आपस में तुलना भी नहीं की। यह करो-वह करो ऐसा आग्रह कभी नहीं किया परंतु जो- कर रहे हो वह मन लगाकर करो ऐसा अवश्य कहती रहीं। ताई की हमारे दोस्तों के साथ भी शीघ्र मैत्री हो जाती थी।

हँसी विनोद का स्वागत

एक बार उनके पोते विजय ने उन्हें हँसी-हँसी में ''काय म्हातारे'' (क्यों बुढिया) कहकर पुकारा और ताईजी को भी वह नाम बडा पसंद आया। महाराष्ट्र में अभी भी कुछ वर्ग के लोगों में इसी प्रकार माँ को पुकारने की प्रथा है। नागपूर की ओर 'बूढी' कहने का रिवाज है। इस प्रसंग के बाद सभी पोते मंडली ने 'म्हातारी' कहना आरंभ कर दिया। ''काय म्हातारे, घर में है क्या?'' बचे कहते और ताईजी कहती- ''म्हातारी गई है भटकने'' (घूमने)। उन्होंने केवल सतत टी.व्ही. देखना उन्हें पसंद नहीं था। यह निष्क्रियता नई पीढ़ी को बिगाड़ रही है ऐसा उनका मत था।

उन्हें हताश अधीर, शोकमग्न या क्रोध से चिल्लाए हुए कभी नहीं देखा। निराशा की छाया भी चेहरे पर कभी नहीं आई। कभी कोई ठीक न लगा हो तो भी शांत रहती थीं। उनका चेहरा बडा भावदर्शी था, वह नाराज होती तो चेहरे से जान पडता परंतु वह भी निकट के लोगों को ही समझ आता। बाहर के लोगों को तो उनका क्रोध पता ही नहीं था।

संस्कारों का मूल स्रोत

ताईजी का दिन प्रात: मुँह अँधेरे ही आरंभ हो जाता। पोते पोतियों में से यह गुण सरोज ने उठाया था। वह कहती है- विवाह होने तक मेरा दिन ताईजी के साथ-साथ ही आरंभ होता रहा। जागने के बाद उसके पीछे-पीछे ही सुबह का सारा समय गुजरता था। आपटे कुटुंब बहुत बडा था। ताईजी की नातियाँ (बेटी की बेटियाँ) भी पढ़ने के लिये पुणे में ही थीं। बेटे की बेटियाँ, बेटी की बेटियाँ ऐसा भेदभाव ताई ने कभी नहीं किया। ताईजी सबसे कहा करतीं- ''लडो-झगडो पर दूसरे क्षण भूल जाओ। राई का पहाड कभी मत बनाना।'' शहर में कोई अच्छा भाषण हो तो उसे जाना आवश्यक होता था। पहले पहले यह आग्रह खलता था परंतु बाद में उसमें रस आने लगा। भाषण सुनकर आने के बाद घर में उसके विषय में चर्चा होती। उसमें ताईजी भी भाग लेतीं। चर्चा में पास-पडोस भी शामिल होता था। कोई भी घटना घटे तो सबको लगता था ''इस समय हमें ताईजी के घर में होना चाहिये था।''

घर के सभी कार्यों में, निर्णय की घडी में सभी ताईजी की उपस्थिति चाहते। सरोज के लिये बंगलोर का रिश्ता आया था। वहाँ सरोज के साथ ताईजी गईं और विवाह तय कर के लौटीं। उनके बहू-बेटे ने तो सगाई के दिन ही दामाद को पहली बार देखा।

निकटता की आश्वासक छाया

हममें से किसी को मुझे कुछ कष्ट है या कुछ चाहिये ऐसा कहने की आवश्यकता नहीं पडी। चेहरा देखकर ही ताई जान जातीं और वह वस्तु ला देती। यदि ताई को हम कहें- ''सर में दर्द था तो बताया क्यों नहीं? उन्हें यह पसंद नहीं था। वे कहतीं- ''बताना ही है तो पोते-पोती ही क्यों, पडोसवाले भी हैं। अपने निकटवर्ती व्यक्ति के कष्ट को हमें स्वयं ही जानना चाहिए। बताने का अवसर ही आने नहीं देना चाहिए।'' सबकी बीमारी, इत्यादि के समय सबको ताई पास हो ऐसी इच्छा होती थी और वे पास रहती भी थीं। सबकी इच्छा वह पूर्ण करती परंतु उसमें केवल लाड-प्यार नहीं होता था। उत्तर को प्रतिउत्तर देने से वाद-विवाद बढता है, कटुता बढती है यह हमने उनसे ही सीखा। उनकी इस विषय में एक उपमा यहाँ याद आती है- ''पेट में इतना भोजन समा सकता है तो ४ बोल क्यों नहीं समाएँगे?''

हर विषय में रसग्रहण की वृत्ति

रामायण पर ६-६ दिनों तक प्रवचन करने वाली ताईजी

हर अच्छी बात में रस लेती थीं। अच्छा चित्रपट या नाटक भी देखने के लिये साथ चलती, उस पर चर्चा करतीं। उमेश छोटा था तब उसे कहानी सुनाते समय- राम ने बाण मारा ठैं... !रावण धडाम से गिरा...! ऐसा साभिनय करती। पोते-पोतियों को हर अच्छे काम के लिये १ रु. इनाम देती थी। हम सब भी- ''म्हातारे! रूपया निकालो! आज मैंने अमुक किया है।'' कहकर रूपया वसूल करते। उस रूपये को पाने में अनोखा आनंद था। गर्मियों की छुट्टियों में ऐतिहासिक स्थल देखने जाने का वे आग्रह करती थीं। ''जाणता राजा'' नाटक तो ताईजी ने ३-४ बार देखा। मई महीने में छुट्टियों में हम सब पुणे में एकत्रित होते। घर भर जाता था। टी.व्ही. सिनेमा, नाटक जैसे मनोरंजन के साधन नहीं होते थे परंतु वे दिन बडे मजे के होते थे। कॅरम, ताश, शतरंज जैसे खेल होते थे और ताईजी स्वयं उत्साह से खेलती थी।

रसोई में भी कार्यकुशलता

इतने वर्षों में घर में कितने ही कार्यक्रम और जलसे हुए पर कभी कोई पक्वान बिगडा है या ढेर सारा भोजन बचा है, फेंका गया है ऐसा कभी नहीं हुआ, ना ही कभी कोई पदार्थ कम पडा। ताईजी का अनुमान कभी गलत नहीं होता था, स्वाद भी वही हुआ करता था। आजकल सब कहने लगे थे- ''ताई अब आप स्वयं इतनी मेहनत मत किया करो, और भी लोग हैं, उन पर सौंपा करो।'' परंतु ताईजी से रहा नहीं जाता। दूर से ही रसोईघर पर ध्यान अवश्य देती थीं। सब बच्चे मजाक में कहते भी थे- राष्ट्रपति के दस्तखत के बिना यह कैसे पास हो सकता है भला?'' परंतु वे अंत तक काम करती रहीं।

सबको इतनी अच्छी दादी नहीं मिलती, मिले भी तो इतने समय तक उसका सहवास नहीं मिलता। हम सब पोते-पोतियाँ भाग्यवान हैं। उसे अपने इस ''एकत्र परिवार'' का अभिमान था। मेरे पश्चात् भी यह ''एकत्र'' ही रहे ऐसी उनकी इच्छा थी। ''ताई'' शब्द के उच्चार के साथ की उसकी वह कृश परंतु उत्साही मूर्ति आँखों के सामने आती है। उसके हाथों का वह स्नेहल स्पर्श भी भुलाया नहीं जा सकता।

हे मनस्विन्! शुचि, सुशीला

हे मनस्विन्! शुचि, सुशीला, भरत - भू की चन्द्रिका।
कोटि - कोटिक भगिनियों में, दीप्त तव मन की प्रभा॥
मातृ - भू की साधिका प्रिय दृढव्रती आराधिका,
भक्ति - भावित भाविका चिन्तन - रता उद्भाविका
ध्येय - हित सर्वस् समर्पित स्वाभिमानिनि, शाम शुभा॥१॥
तुम विराजो स्वप्न बनकर हर हृदय की कामना
प्राण फूँके इस जगत् में, शुद्ध शाश्वत भावना
वन्दना, अभिनन्दना! शुभ चन्दना यशमय विभा॥२॥
हे तपस्विन्! तप - स्वरूपा स्वप्न हो साकार आगे
राष्ट्र चेतन की दिशा ले सुप्त जड़ता अन्ध भागे
यह प्रशस्ति पंथ अपना कर्मव्रत लेंगे निभा॥३॥
हो यशस्वी कर्म - पथ पर यह हमें आशीष वर दो,
तुच्छ माटी के खिलौने प्रेरणा शुभ हृदय भर दो,
ध्येय हित संकट सहेंगे धैर्य हम सबमें जगा॥४॥

शरद रेणु शर्मा

● ● ●

युवावस्था का रहस्य

वं. ताईजी भगवान दत्त ने २४ गुरू किये और किस किससे क्या शिक्षा ग्रहण की यह कथा अत्यंत रोचक ढंग से बताती। दत्त जैसे उनके भी अनेक गुरू थे। उनमें से एक थे वेदमूर्ति पंडित सातवळेकरजी। आप नित्य ही वं. ताईजी के यहाँ आते थे। उनकी आयु काफी थी (उनका देहांत १०१ आयु में हुआ) उनके वास्तव्य में पंडितजी की आयु ध्यान में रखते हुए ताईजी स्नान के लिये पानी ले जाकर स्नानगृह में रख रही थीं। उसी समय पंडितजी अचानक सामने आये। ताईजी को रोकते हुए बोले- ताई, मैं ले जाऊँगा पानी। (उस समय स्नानगृह में नल की पद्धति नहीं थी)
जी, परंतु-

परंतु क्या, मैं अभी बूढ़ा थोड़े ही हुआ हूँ- ताईजी आश्चर्यचकित मुद्रासे उनकी ओर ताकती रह गयी। आयु बढ़ती है शरीर की और बुढापे का संबंध रहता है मन से। अत: मन से युवा रहना और काम करना ऐसा मेरा जीवनसूत्र है।

यही ताईजी ने अपनाया था। Taiji eighty four years old- No no, eighty four years young. इस रक्षाबेन के अभिप्राय का रहस्य शायद इस प्रसंग में छिपा हुआ है।

अनुभव के बोल

(वं. ताईजी आपटे द्वारा वं. मौसीजी को श्रद्धांजलि)

वं. मौसीजी हम सबको छोडकर गईं। हमारा एक आधार चला गया। एकदम अनाथ हुए ऐसा लगा। कुछ समझ में नहीं आ रहा था। बेचैन मन भटक रहा था। .... किंतु यह कबतक चलेगा? भविष्य दीख रहा है। वं. मौसीजी को भी वह अच्छा नहीं लगेगा। उन्होंने सौंपी हुई जिम्मेवारी सम्हालना कठिन है। किंतु उनकी आज्ञा प्रमाण मानकर इस कार्य की धुरा स्वीकारने का साहस मैंने किया। उनका मार्गदर्शन, उनके आशीर्वाद, अन्य अधिकारियोंका सहयोग, सभी सेविका बहनों की कार्य करने की तत्परता इनके बल पर आगे मार्ग चलना है।

वं. मौसीजी स्वयं ही एक बडी आदर्श थीं। समय समयपर उन्होंने कठिन प्रसगों का जो सामना किया, कर्तृत्व, नेतृत्व दिखाया उसकी अब केवल यादें ही बाकी हैं।

यह समाज के लिए है।

हम सभी कार्य करते हैं। कभी कभी भले बुरे शब्द अकारण सुनना पडते हैं। दुःख होता है। ऐसे ही एक प्रसंग में लगा 'क्या करना है काम करके? समाज को हमारे कार्य की कहाँ आवश्यकता है? उसकी भलाई के लिए कुछ भी करो वह बुराई ही करनेवाला है।' तो सोचा वं. मौसीजी से बात की जाए। मैं गई और उनसे कहा ''मौसीजी हम काम करते हैं, कुछ लोगों को अच्छा लगता है। कोई गालियाँ देते हैं। इसमें सही क्या है?'' वे तुरंत बोली ''हमें देखना है कार्य की सफलता को वह यदि मिलनेवाली है तो निरपेक्षतासे सदसद्विवेकबुद्धि का स्मरण रखते हुए काम करो। चाहे कोई निंदा करे या वंदन करे।

उनके इन शब्दों को सिद्ध करनेवाली एक घटना घटी। कुलाबा जिले में प्रवास करते समय एक गाँव में एक विचित्र अनुभव आया। वहाँ रामायण का कार्यक्रम तय था रात ९।। बजे। वं. मौसीजी की पद्धति के अनुसार हम ठीक समयपर गणपति के मंदिर में गए। किंतु श्रोतागण केवल तीन। आधा घंटा रूके किंतु श्रोताओं की संख्या बढ़ी नहीं। अंतमें किसी ने कहा, ''मौसीजी, चलिये घर जाएँगे। आज प्रवचन नहीं करेंगे। वे बोलीं ''आप गलती कर रहे हैं। तय कार्यक्रम होना ही चाहिए। मंगलमूर्ति गणेशजी तो प्रवचन के लिए उपस्थित हैं ना।'' उस गाँव के लोगों पर उनको गुस्सा नहीं आया। अत्यंत शांति से उपस्थित श्रोताओं के समक्ष उन्होंने बिना आलस्य के प्रवचन किया। बिलकुल वैसाही जैसे हजारों लोगों के सामने करती थीं। संख्या कम है तो प्रवचन निबटाओ ऐसा कुछ नहीं।

उनके इस शांत स्वभाव का विशेषत: प्रवासमें सदैव अनुभव आता था। ऐसे ही एक बार हम रत्नागिरी गये थे। आरक्षण था परंतु भीड के कारण हमें एक दूसरे से अलग बैठना पडा और थोडी ही दूरी पर गाडी खराब हो गई। उस छोटेसे स्थानपर हमें घंटों बैठना पडा। किंतु मौसीजी बेचैन नहीं हुई। बडे आराम से वह मुझसे काम के बारे में बातें करती रहीं। किसी विषयमें निर्णय कैसे लेना यह समझा रही थीं। गाडी दुरूस्त होने के पश्चात् हम सायंकाल विलंब से पहुँचे किंतु वहाँ के सारे कार्यक्रम यथावत् हुए। प्रवास से थकान होने पर भी वे उत्साही थीं।

कोई भी काम करने का निश्चय होने पर, अनेक कठिनाइयाँ आने पर भी उसे पूरा करना यह वं. मौसीजी की और एक विशेषता थी। शारीरिक अडचन तो उन्होंने कभी मानी ही नहीं। हुबली में उनका प्रवचन था। नागपूर से महाराष्ट्र एक्स्प्रेस से वे निकलीं। गाडी पुणे के पास

आई। सब सामान इकट्ठा करने लगे। कैसे हुआ पता नहीं, किंतु दाँत रखी डिब्बी का पानी उन्होंने खिडकी से बाहर फेंका और उसमें रखे नीचे के नकली दाँत भी फेंके गये। तुरंत गलती ध्यान में आयी किंतु गाडी तेज दौड रही थी.... कोई इलाज नहीं था।

वे घर आयीं। पूजा आदि के पश्चात् दाँतोंका इतिहास सबको मालूम हुआ। बहुत प्रयास किया। किंतु १-२ दिन में दाँत नहीं बन सकते थे। ५-६ दिन तो चाहिये थे।

प्रवास करना तो आवश्यक ही था। कार्यक्रम तय था। फिर वैसे ही निकले। हुबली में रामायण प्रवचन सात दिन हुए। फिर भी दाँत नहीं बन सके। किंतु वं. मौसीजी ने नीचे के दाँत न होते हुए भी प्रवचन किये। शब्द रूके नहीं, उच्चार स्पष्ट थे। यहाँ भी उनका संयम देखा। रोज डॉक्टर के पास जाना पडता था। खाना ठीक नहीं हो रहा था। किंतु उनके चेहरेपर कोई शिकन नहीं और काम में त्रुटी नहीं।

स्वच्छता का वे बहुत ख्याल रखती थीं। अपनी साडी, बिछाना सब व्यवस्थित तथा साफ सुथरा होता था। कहीं भी जाना हो, समय से आधा घंटा वहाँ पहुँचती थीं। चाहे कार्यक्रम बडा हो या छोटा। खाने पीने में कोई शिकायत नहीं। उनको पूजा करना बहुत पसंद था। खाने के पूर्व पूजा करना उनका नियम था। पूजा साहित्य भी स्वच्छ रखती थीं किंतु पूजा का कोई आडंबर नहीं। दूसरों के घर पूजा का दिखावा नहीं करती थीं।

उनकी स्मरणशक्ति विलक्षण थी। पुरानी नयी सेविकाओं के नाम गाँव सहित पहचानती थी। जहाँ भी जाती, घर के छोटे बडे सबकी आत्मीयता से पूछताछ करती। कोई कठिनाई हो तो उसे दूर करने का प्रयास करती। क्या लिखूँ और कितना लिखूँ? उनके सहवास में बिताये चालीस वर्षों के अनेक प्रसंग याद आते हैं। उनकी स्मृतियाँ कह रही हैं आगे बढो। उनके दिखाए हुए मार्गपर चलना है, अपने ध्येय के मार्ग पर अनेक कठिनाइयों को झेलते हुए आगे बढना है। आज तक उनके साथ प्रवास किया, अब उनके बिना उनकी स्मृतियोंके साथ जाना है यही दुख है।

अंत में क्या कहूँ?
भरके सद्भावों से अंजलि
मैंने स्मृतिसुमन चुन लिये।
वे अर्पित हैं चरणद्वय में
वंदनीया पूजनीया मौसीजीको।।

●●●

संगठन चिरंजीव बने

यहाँ अपने प्रिय भारत के छोटे स्वरूप का दर्शन करके मेरा मन बहुत आनंदित हुआ है। मुझे लगता है कि जिस गंगोत्री से समिति कार्य की मन्दाकिनी प्रवाहित हुई वहाँ का प्रेरणा-जल हृदय रूपी कुंभ में भरने के लिए देश के कोने कोने से आप पधारी हैं। जो बहनें भाग नहीं ले सकीं उनके सहायता पुष्पों से अपना यह सम्मेलन यशस्वी हुआ। इसलिए आप सभी का अभिनन्दन है।

हमारा संगठन ५० वर्ष का हो गया। ५० वर्ष समाज जीवन के होते हैं संगठन के नहीं। संगठन और संस्था कायम चिरंजीव रहती हैं। समिति की हम सभी सेविकाएँ समर्पित भावना से यहाँ आयी हैं। और संगठन की सेविका बनी हैं। आप जानती हैं कि सेविका बनना सरल है परंतु सेविका का कर्तव्य निर्वाह करना बहुत कठिन है। मैं तो सर्वदा यही कहती हूँ कि समिति की सेविका प्रतिक्षण सेविका रहती है। उसके हृदय में ध्येय की ज्वाला जलती है तो मस्तक पर रहती है बर्फ की थैली। आपने देखा कि इंद्रदेव द्वारा उत्पन्न किए बर्तमान संकट को आप सभी ने एवं व्यवस्था करनेवाली सेविकाओं ने सहर्ष स्वीकार करके विजय प्राप्त की। ऐसी ही विजय-भावना हमारे मन में सर्वदा रहनी चाहिए।

आज ५० वर्ष के बाद, हम पीछे मुड़कर जब अपने कार्य का सिंहावलोकन करते हैं तो लगता है कि इतना कार्य हमने कैसे किया? वह ही हमें कार्य निष्ठ बनाने की क्षमता-प्रेरणा देता है। हम जिस समाज के बीच में कार्य करते हैं, वह भी नारायण का स्वरूप है। हमारी संस्कृति ने 'जनता' को 'जनार्दन' मान कर उसकी सेवा करने की कल्पना दी है। आज हमारे देश में भ्रष्टाचार चारित्रिक पतन, अलगाववाद, पाश्चात्यीकरण, धर्मान्तरण आदि अनेक समस्याएँ हैं। इन सबका हम कैसे समाधान कर सकती हैं। अपनी क्षमतानुसार यही विचार हमें करना है। सच तो यह है कि मनुष्य ही संकट पैदा करता

है और वह ही सुलझाता है। व्यक्ति की अपनी समस्त समस्याओं का समाधान उसके अन्तर्मन में ही छुपा होता है। हमें भी अपने अन्तर्मन में अपनी अस्मिता का स्मरण कर अपने देश की समस्याओं का समाधान ढूँढना है और शक्ति के अनुसार उसमें सहयोग भी करना है।

यहाँ अनेक पत्रकार मुझसे मिलने आये। उन्होंने महिला समस्याओं पर अनेक प्रश्न मुझसे पूछे। एक पत्रकार ने पूछा - ''सारा विश्व स्त्री-मुक्ति आन्दोलन में मुखर बना है। स्त्रियाँ सभी क्षेत्र में आगे बढ रही हैं। आप नारी-मुक्ति के सम्बन्ध में अपनी कार्यकर्ताओं को क्या मार्ग-दर्शन करती हैं? मैंने उन्हें उत्तर दिया - ''भारत की नारी तो सर्वदा से मुक्त है। उसे कभी कोई बन्धन नहीं रहे। वह वीर-धीर-ज्ञानी, स्वाभिमानी राष्ट्र का निर्माण करने वाली ब्रह्मवादिनी रही है। आज भी उसका वही रूप है। लेकिन यह 'मुक्तता' स्वैराचार की दृष्टि से यहाँ कभी मान्य नहीं रहीं जिस पर आज विश्व की महिलाएँ विचार करके स्वच्छन्द बनना चाहती हैं।'' आप सब भी इसका ध्यान अच्छी प्रकार से रखेंगी ऐसा मेरा विश्वास है।

मैं जानती हूँ कि महिलाओं पर उत्तरदायित्व होता है। उसे समाज में कार्य करने के लिए दुगुनी क्षमता चाहिए। फिर भी अपना जो काम है, जो दायित्व है, उसे पूर्ण समर्पण-भाव से पूरा करे। हम बहुत से कार्य तो परिवार में, पडौस में, समाजमें संस्कारों के माध्यम से कर सकती हैं। आप जानती हैं कि समिति का उद्घोष है — ''स्त्री राष्ट्र की आधार शक्ति है।'' आज आप के कार्यों के सम्बन्ध में मैं ही नहीं सारा समाज प्रशंसा करता है। आप भी अपने अपने क्षेत्र में समाज की आकांक्षा अवश्य पूरी करेंगी। साथ ही ध्यान रखेंगी कि देश का संकट रोकना हमारा ही कर्तव्य है।

हम सभी हिंदू हैं। हमारा हिंदू धर्म सभी धर्म-सम्प्रदायों का आदर कर के अपनी सहिष्णुता का परिचय देता रहा है। लेकिन हम देखते हैं कि धर्मान्तरण की आँधी तेजी के साथ हमारे समाज को निगलती जा रही है। धर्म का तात्पर्य केवल ईश्वर भजन करना, मंदिर जाना ही नहीं है प्रत्युत् कर्तव्य का निर्वाह करना है। जैसे माता के प्रति पुत्र का कर्तव्य 'धर्म' कहलाता है। प्रजा के प्रति राजा का कर्तव्य 'धर्म' है। उसी प्रकार हमारा समस्त जीवन एवं कर्तव्य धर्ममय होना चाहिए — ऐसा हमारी संस्कृति का आग्रह है। आपको स्मरण रहे कि इस समस्या के निराकरण के लिए हम हिंदु समाज में, अपने हिंदु धर्म एवं संस्कृति का स्वाभिमान जाग्रत करने का निरन्तर प्रयत्न करती रहें।

हमारा देश बहुत बडा है। उसकी समस्याएँ भी अनेक हैं। आपकी दृष्टि में पंजाब, असम, गोरखालैण्ड, तमिलनाडू, गोवा काश्मीर आदि समस्याएँ भी आई होंगी। उन पर हम अपने अपने स्थान पर रहते हुए विचार करें, तथा जिस माध्यम से सहाय्य हो सकता है वैसा प्रयत्न करें। वैसे इन सभी समस्याओं का सही संदर्भ लोगों तक पहुँचा कर उन्हें जागरूक करना, यह कार्य भी कम सरल नहीं है। मुझे, पंजाब के तीन वर्ष पूर्व संपन्न लुधियाना वर्ग की याद आ रही है। एक दिन विद्युत् चली गई। अब कैसे करें यह प्रश्न था ? परंतु उस अंधेरे में मोमबत्ती जलाकर सभी कार्य किये गये। हमारा कार्य भी ऐसा ही दीपस्तंभ है। हमारी सेविका संकट का सामना करेगी उसमें हिम्मत है, देशप्रेम है।

मेरी आँखों के सामने तीन पीढियाँ खडी हैं। इनके सतत् प्रयत्नों से संगठन ५० वर्ष पूर्ण कर चुका है। अपना यह संगठन चिरंजीव बने यही माँ अष्टभुजा से प्रार्थना करती हूँ। जब तक चंद्र सूर्य हैं तब तक अपना कार्य चलेगा। किसी के मार्ग में अवरुद्ध होने पर दूसरी सेविका उत्साह के साथ उस कर्तव्य-निर्वाह के लिए आगे आएगी। हम सभी राष्ट्रसेवा के लिए बनी हैं और अपने जैसी अनेक सेविकाएँ श्रम-पूर्वक खडी करेंगी कार्य प्रवाह की निरन्तरता के लिए। नारी शक्ति का जागरण एवं उसका कार्य समाज में प्रभावकारी बनना ही चाहिए।

आप अपने अखण्ड भारत के मानचित्र को देखिये और बर्तमान भारत के मानचित्र को देखिए। हमारी सीमाएँ कितनी सिकुड़ गयी हैं? हमारा सिंध प्रान्त गान्धार प्रदेश, ब्रह्मदेश, सिंहल द्वीप, आधा बंग प्रान्त, आधा पंचनद प्रदेश--- आधा कश्मीर यह सब कहाँ दीखते हैं? हमारे देश की सीमाओं में बंधे हुए? मन में बहुत पीड़ा होती है.... लेकिन इस पीड़ा से उन क्षेत्रों का स्मरण और स्मरण से प्रेरणा मिलती है। इस भरत भूमि की शान बढ़ाने के लिए हम एवं आप सभी संकल्प सिद्ध हुई हैं। यह हमारी पूर्वजों की भूमि है। यहाँ का धर्म, यहाँ की संस्कृति ही विश्व में शान्ति स्थापित करके उसको कल्याणकारी मार्ग-प्रदर्शित कर सकती है। इसलिए अपने इस राष्ट्र के लिए हम तन-मन-धन सर्वस्व अर्पण करके सेवा रत रहेंगी।

●●●

अलख जगायेंगे

वं.ताईजी (जुनागढ़ बैठक में मार्गदर्शन)

प्रथम वं. मौसीजी का स्मरण कर के मेरे विचार मैं आपके सामने रखती हूँ। पचास वर्ष पूर्व जब नारी घर से बाहर नहीं निकल सकती थी, उस समय नारी को सजग करने और संगठन का काम करवाने का धैर्य जिनमें था उन वं. मौसीजी को मेरा प्रणाम!

अभी यह काम दिन ब दिन बढता जा रहा है। अपने मन को ऐसा लगता है कि हम लोग बहुत ही काम करते हैं। लेकिन आत्मपरीक्षण करने से पता चलेगा कि कितना काम करते हैं हम! २४ घंटों का दिन होता है, उसमें से एक घंटा तो आप दे सकती हैं। इसके साथ हम जहाँ जाएँगे जो बोलेंगे और जो भी काम हम करेंगे उसका परिणाम सभी पर होता है। हमारे मन में हमारा राष्ट्र, हमारी संस्कृति, हमारा धर्म और स्त्री की स्वाभाविक वत्सलता इन गुणों का ध्यान सदा ही रहना चाहिए। अगर माता इन बातों को भूल गयी तो अगली पीढी उसी प्रकार की होगी। उनके मन में किसी के लिये प्रेम नहीं, बेटा बाप को पूछता नहीं, घरमें बुजुर्गों की मर्यादा नहीं सँभाली जाती , इस तरह बचे मनमानी करते हैं। मैं समझती हूँ इसका कारण परिस्थिति बदल गयी है, समाज की धारणाएँ बदल गयी हैं, आचार और विचार दोनों में फरक आया है। हम सब लोग डेढ़ सौ साल पहले अँग्रेजों के गुलाम थे। उनके चले जाने के बाद भी उनकी संस्कृति का प्रभाव कम नहीं हुआ। वह हटाने के लिये हम माताएँ ही असफल रहीं। बच्चा जब सुबह सुबह उठता है तब हम ही कहते हैं Good Morning -सुप्रभातम्- क्यों नहीं कहते? माँ, अम्मा, बाबूजी ये अपने शब्द छोडकर डॅडी, मम्मी आ गये हैं। और यह गर्व की बात बन गयी है।

हम स्वयं जब राष्ट्रभाषा, राष्ट्रप्रेम और अपने धर्म के प्रति श्रद्धा जगायेंगे तभी अगली पीढी हमारा अनुकरण करेगी। इसलिये यह सब मैंने आपको बताया है।

अडतालीस साल हो गये माता अपना मातृत्व भूल गयी, उसको मातृत्व का बोझ लगता है। मातृत्व का अर्थ जिसे मैंने जन्म दिया यही नहीं तो आसपास में, अडोस-पडोस में रहनेवाले भी मेरे बच्चे हैं, इस प्रकार से देखेंगे तो विशाल मातृत्व का अर्थ हमारे ध्यान में आयेगा।

"चिडियाँ चुग गयी खेत"

यह कबीर के दोहे के कुछ शब्द हैं। उसका अर्थ है बाद में पछताने से बात नहीं बनती। शुरू से ही धीरज से यदि हम काम करेंगे तो बात बनती है। हमारे सामने जो बच्चे हैं उनपर हम किस प्रकार का संस्कार करते हैं उसपर यह निर्भर है। कभी कभी हमारी बहुएँ डाँटती हैं, फिर भी वे हमारे पोते हैं, उन्हें प्यार देने के साथ साथ संस्कार देना हमारा कर्तव्य है।

हम ने टी.व्ही. वालों को सजग करने के लिये अनेक पत्र लिखे। परंतु यदि टी.व्ही पर आनेवाले दृश्य और संगीत का असर हमारे बच्चों पर अच्छा नहीं होता है तो हम माताओं ने उठकर टी.व्ही. बंद करना चाहिये। जब कोई अच्छी बातें दिखायी जाती हैं तब हम ही ने सभी को आवाज देकर एकत्रित बैठकर देखनी चाहिये। हमें ही देखना चाहिये क्या ठीक है और क्या नहीं? इसके लिये स्वयं अपने ऊपर संयम रखना होगा। अपने पास बिठाकर कहानी बताना और इस बहाने उसका ध्यान दूसरी तरफ ले जाना यह हमारा काम है।

आज हमारे सामने अनेक संकट खड़े हैं। ऐसी परिस्थिति में काम करने वालों में तरूण वर्ग कितना है यह बडा प्रश्न हैं। हम बडे-बुजुर्ग और कितने दिन काम करेंगे? पहले अपनी शृंखला की कडी ऐसी थी- वह लोहे की थी- उसपर जंग नहीं चढे इसलिये हम सतर्क रहते थे। अभी यह सब नहीं होता। किसी को संदेशा भेजना होगा तो उसे हम भूल जाते हैं और हमारी सेविकाएँ भी ऐसी हो गयी हैं कि मकरसंक्राति के उत्सव पर आती नहीं, क्यों नहीं आयी पूछनेपर कहती हैं- हमें मालूम नहीं था। इसलिये मैं कहती हूँ कि आप आत्मनिरीक्षण कीजिये। हमारी भूल कहाँ है यह देखिये। जो कुछ सुना उसका मनन करना, उसका चिंतन करना और बाद में उसको व्यवहार में लाना होता है।

मैंने यह सुना है कि सब लोग चोपडी में लिखते हैं, और बॅग में रख देते हैं। ऐसा नहीं होना चाहिये। देरी हुई है बहुत देरी हुई है लेकिन हम अभी भी प्रयास करेंगे तो हमारा राष्ट्र, हमारा समाज सुधर जाएगा।

मैं एक बात बताती हूँ आपको। तीन-चार साल पहले मैं असम में गयी थी। जिनके घर में हमारी व्यवस्था

हुई थी उनका नाम था 'इला'। उनके छोटे छोटे बच्चे थे। उनमें से एक छोटा पाँच साल का बच्चा मेरे पास आया और बोला ''दादी माँ तुम गावसकर को जानती हो?' वह तो अच्छी तरह से क्रिकेट खेलता है। मुझे बहुत भाता है। मैं आपको एक चिट्ठी लिख कर देता हूँ। आप पुणे में रहती हैं ना वह चिट्ठी उसे पहुँचा देना।' मैंने कहा 'ठीक है। तो बोला 'उसका जवाब आना चाहिये'। मैं बोली 'चिट्ठीपर आपका पता लिख दीजिये। गावसकर ने चिट्ठी लिखी तो आपको जवाब मिल जाएगा। इस तरह बच्चों का समाधान होना चाहिये।

ऐसी बातें अपने घर में भी घटती हैं। इसीलिये मेरा कहना है सेविकाएँ चतुर होनी चाहिए। बच्चों को अच्छी कहानियाँ और गीत सिखाने चाहिये। टी.व्ही. पर दिखाते हैं- 'तेरा मेरा प्यार हुआ' ऐसे नहीं, तो 'हम करें राष्ट्र आराधन' ऐसे गीत सिखाने चाहिये। नई पीढी कहती हैं कि बच्चे पढते हैं, सीखते हैं, उन्हें वैसा करने दीजिये। उनकी आँखों पर पट्टी मत लगाइए। परंतु समय वैसा नहीं है। परिस्थिति वैसी नहीं है। सब तरह से सजग रहना चाहिए। और यह सब करते हुए अपना देश, अपना धर्म और अपने से बडे-बुजुर्गों का सम्मान रखना- ये बातें भी भूलनी नहीं चाहिए। यह सब करते समय अंधश्रद्धा भी नहीं होनी चाहिए। और भी अन्य बातोंपर अंतर्मुख होना चाहिए। जैसे कि हम दैनंदिनी लिखते हैं। उसमें हम क्या लिखते हैं? दिनभर काम करते समय मैंने अडोस-पडोस का या समाज का कुछ विचार किया या नहीं इसका विवरण आवश्यक है।

पहले जमाने में एक ही भवन में रहने वाले दो-चार परिवारों में संबंध दृढ होते थे। आज की फ्लॅट सिस्टिम में हर एक का दरवाजा बंद रहने से एक-दूसरों को हम जानते तक नहीं। ऐसी स्थिति में हमें ही पडोस वालों की पूछताछ करनी चाहिये। स्नेह बढाना चाहिये। ऐसे ही हमारा काम बढ़ेगा। हमारी कोई सहेली या रिश्तेदार दूर रहते होंगे तो उनसे फोन करके या पत्रद्वारा संपर्क करना हमारा काम है। बैठक में कोई आई नहीं होगी तो वह क्यों नहीं आई इसकी पूछताछ करना समिति की सेविका के नाते हमारा काम है। कोई भी हो उसके साथ बडी आत्मीयता से व्यवहार होना चाहिये। हर बार यही बोलना चाहिये कि हम एक परिवार के ही हैं।

परिवार में रहनेवाले हम सब एक स्नेहबंधन से बंधे हुए हैं। हमारा घर बहुत बडा है, वह है भारत! हम घर में अधिकारी वगैरह नहीं हैं। समिति का कार्य अनुशासन से चले इसीलिये अधिकारी बनाए जाते हैं। हम अधिकारी हैं तो शाखा स्थान पर, बाकी समय या काम करते समय हम सब एक हैं यह ध्यान में रखें। इसी तरह यदि हम छोटे और बुजुर्ग दोनों के साथ मिल-जुलकर काम करेंगे तो हमारा काम बढ़ेगा।

समिति के काम के साथ साथ हमारे बच्चे कौनसा साहित्य पढते हैं उसकी ओर हमारा ध्यान होना चाहिये। वो जो कविताएँ याद करते हैं उनके देशभक्ति के गीत हो इसपर हमने ध्यान देना चाहिये। फिर शाम को वे खुली हवामें भरपूर खेल खेलें और बाद में भगवान के सामने बैठकर प्रार्थना करें- यह सब करवाने का काम हम माताओं का है। जिजाबाई शिवबा के मित्रों के साथ माता जैसे ही बर्ताव करती थी। उन्हें भी रामायण, महाभारत की कहानियाँ सुनाती थीं। हम भी बहुत कुछ पढते हैं लेकिन उसका उपयोग नहीं करते। उदाहरण के लिये इसापनीति, पंचतंत्र में से कई कहानियों से हमें बच्चों के मन में देश के प्रति प्रेम निर्माण करना होगा। 'मैं समाज के लिये हूँ। मेरा समाज- मेरा राष्ट्र मेरा आराध्य है यह भाव जागृत होना चाहिये। भारतवर्ष ऋषिमुनि संतों की पुण्यभूमि है। लेकिन यह अतीत का गौरव हम कितने दिन दोहराऐंगे? एक गागर है और उसमें जमा किया हुआ पानी है। लेकिन वह कितने दिन काम आएगा? हमें वह गीत मालूम है- 'बिंदु बिंदु मिलकर सिंधु बनता है'। इसीलिये संगठित हो कर यह कहना चाहिये- 'मैं भारत की हूँ, भारत मेरा है, उसकी उन्नति मुझे ही करनी चाहिये।'

अभी तक हमने जो कुछ काम किया है और जो आगे करने वाली हैं उसे कोई रोकने वाला नहीं है। जब तक चंद्र सूर्य हैं तब तक हमारा काम चलता रहेगा। डरने की कोई बात नहीं है, हम धीरज बाँधकर हमारा कार्य करते रहेंगे। यदि प्रकृति ने साथ न दिया तो भी हम काम करेंगे। उसपर भी हम मात करेंगे।

मानो कि वातावरण बदल गया है लेकिन अंत:करण तो नहीं बदला। हम कहते हैं- 'हमारे घर में आओगी, कब आओगी?' ऐसा क्यों नहीं पूछते- 'अपने घर कब आओगी? 'अपना घर' यह शब्द सुनकर कितना असर पडता है। इस प्रकार का संस्कार आज हमारे ऊपर होना आवश्यक है।

हमारी सुशीलाताई है, वह कहती है- क्या ताई आप

सबको खिलाती ही हैं। जहाँ जाते हैं सुनते हैं हमने ताईजी के हाथ से भोजन किया है। मैंने उत्तर दिया- मेरे हाथ से जिन्होंने खाया है उन्हीं से राष्ट्र का काम खडा हुआ है। मेरी स्तुति मैं नहीं करती। उत्तर किस प्रकार देना चाहिये वह मैं बताती हूँ। मेरे पीछे बहुत ही पुण्याई थी, नहीं तो मैं इतना बडा काम नहीं कर सकती थी। और एक बात बताती हूँ। बडे बडे लोग हमारे यहाँ आते थे और प्रेम से व्यवहार करते थे। एक बार दीनदयाल उपाध्याय, जो प्रवास में थे, अपने घर आये थे। तो उनके कपडे धोने थे। उन्होंने मुझे पूछा, 'भाभीजी आप के घर में नौकरानी है?' मैंने झटसे कहा- 'हाँ है'। तो बोले 'मेरे ये कपडे धोने थे। रात को मुझे जाना है। यदि लाँड्री में डालेंगे तो इतनी जल्दी नहीं मिलेंगे।' इस पर मैंने कहा 'भाईजी, आप चिंता मत कीजिये। जाने से पहले कपडे आप को मिल जाएँगे।' मुझे झूठ ही बोलना पडा- तब मेरे घर में नौकरानी नहीं थी। लेकिन मैंने मेरा छोटा भाई समझ कर उनके कपडे धो दिये।

इतने प्यार से, ममत्व से हम व्यवहार करेंगे तो यह देश, हमारे अडोसी-पडोसी सब हमारे होंगे। और एक दिन ऐसा आएगा जब लोग कहेंगे कि राष्ट्र सेविका समिति ने राष्ट्रकार्य में पूरा हाथ बँटाया इसलिए भारत आगे आया।

●●●

संक्रमण संदेश

सेविका बहनों,

आनेवाला वर्ष नित्यनूतन आव्हान लेकर आता है। उसको सम्मुख होना अपना कर्तव्य है। अभी की परिस्थिति ऐसी ही है।

अयोध्या का श्रीराममंदिर अपनी राष्ट्रीय अस्मिता का प्रश्न है। इसी दृष्टि से हम शांततापूर्ण संघर्ष कर रहे हैं। समस्या सुलझाने के बजाय वह अधिक जटिल बनाने की वृत्ति से यह समस्या उलझती गयी। सभीने अपना विरोध प्रकट किया है। इसको राजनीतिक दृष्टि से भुनाने के कारण परिस्थिति बिगडती ही गयी।

सर्वदूर कराए जाने वाले दंगे, भडकीले वक्तव्यों के कारण आग में घी डालने जैसे उग्र बने। अत्यंत अन्यायपूर्ण घटना याने राष्ट्रवादी संगठनों पर लगाया गया प्रतिबंध। मतों की राजनीति करते हुए देश के दीवानों पर देशद्रोह का आरोप लगाना यह अतीव शर्मनाक है। 'वंदे मारतम्' को नकारने वालों ने उनपर देशद्रोह का आरोप लगाना और सालों तक निर्णय लटकाते रखने वालों ने इसके बारे में मात्र तत्परता दिखाना- कितनी दुखद कृति।

संकटकाल में ही परीक्षा होती है। आज तक हम ऐसे अटूट संकटों से सम्मानपूर्वक बाहर आये हैं। आज की परीक्षा की घडी कठिन है परंतु इससे भी हम सफलतापूर्वक निकलेंगे ऐसा मुझे विश्वास है। ईश्वरी शक्ति पर श्रद्धा रखते हुए हम सर्वार्थ से सिद्ध होंगे।

भवदीया,

ताई (राष्ट्रसेविका १९९३)

●●●

वैभवशाली परंपराओं का अनुशीलन करें

बालक और बालिका के बीच का भेद सबसे पहले हमें अपने घर से ही मिटाना होगा। प्रारंभ से ही स्वावलम्बन का पाठ भी हमें ही पढ़ाना होगा। साथ ही परोपकारी वृत्ति तथा प्रबल आत्मविश्वास इन सबसे समाज के प्रत्येक स्तर तक पहुँचने की बराबरी के नाते काम करने की प्रवृत्ति का निर्माण करना होगा। घर में आनेवाले भंगी से लेकर पोस्टमन तक सभी से स्नेहसंबंध जिन घरों में रखा जाता है वहाँ दहेज के लिये बहू को कष्ट देना अथवा सौदेबाजी करना ये घटनाएँ नहीं होती। 'स्त्री ही स्त्री के दुःख दर्द को जान सकती है उसके सुखदुःख को बाँट सकती है, यह जब प्रत्येक स्त्री समझने लगेगी तब अनेक अनुत्तरित प्रश्न हल होने लगेंगे। समाज के प्रत्येक स्तर झोपडी से लेकर राजमहल तक अशिक्षित से लेकर उच्च शिक्षाविद् तक जब यह सोचने अथवा मानने लगेगा कि 'यह देश हमारा है यह हिंदु राष्ट्र, संस्कृति हमारी है। इसकी गलत रूढियाँ परंपराओं को मोडकर वैभवशाली परंपराओं का अनुशीलन हमें ही करना है'' वह दिन, वह युग हमारे लिये स्वर्णिम दिन स्वर्णिम युग होगा। राष्ट्रसेविका समिति अपनी शक्ति के अनुसार उस दिशा में सतत प्रयत्नशील है।

*प्रत्येक सेविका संगठन शृंखला की कडी है। *अनुशासन संगठन की आत्मा है *यह कार्य मेरा ही है ऐसा विचार करना ही समर्पण है।

वृत्तपत्रों से

देशके विभिन्न प्रदेशसे प्रकाशित होनेवाले
वृत्तपत्रोंने वं. ताईजी को श्रद्धांजली अर्पित की।
उनमे से चुने हुअे कोई अंश।

माँ का साया उठ गया....

राष्ट्रसेविका समिति की प्रमुख संचालिका वंदनीया ताईजी के आकस्मिक निधन का समाचार दि. ९ मार्च को जिनको प्राप्त हुआ उन लाखों संघ बंधुओं को लगा हम पर से माँ का साया उठ गया। कैसी थी यह वात्सल्यमयी माँ। कै. जगन्नाथरावजी जोशी की एक स्मृति बताती है। यह प्रसंग ४० - ४५ वर्ष पूर्व का होगा। कै. जगन्नाथरावजी जिस समय संघ में आए उस जमाने की कुछ स्मृतियाँ वे बता रहे थे। बातें चल रही थीं। उन्होंने मुझे बताया कि फरशीवाले बाळासाहेब साठेजी मुझे संघ में लाये। मा. विनायकरावजी आपटे (वं. ताईजी के पति) ने मुझे बनाया और स्वयंसेवक के संस्कार दिये और वं. ताईजी के हाथ से भोजन खाकर यह शरीर मोटा ताजा हुआ है। विनोदी लहजे में कही हुई बात की गंभीरता तब समझ में नहीं आयी। पर जैसे जैसे वं. ताईजी का अधिक निकटता से परिचय हुआ उनके मातृहृदय की अनुभूति होती गयी और उनके निधन का समाचार सुनकर 'माँ का साया उठ गया' ऐसा ही लगा।

मातृत्व दर्शन

मातृत्व, नेतृत्व और कर्तृत्व इन गुणों की कसौटी पर खरे उतरनेवाले दो व्यक्तित्व वं. मौसीजी और वं. ताईजी समिति को प्राप्त हुए। इसी कारण गिरनेवाले को सम्हालनेवाले, भूखे को खिलानेवाले और दु:खी को सहलाने वाले कर्मयोग से भी श्रेष्ठ ऐसा सेवा का सहज योग समिति साध्य कर सकी। अति सामान्य लोगों के साथ मिलकर, सामान्य के समान आचरण यह था इस नेतृत्व का वैशिष्ट्य। मानवता नष्ट हो रही है ऐसे युग में अति आत्मकेन्द्रित हो रहे व्यक्ति और समाज को माँ की ममता इस नेतृत्व ने दी है। वं. मौसीजी भी ऐसी ही थीं और ताईजी भी। स्त्री मुक्ति की हवा दुनिया में चारों ओर चल रही है तब वं. ताईजी प्रतिपादित करती है कि स्त्री और पुरूष का परस्पर पूरकत्व। शिव शक्ति के मिलाप की वार्ता। स्त्री, पुरुष की विवेक शक्ति बने इसकी। पुरुष की कठोरता को अपनी कोमलता की किनारी लगाने की और उसकी उछृंखलता को प्रेम की बागडोर लगाने की। स्त्री में अन्तर्निहित श्रीशक्ति का विचार देनेवाली वं. ताईजी आज अचानक अपने बीच से चली गयी हैं। उनको तरुण भारत और भारतीय विचार दर्शन की नम्र आदरांजलि।

त. भा. मुंबई

●●●

भोजन-एक कला

एक बार तरह तरह की बर्फियाँ बनाने की स्पर्धा थी। परीक्षक थीं ताईजी। उन्होंने प्रथम तीन क्रमांक को पुरस्कार दिये। अन्योंको प्रोत्साहन दिया। अपने भाषण में उन्होंने एक नया दृष्टिकोण रखा। आपका यह उपक्रम स्तुत्य है परंतु मिष्टान्न तैयार करते समय व्यय कितना हो है? समय कितना लगता है? उससे शरीर को क्या प्राप्त होता है? पौष्टिकता का भी विचार करना चाहिए। अधिकतम बच्चों को ताजा और हजम होने के लिये हलका भोजन देते जाइये। प्रतिदिन के भोजन में रोटी, सब्जी भले ही हो परंतु वह दिल लगाकर कीजिये। आपके मन के सभी सद्भावों के कारण बनायी हुई रसोई और पक्वानों को अमृत से भी बढ़कर मधुर स्वाद प्राप्त होगा। नथुनें फुलाकर, नाक भौं सिकुडकर रसोई कभी नहीं बनाइये। आखिर भोजन बनाना यह एक कला है जीवन बनानेवाली, और हम कलाकार!

'स्व' की जागृति

सतत परिश्रम यह वं. ताईजी का स्वभाव था। ८० वर्ष की आयु हो जाने पर भी पूरे देश में उनका प्रवास चल रहा था। पिछले साल उन्होंने पंजाब, कश्मीर, दिल्ली राज्यों में प्रवास किया। अपने बौद्धिक में वे बताती थीं कि समिति ने संस्कार का कार्य करना ही चाहिए। उसके साथ स्त्री में यह भाव जागृत करना चाहिए कि वह राष्ट्र की जिम्मेदार जागृत नागरिक है, और उसने अपना कार्य, अपना दायित्व, सुयोग्य रीति से निभाना चाहिये। इसी कारण, विषय स्वदेशी का हो या, डंकेल प्रस्ताव का हो या वन्देमातरम् अभियान का, वंदनीय ताईजी का सक्रिय सहभाग रहेगाही। स्वत्व, स्वधर्म, स्वराष्ट्र स्वाभिमान और स्वकीय, इन पाँच स्व के संरक्षण और संवर्धन का दायित्व स्त्री का है। इन पांच 'स्व' के संरक्षण हेतु ही स्त्री को स्वसंरक्षणक्षम बनना चाहिये ऐसा उनका आग्रह रहता था। ऐसी एक कुशल और कर्तृत्ववान संगठक का निधन सब के लिये दारुण आघात है। समिति कार्य का आधारवृक्ष गिर गया है, परंतु वं. ताईजी के शब्दों में कहना है तो ''दु:ख पर विवेक से काबू पाना चाहिये'' ऐसा कहना पडेगा। उनके जीवन का आदर्श अपनी आँखों के सामने रखकर उनका अधूरा कार्य आगे बढ़ाना और अधिक शक्ति लगाकर काम करना यही उनको सच्ची श्रद्धांजलि होगी। देवगिरी तरुण भारत की ओर से वं. ताईजी की स्मृति को भावपूर्ण श्रद्धांजलि!

तरुण भारत, देवगिरी

●●●

संगठनकुशल श्रेष्ठ राष्ट्रसेविका

राष्ट्रसेविका समिति, एक अखिल भारतीय महिला संगठन की प्रमुख संचालिका श्रीमती सरस्वती आपटे का निधन दि. ९-३-९४ को हुआ, इसके साथ ही गत ६० वर्षों से महिला जगत में सक्रिय रूप से सेवारत रहनेवाला व्यक्तित्व हमसे बिछुड गया। राष्ट्र सेविका समिति यह राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के परिवार की एक प्रमुख महिला संस्था है यह पारिवारिक संबंध वैचारिक एकरूपता तक ही मर्यादित है। संगठनात्मक दृष्टि से राष्ट्रसेविका समिति एक स्वतंत्र संगठन ही माना जाता है। राष्ट्रसेविका समिति की कार्यपद्धति संघ के समानान्तर है। विशेषत: दैनंदिन शाखा, व्यायाम, संचलन आदि कार्यक्रम समिति में भी होते हैं। परंतु यह संघ की पूरी-पूरी नकल है ऐसा कार्य का स्वरूप न रहे इसलिये वं. ताईजी और उनके सहकारियों ने इस महिला संगठन के संबंध में स्वतंत्र चिंतन किया और समय के अनुसार बदलनेवाले स्त्री जीवन को दृष्टि में रखते हुए उसे सही दिशा देने का प्रयत्न किया। इसके अन्तर्गत श्रमिक महिलाओं के लिए वसतिगृह, गरीब और जरूरतमंद महिलाओं के लिये उद्योग मंदिर, महिलाओं को योगासन सिखाने और स्वास्थ्य की सलाह देनेवाले केंद्रों की स्थापना आदि विविध कार्यक्रम समिति कार्य के साथ जोडने में वं. ताईजी का मार्गदर्शन महत्त्वपूर्ण है। आयु के ८० वर्ष बीत जाने पर भी उनका प्रवास जम्मू से त्रिवेंद्रम तक होता रहा। इस संगठन को उन्होंने पीडित और संकटग्रस्त स्त्री को सहारा दे सके ऐसे सैंकडों केंद्र और कार्यकर्ता खडे किये। परिवार संस्था समाज की आधार शिला है, सुसंस्कृत परिवार समाजकी आवश्यकता है। कुटुंब संस्था और संस्कारों का संरक्षण करना यह स्त्री का ही दायित्व है यह विचार जिन्हें पर्याप्त आधुनिक नहीं लगता, और जो हमेशा संघर्ष की बात ही करती है ऐसी बहनों से विधायक सेवा कार्य करवानेवाली वं. ताईजी पर्याप्त आधुनिक नहीं लगेगी। परंतु उनका कर्तृत्व देखकर ऐसी बहनें भी आदरसे उनके आगे नतमस्तक होंगी। हमारे मन में भी वही आदरभाव है इसलिए उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं।

नया काळ – मुंबई

●●●

स्थितप्रज्ञता

म.गांधीजी की हत्या का दिन। हमारे शारीरिक शिक्षा वर्ग का समापन पद्मावती में था। हम सब कार्यक्रम खुशी से कर रहे थे। वं. ताईजी का बौद्धिक सुनने को हम सभी उत्सुक थीं। तभी किसी ने आकर वं.ताईजी से कुछ कहा। वं. ताईजी का व्यवहार सामान्य ही था। उन्होंने हम सभी को अपना सामान समेट कर तैयार रहने के लिये कहा। किसीसे बातचीत न करते हुए सामान सहित, हम सब स्वारगेट पर जमा हुए। हम सब को व्यवस्थित घर पहुँचाने की व्यवस्था करने के पश्चात् वं. ताईजी घर लौटीं। बाद में हमें पता चला कि महात्मा गांधीजी की हत्या हो जाने के कारण शहर का वातावरण तनावपूर्ण हो गया था। इस घटना के सिलसिले में वं. ताईजी के पति श्री. विनायकरावजी को कारागृह में बन्द किया गया। अनेक विपत्तियाँ उनपर आयीं परन्तु स्थितप्रज्ञ वृत्ती से उन्होंने सभी विपत्तियों पर विजय पायी।

श्रीमती कमलाबाई आपटे, पुणे

ऐसा था उनका आग्रह

वं. ताईजी कुछ दिन पूर्व ही सोलापुर में 'वन्दे मातरम' चित्र प्रदर्शनी के उद्घाटन हेतू पधारी थीं। चित्र प्रदर्शनी देखते समय उन्होंने दी हुई सूचनाएँ उनकी प्रतिभा प्रदर्शित करती थीं। उनका यह स्वरूप हमारे मन में बस गया। ८४ साल की आयु में भी ८ वर्ष की बालिका और १८ वर्ष की तरुणी के साथ सहज संवाद हो सकता है यह हमने उनमें देखा। अनेक वर्ष सामाजिक कार्य करनेवाले लोगों में एक भावना आती है, वह यह कि हम तो उपदेश देनेवले हैं - वं. ताईजी के बारे में ऐसा नहीं हुआ।

गृहिणी अपने परिवार को सुसंस्कारित करती है यह सामान्य कार्य नहीं है, राष्ट्र निर्माण का ही कार्य है। बच्चों का लालन पालन करना इतना ही उसका कार्य नहीं है। गृहिणी सावधान राष्ट्राभिमानी, कार्य तत्पर और चरित्र की पवित्रता को समझनेवाली होगी तो राष्ट्र निर्माण उत्कृष्ट होगा। जिजामाता के कारण ही शिवाजी निर्माण हुए और राष्ट्र भी। इस बात को ध्यान में रखकर समिति कार्य में संस्कार, साहस और सौष्ठव का समावेश किया गया। रामायण, महाभारत, वेद, उपनिषदों का अध्ययन करनेवाली और आधुनिक विज्ञान से परिचित ऐसी परिपूर्ण स्त्री निर्माण करने का ध्येय वं. ताईजी ने अपने सामने रखा था। ''यह भारत की नारी है, अबला नहीं चिनगारी है'' यह मंत्र उन्होंने सेविकाओं के सामने रखा। महिलाओंने तरुणियों ने अपने संरक्षण के लिये किसी पर अवलंबित नहीं रहना चाहिए, ऐसा उनका आग्रह रहता था। इसीलिए तरुणियों नियुद्ध की शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए ऐसा वे कहती थीं।

तरुण भारत - सोलापुर

●●●

नारी किसी के हाथ का खिलौना नहीं

ताई सरस्वतीबाई आपटे नहीं रहीं यह समाचार ताईजी को न जाननेवालों के लिए एक सामान्य सा समाचार है, बल्कि यों कहा जाए कि महत्वहीन खबर है, लेकिन देश की लाखों महिलाओं - युवतियों के लिए यह खबर न केवल अति पीडादायक है, वरन् उनके लिए एकबारगी अभिभावक की मौतवाली स्थिति बन गई है। नारी मुक्ति का परचम थामनेवाली तथा पश्चिमी सभ्यता का खुलकर अनुकरण करनेवाली महिलाओं के लिए ताईजी का जीवन एक उदाहरण है, क्योंकि इन्होंने कभी भी नारी मुक्ति का आव्हान नहीं किया, लेकिन उनके मार्ग का अनुकरण करनेवाली महिलाएँ - युवतियाँ स्वयं ही नारी - मुक्ति के भूल - भुलैय्या को समझ अपने गुरूतर दायित्व को निभाने के लिए आगे प्रस्तुत होती रहीं। लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक की पोती ताई आपटे ने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के आद्य सरसंघचालक डॉ. केशव बलिराम हेडगेवार से प्रेरणा प्राप्त कर तरुण अवस्था में ही राष्ट्र सेविका समिति से नाता जोडा था और संगठन की संस्थापिका मौसीजी के साथ स्त्रियों के बीच स्वत्व का बोध कराने के कार्य में अपनी अंतिम साँस तक लगी रहीं। ताईजी का मानना था कि देश की स्त्रियाँ मुक्त वायुमंडल में हालाँकि श्वास लेने लगी हैं और उनमें शिक्षा का प्रसार भी हो रहा है लेकिन जब तक उन्हें स्वत्व का, अपने गुरूतर दायित्व का बोध न होगा तब तक नारी मुक्ति - नारी स्वतंत्रता की बात करना बेइमानी है। चरित्र निर्माण की प्रथा तथा प्रधान शिल्पी माता को माननेवाली ताईजी प्राय: कहती थीं कि अगर देश को शिवाजी चाहिए तो पहले माता जिजाबाई की आवश्यकता है। इस वाक्य का अर्थ कितना गहरा है, इसे सहजही समझा जा सकता है। नागपुर में १९८६ में राष्ट्र सेविका समिति के एक सम्मेलन में अपने सम्बोधन के क्रम में ताईजी ने मातृशक्ति को जगाने की आवश्यकता पर बल देते हुए कहा था कि भारत को अपने अतीत के गौरव के समुन्नत शिखर पर पुन: आरुढ कराने के लिए हमें उच्च चरित्र संपन्न नागरिकों की आवश्यकता है और इस आवश्यकता की पूर्ति हमारी मातृशक्ति द्वारा हमारे प्राचीन शास्त्रानुसार अपना आहार - विहार, परिधान, शिक्षा आदि अपनाने से ही होगी। शिशु गीली मिट्टी के गोले जैसे होते हैं और उनके जीवन पर माता का काफी असर पडता है। तात्पर्य यह कि माँ अपने बच्चों की उन्नति के लिए पहली तथा सबसे मजबूत सीढी होती है। राष्ट्र सेविका समिति में ताईजी ने इसी पहलू पर सबसे अधिक जोर दिया। उनका स्पष्ट कहना था कि नारी मुक्ति की बात पश्चिमी देशों में स्वीकार्य हो सकती है, परंतु भारत में इसका कोई आधार नहीं है, क्योंकि पश्चिमी देशों में ईसाई मत अधिक प्रभावी है और इसमें स्त्री को पुरुषों की तुलना में नीचे का दर्जा

दिया गया था, जबकि भारत की हिंदू सभ्यता शुरू से नारी को मातृशक्ति के रूप में मानती है और उसे पुरुषों के समान का दर्जा दिया गया है। अत: नारी को न तो किसी के हाथ का खिलौना बनना चाहिए और ना ही किसी को अपने हाथ का खिलौना बनने का प्रयास करना चाहिए! अपने इन विचारों को लेकर ताईजी ने न केवल देश की लाखों स्त्रियों को उनके असली दायित्व का बोध कराया, वरन् समिति के संस्कारों के माध्यम से उनमें उत्कट राष्ट्रप्रेम की भावना जागृत की। (यह ठीक है कि समिति की अगली संचालिका भी सक्षम सिद्ध होंगी.) ताईजी ताईजी थीं और उनका नहीं होना एक खालीपन का अहसास कराता रहेगा।

स्वदेश

●●●

सजग माता बनो

श्रीमती सुनीला सोवनी द्वारा दि. २३.२.९४ को वं. ताईजी की ली गयी मुलाकात...

दि. २३ फरवरी बुधवार। समय सायं ५ बजे। वं. ताईजी के घर नित्यक्रमानुसार लोगों का आना - जाना चल रहा था। वं. ताईजी सबसे बोल रही थीं, सभी को कुछ न कुछ खाने को देने का क्रम भी चल रहा था। हमारी बातचीत भी चल रही थी। एक स्मरणिका प्रकाशित कर रहे थे उसके लिए वं. ताईजी का साक्षात्कार ले रही थी। विषय था 'तरुणियों को मार्गदर्शन' वं. ताईजी का अत्यंत रूचि का विषय। उस समय तो कल्पना ही नहीं थी कि यह उनकी अंतिम भेंट होगी।

स्वच्छंदता क्यों आयी?

'बोलो। क्या पूछना चाहती हो? मैं तो तुम्हारे समान पढीलिखी नहीं हूँ। तुम्हारे समान पढीलिखी नौकरी करनेवाली तरुणियों को मैं क्या मार्गदर्शन कर सकती हूँ?' वं. ताईजी के हमेशा के समान ही अत्यंत विनम्र उद्गार। पर उनकी वैचारिक प्रगल्भता इन शब्दों में साफ दीखती ही है। वं. ताईजी बोलने लगीं 'वर्तमान युवा पीढी दिशाहीन है, बिगडी हुई है, ऐसा हम सब कहते हैं। दीखता भी वैसा ही है। आज की पीढी को जो पढ़ने को मिलता है, सुनने को मिलता है, देखने को मिलता है उसकी कल्पना करना कठिन है। पर इसके लिये उत्तरदायी युवा पीढी नहीं, मेरे मत से तो १९४७ के बाद की माता है। इसी कारण सन् ४७ के बाद समाज की उन्नति के स्थान पर सामाजिक वातावरण में सभी स्तरों पर पतन ही दिखाई देता है।

अपनी बात की पुष्टि देने के लिये वे कहने लगीं - स्वातंत्र्यपूर्व काल में प्रत्येक माँ अपनी संतान देशभक्त, सुयोग्य नागरिक बने, ऐसा केवल सोचती थी ऐसा नहीं तो इसके लिये प्रयत्नशील रहती थी। वह पढ़ी लिखी न भी हो तो भी उसके सामने ध्येय था। स्वातंत्र्य प्राप्ति के बाद यह माँ सो गयी। भौतिक सुख उस पर हावी हो गया। संतान पढ़ी - लिखी हो इसके लिये प्रयत्नशील हुई, परंतु संतान सुशिक्षित हो, सुसंस्कारित हो ऐसा प्रयत्न उसने नहीं किया। परिणाम स्वरूप आज की पीढ़ी बहक गयी है। स्वतंत्रता का अर्थ स्वच्छंदता- स्वैराचार हो गया है। युवा वर्ग आत्मकेन्द्रित हो रहा है।

स्त्री पुरुष समानता के इस युग में आप आज की स्थिति के लिये केवल माँ को ही जिम्मेदार मान रही हैं, यह ठीक है क्या? मेरे इस प्रश्न के उत्तर में उन्होंने शान्तभाव से कहा, ''सरसरी तौर पर तुम्हारा कहना सही लगेगा। वैसा देखा जाए तो आज भी कौनसी स्त्री स्वतंत्र है? पुरूष वर्ग की बराबरी करना आधुनिकता है ऐसा सोचना सही है क्या? अपने सामाजिक नियमोंने प्रत्येक के कुछ कर्तव्य निश्चित कर दिये हैं। माँ जन्मदात्री है अत: उसके साथ स्नेह के अटूट बंधन रहेंगे ही। इसी स्नेह, प्रेम, ममता के बलपर भावी पीढी निर्माण करने का कार्य माँ के सिवाय कौन करेगा? पडोस के भी बच्चों के भोजन की चिन्ता करनेवाली स्त्री आज अपनी भी संतान का विचार नहीं करती। संतान के लिये उसके पास एक घंटा भी समय नहीं है। माँ की ममता से वंचित ये बच्चे भविष्य में अपने अलावा दूसरे किसी का विचार कैसे कर सकेंगे? सामाजिक ऋण का विचार ऐसा बालक कर सकेगा क्या?''

आगे उन्होंने कहा - ''अत: तरुणियों नवविवाहित युवतियों को मेरा एकही कहना है सजग माता बनो, समर्थ माता बनो, विशाल मातृत्व अपनाओ। स्त्री अपनी अंत:शक्ति से ही पिता, पति, बंधु, पुत्र सभी को प्रभावित कर सकती है।

''माता का कर्तव्य है, बच्चों पर संस्कार करना। तरुणियों का कर्तव्य है अपनी संस्कृति का वैज्ञानिक दृष्टि से अध्ययन कर, कालानुरूप उसको आचरण में लाना। छुआछूत, अस्पृश्यता इन बातों का लवलेश भी हमारे

आचरण में न हो। तरुणियों को गुणग्राहक बनना चाहिए। प्रत्येक से हम कुछ न कुछ सीख सकते हैं। मधुमक्खी के समान गुणों का संग्रह करना चाहिए। प्रकृति सबसे बडी गुरू है। हमारे तीज - त्यौहार प्रकृति के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने के तरीके हैं। ये कर्मकाण्ड व्यर्थ नहीं है, उनका भावार्थ समझना चाहिए।''

तरुण पीढी की जीवनपद्धति के विषय में बोलते हुए उन्होंने कहा, ''हमारी दिनचर्या ऐसी होनी चाहिए जिसमें देशप्रेम को सर्वश्रेष्ठ स्थान मिले। शिक्षा प्राप्त करते समय केवल आर्थिक लाभ का ही विचार नहीं करना चाहिए। समाज कैसा भी आचरण करे मैं सही आचरण करूँगी ऐसा विचार प्रत्येक ने किया तो समाज सुधारने में कितना समय लगेगा? पैसाही सबकुछ है ऐसा मान लेने पर नैतिकता समाप्त हो जाती है। हमारी जीवन रचना 'सहना ववतु सहनौ भुनक्तु' मंत्र को चरितार्थ करनेवाली होनी चाहिए।

आज की परिस्थिति से आप निराश हैं क्या? इसके उत्तर में उन्होंने कहा, ''आज की परिस्थिति का विचार करती हूँ तो कई बार नींद उड जाती है। पर मैं भविष्य के संबंध में निराश नहीं हूँ। श्रीराम जन्मभूमि मुक्ति के लिये आज भी बलिदानी जत्था निर्माण हो सकता है, यह कितना संबल है। समाज जीवन में परिवर्तन लाने के लिये अथक प्रयत्न करने पडते हैं। व्यक्ति - व्यक्ति का चरित्र निर्माण करना पडता है।''

मेरे हाथ में श्री रामदास दैनंदिनी थी। उसपर समर्थ के चित्र को देखते हुए अस्फुट शब्दों में उन्होंने कहा 'हमें कोमल वाणी दो, सज्जनों की संगति दो, बहुजन मैत्री दो। प्रभुसे हम सब यही याचना करें।''
उपरोक्त वचनों का आदर्श उस समय मेरे सामने था। आज वह काल के गर्भ में समा गया है।''

सौ. सुनीला सोवनी, पुणे

●●●

कसौटी के क्षण

१९४८ की घटना। गांधीहत्या के पश्चात जनमानस क्षुब्ध हो उठा। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और स्वयंसेवक जनता के कोपभाजन बने। अनेकों घरों पर हमले हुए।

एक जमाव पुणे शहर संघचालक विनायकरावजी के ७५१ सदाशिव पेठ के पास आया। विनायकरावजी मिरज-सांगली के प्रवास में थे। घर में ताईजी अकेली ही थीं और छोटे छोटे बच्चे। बाहर की सरगर्मियाँ तेज होने लगीं वैसे ही ताईजी ने सामान समेटना प्रारंभ किया। घर के दरवाजे बंद किये। स्टोव्ह पर मक्खन उबल रहा था। घी बन रहा था। वह बंद किया। जितना सामान समेटना संभव था उतना समेट लिया। शांतता से घर को ताला लगाया। छोटे बच्चों को लेकर पास के घर गयीं। लोग वहाँ भी पहुँचे। ताईजी बच्चोंसहित अपनी सहेली कमलताई मांडके के यहाँ गयीं। ये सब बातें उन्होंने अत्यंत धीरज से, शांति से कीं। न कहीं हड्बडाहट थी न ही रोना-धोना। दादा प्रवास में थे। उनका अतापता नहीं था। कुछ समय बाद उन्हें बंदी बनाया गया। पर वह डगमगायी नहीं। दादा की भेंट होने के पश्चात् उन्होंने बताया- घर की कोई चिंता नहीं करना। दूसरे दिन से ही बंदी बने स्वयंसेवकों के यहाँ जाकर उन्हें ढ़ाढ़स बँधाने का कार्य प्रारंभ किया। ध्येय पर ताईजी की अटूट श्रद्धा थी। कष्ट-तनाव किसी की भी परवाह नहीं थी। ताईजी अटल थीं।

कसौटी के क्षण

१९६९ साल होगा। अभी के 'कौशिक' में पहले के एक किराएदार पर केस चल रहा था। वह महिला काला जादू जानती है- करती है ऐसी अफवाह थी। उनके पडोसियों को ऐसे कुछ अनुभव भी थे। ताईजी पर इसका कोई प्रभाव नहीं हुआ। हम कर रहे हैं, वह अच्छा भला काम है, अत: ये दुष्ट शक्तियाँ हमारा कुछ बिगाड़ नहीं सकती; यह उनका विश्वास था। ललिता- पंचमी के दिन घर में पूजा थी। घर में दिनभर आनेजाने वालों का ताँता, भोजन आदि से ताईजी थक गयी थीं और अचानक वह महिला रात के १० बजे घर आयी। ताईजी से बोलना प्रारंभ किया और पूजाघर पहुँची, देवी प्रतिमा को हाथ लगाकर इस देवी के साक्षी से.... ऐसा बड़ी आवाज में बोलना प्रारंभ कर रही थी कि ताईजी ने कहा- देवी प्रतिमा को हाथ नहीं लगाना- उठिये, जल्दी कीजिये और बाहर जाइये। इस घर में ऐसे शब्द नहीं चलेंगे। ताईजी की कड़ी तीखी आवाज से वह महिला घबड़ा गयी। गर्दन झुकाकर चली गयी। ताईजी ने उसे घर से निकाल दिया। ऐसा यह एक ही व्यक्ति होगा और घर ने पहली और अंतिम बार उनकी कड़ी आवाज सुनी होगी।

ताईजी - राष्ट्रवादी संस्थाओंका मातृछत्र

राष्ट्रसेविका समितिकी प्रमुख संचालिका श्रीमती सरस्वतीबाई उपाख्या ताईजी आपटे का निधन होने से केवल समिति ही नही अपितु देशभर में काम करनेवाली सभी राष्ट्रवादी संस्थाओंका मातृछत्र गया है। वृद्धावस्था में मृत्यु आना स्वाभाविक है। फिरभी ताईजी जैसे असाधारण जेष्ठ कार्यकर्ता का निधन होता है, तब देशभर के असंख्य कार्यकर्ता यह तीव्र आघात सह नहीं पाते।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की प्रेरणा से विविध क्षेत्र में कार्य करनेवाली संस्थाओं को 'संघ-परिवार' के नाम प्रेरित किया जाता है। परिवार में सर्वप्रथम राष्ट्र सेविका समिति का निर्माण हुआ। स्त्री और पुरूष मानवी जीवन रथ के दो पहिये हैं, वे समान गति से और समान्तर चलेंगे तभी रथ सुचारू रूप से मार्गक्रमण करेगा। इस तथ्य को ध्यान में रख कर ही सन १९३६ में संघ संस्थापक स्व. डॉ. हेडगेवारजी ने राष्ट्र सेविका समिति की स्थापना को प्रोत्साहन दिया। १९३६ से लेकर १९७८ तक समिति की धुरा स्व. मौसीजी केलकर ने समर्थता से सँभाली और उसे अखिल भारतीय स्वरूप प्राप्त कर दिया। संस्कारों के बल पर समिति का विकास हो रहा था। तब मौसीजी के पश्चात ताईजी ने इस संगठन को सेवा कार्य का नया आयाम दिया। और महिलाओं के कार्यक्षेत्र में एक अग्रगण्य स्वयंसेवी संगठन के रूप में समिति उभर आयी।

महिलाओं में जागृति लाने का कार्य ताईजी समिति का निर्माण होने से पहले ही कर रही थी। उनके पति स्व. विनायकरावजी आपटे पुणे महानगर के संघचालक थे। अत: संघ को स्त्रीशक्ति का साक्षात्कार किस रूपमें अभिप्रेत है यह वे अच्छी तरह से जानती थीं। अत: राष्ट्र सेविका समिति के निर्माण के पश्चात् अंतिम साँस लेने तक वे स्त्री को सक्षम बनाने का भरकस प्रयत्न करती रहीं। संघ जैसे समिति को भी अनेक संकटों का सामना करना पडा। परंतु प्रारंभ में मौसीजी के पश्चात् ताईजी ने आदर्श गृहिणी जैसे समिति का संसार केवल सुचारू रूप से चलाया इतनाही नहीं तो उसे वृद्धिंगत किया। दोनोंकी यह कार्यकुशलता हम कभी भूल नहीं सकते।

आपात् कालमें हुकुमशाही विरोध में आंदोलन करनेवाले कार्यकर्ताओं को समिति की बहनों ने संरक्षण दिया। उनकी कैफियत आचार्य विनोबाजी भावे से मिल कर उनके सम्मुख रखने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया। और जब सत्याग्रह के नारे लगे तो मौसीजी और ताईजी के नेतृत्व में स्थान-स्थान पर सेविकाएँ सत्याग्रह में कूद पडीं। परिणामस्वरूप उनको हजारों की संख्यामें कारावास की सजा भुगतनी पडी फिर भी वे डटी रही।

हालही में अयोध्या में राममंदिर निर्माण हेतु कारसेवा तथा कश्मीरी अतिरेकियों के अत्याचार से विस्थापित हो कर जम्मू में आश्रय हेतु आए हुए हिंदु परिवार की हर प्रकार सहायता करते समय ताईजी का नेतृत्व अधिक निखर आया। कारसेवा करते समय बजरंग दल के कार्यकर्ताओं के कंधे से कंधा मिलाकर आगे बढती हुई दुर्गावाहिनी की कार्यकर्ता बहनों को प्रोत्साहन देनेवाली ताईजी ही थी। जम्मू के विस्थापितों के शिबिरों में जा कर उनको आवश्यक वस्तुएँ पहुँचाना ताकि उनकी अस्मिता को ठेंस न पहुँचे, साथ साथ उनका मनोबल कायम रखने का प्रयास करना ऐसे कामों में ताईजी स्वयं सहभागी हो कर अन्योंको प्रेरणा देती थीं। इस तरह का सेविकाओं का विश्वास और धैर्य बढा कर अग्रसर होने वाला नेतृत्व क्वचित दिखाई देता है।

स्त्रीमुक्ति और स्त्री-पुरुष समानता इन विषयोंके बारे में ताईजी ने कभी प्रसार का ढंग अपनाया नही। स्त्री के बलकेंद्रों से भलीभाँति परिचित थी उनको पूर्णतया पता था। व्यक्तिगत तथा सामाजिक जीवन में स्त्री-पुरूष समरसता हो ऐसा उनका यथार्थ मत था। इसी कारण सत्यनारायण पूजा, उपनयन जैसे धार्मिक कार्यों में पौरोहित्य करने का स्त्रियों का अधिकार उन्हें मान्य था, स्त्रियों को उन्होंने प्रोत्साहन दिया। केवल पूर्वांचल में नही अपितु देश के विभिन्न भागों में बसे बनवासी बालिकाओं की शिक्षा के जो प्रयास वे कर रही थीं वह सर्व क्षेत्रों में कार्य करने वाली संस्थाओं एवं कार्यकर्ताओं के लिए एक उत्कृष्ट उदाहरण है। नागपुर में स्थित देवी अहल्या मंदिर को ऐसे सभी केंद्रों का कार्यस्थान ही बनाया था । इस तरह समिति की कार्यकक्षा बढती ही जा रही थी कि अकस्मात् वे हमारे बीचमें से चल बसीं। उनके चले जाने से राष्ट्रसेविका समिति तथा अन्य महिला संगठनों की ही केवल हानि हुई है ऐसा नहीं तो समस्त राष्ट्र जीवन पर ही गहरी आपत्ति छा गयी है। उनकी स्मृति को श्री नरकेसरी प्रकाशन संस्था तथा तरुण भारत की ओरसे विनम्र अभिवादन।

तरुण भारत, नागपूर

●●●

Sevika from U.K. pays her Homage

We were all very sad to hear the news about Vandaneeya Tai Apte. It was a sad day for many sevikas outside Bharat as it was for those sevikas close to Vandaneeya Taiji. A number of us from UK who had met her were fortunate enough to experience her greatness. Underneath the simple exterior she was a very special person. We know how she worked with Van. Mausiji to take forward Samiti in its early years.

On my visit to her house in 'Pune' she received me as her daughter. I shall never forget my brief meeting with this noble lady. When she sent Rakhis to me which she had made herself, during Rakshabandhan, I was astonished to know that a leader of over a million sevikas sat there and prepared these rakhis herself. I felt her love entwined in those threads which she had carefully tied. She was one of a kind and we will all miss her very much. I have prepared an article on the life of Van. Taiji. This has been distributed to all Sangh Parivar Karyakartas. We have also organised Shok Sabhas in all the Mandals.

Please send me more details on Van. Ushatai. Please convey our condolences to the family of Van. Taiji and all the Karyakartis of Samiti.

Yours Sisterly,
Raksha Kukadi.
U.K.

Vandaneeya Tai Apte.

Tai Apte, Pramukh Sanchalika of Rashtra Sevika Samiti died on 9/3/94. She was 84. She inherited a good heritage. Her father was Lokmanya Tilak's sister's son. She had four outstanding qualities — Extreme Love for Hindu Society, Natural tendency to help others, Art of organising people, Quailty of working continuously.

There were discussions, important decisions were taken. It was a vibrant centre of activities. Tai was always there to receive people. She would not like anybody to go without taking something eatable. It was afterall a middle class family but with a loving heart.

RSS had to face 3 bans uptil now. At the time of first ban Taiji used to meet people in jail, meet their families in the houses. She could establish line of communication between people inside the jail and outside. Insipte of the virulent propaganda against Sangh, morale of the people had to be kept up. Under the able guidence of Taiji, Samithi could do a lot of work. There was a complete News Black Out. Hence there was a lot of underground work and correct news had to reach at all places where Samitis were working previously!

She had to hear harsh words from the angry parents. She had the capacity to bear all this and ultimately win the people. Whenever there were floods and famine she would go to their rescue. She had adopted one village and tried to bring the social transformation.

Though Taiji was sufficiently old, her sudden death was unexpected.

On 23 rd February 1994 Wednesday, at 5 p. m. Taiji was interviewed by one Sunila in which Taiji expressed her feelings. She said -

"Formerly we could tell the dates of War. First world War 1914-1918. Now things have changed. We are in a continuous state of war. War is on different levels- economic, political, cultural etc. Western culture of unrestrained line is out to demolish our values of life. Thinkers in America want to bring family structure there. Onslaught of western culture must be stopped otherwise all families will be shattered. Whole Hindu Society has to strive for this. Especially ladies and sevikas in particular has an important role to play in this respect." That only will be true Shraddhanjali to that great woman- Taiji Apte.

SHIVRAMAJI
MADRAS

My Revered 'PANJI'

To be blessed with a great-grandmother is something rare. But to be blessed with an 'active' great-grandmother, is a miracle came true. Though today I am despondent and sad because she is no more with me. I consider myself to be very lucky having lived with her for at least the first fifteen years of my life.

My great-grandmother or 'Panaji' (as we used to call her) was really a great woman. She herself never let us realise her greatness by speaking about the respect which other people had for her. Greatness speaks for itself, it is said. How true it is, in the context of Panaji. We realised how much attachment people had for her only after her death.

Though she was a national leader and pre-occupied with many of her own things, she still found time for us. I stil can't understand how she could manage to do as many things as she did.

It was a pleasure to fall sick when she was around, literally beause the way she looked after you and the care and love she showered on you made you feel at least mentally fit.

Whatever one asked for, one could get from her, be it sympathy, be it an advice or be it any kind of material or moral support. Why, I believe one did not even need to ask her for anything. I still remember the day when I had innocently praised a small bag of hers, never imagining that the next day itself I would be presented with the same bag. And not only had she given me the bag, but she had also washed it before presenting it to me. There are numerous such instances. She never kept anything to herself. She distributed whatever she had– be it diaries or shawls or whatever.

She was calm, cool and gentle throughout her life. The gentleness, on her face remained unaltered, even after she died. As long as I have known her, she never refused anybody or anything. She never lost control of herself. She never sat still and was always pre-accupied in some task or the other. If I were to write anecdotes about her, there wouldn't be enough space to pen them down. There have been so many things that she has done for us. Any way, I am happy for her that she lived a unique life and had equally unique peaceful death. She set an ideal example in her life for us to follow, and I hope that the example she set will provide an inspiration for us to live ideally.

Bhargavi Risbud
New Delhi

Our Vandaneeya Taiji!

Pujaniya Pramila Taiji,
Saprema Namaskar

Just now I heard about the sad demise of Vandaneeya Taiji and at this stage I can only say that I remember that loving and kind motherly face that greeted me at the doorstep of her house in Poona, when I visited her in 1988. We had a very pleasant and memorable 'get together' at her place with various Samiti Adhikaris and respected Shri. Sudhirbhai Phadke and his secretary. When Sudhirji requested me to assist in the U.K. Veer Savarkar Project? I replied, 'I have little time but I shall do my best. Vandaniya Taiji literally commanded me in her very firm but loving tone in Hindi that I must put my heart and soul in this project and that a lot is expected from me. To this I humbly replied जैसा आपका आदेश. We had delicious refreshment and then she showed me round the house and requested me to bless her grandchild.

When everyone was gone at her feet, I found peace and Gratitude which gave me great inspiration for the heavy responsibility which lay on my shoulders for Virat Hindu Sammelan.

She said to me we both are Saraswatis and I am giving you this hand-knitted purse, but it should not be empty and so I shall put some rupees in it.

The purse is made by me. Despite her age, when it was time for me to leave she descended the stairs and walked with me for some distance.

There is a lot that I can write but these are few words which came to mind.

There are some photographs of Van. Taiji, Myself, Sudhirji If you think there is time I could send them.

Saraswati Dave
England

– BABA

K. V. DEVELOPMENT AND INVESTMENT CO. PVT. LTD.

[illegible]
Off [illegible] 411 0[illegible]

Phone : 33 12 60

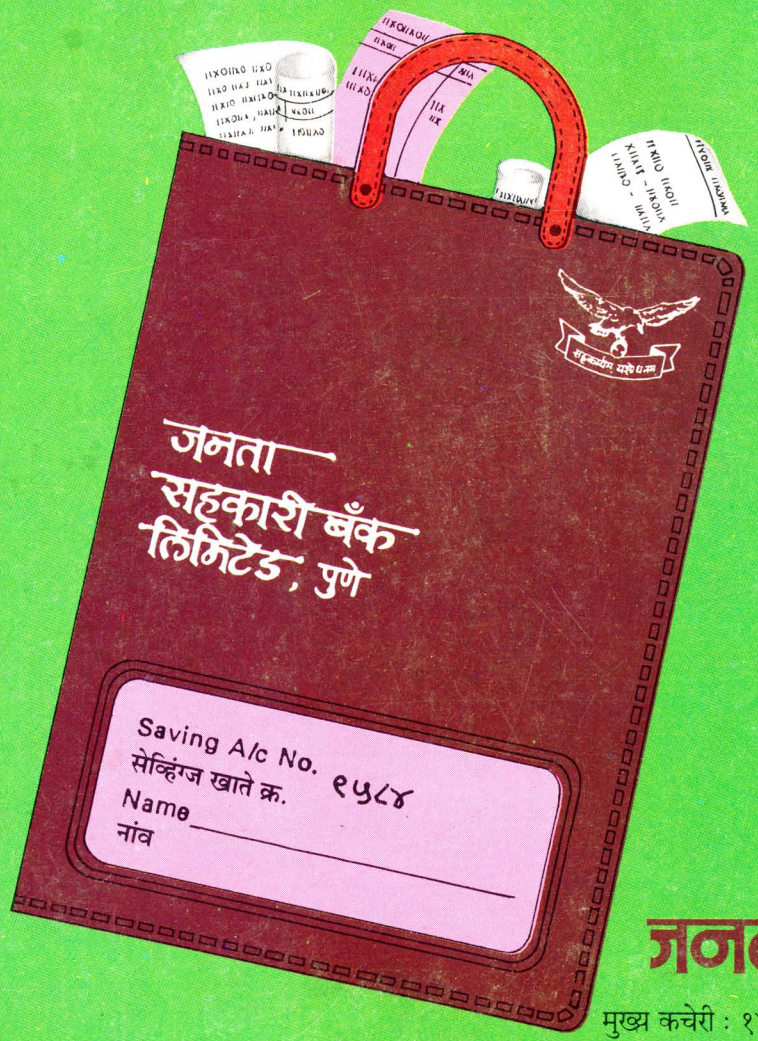

गृहिणीला वरदान

जनता बँकेची 'मासिक व्याज' योजना

दूध, भाजी, गॅस, वीज बिल, वाणी, शाळेची फी,
या आणि अशा अनेक नित्याच्या गरजा....
ज्या तुम्हाला केवळ व्याजातून भागवता येतात.
अगदी... मूळ मुद्दल सुरक्षित ठेवून.
आमची ही योजना म्हणजे गृहिणीला वरदानच !

जनता सहकारी बँक लि., पुणे.

(शेड्युल्ड बँक)

मुख्य कचेरी : १४४४ शुक्रवार पेठ, थोरले बाजीराव रस्ता, पुणे ४११ ००२.

फोन : ४५३२५८, ५९.

मूल्य रक्कम रु. १०/-